❀ श्री आदिनाथाय नमः ❀

स्वयंभू कल्पद्रुम विधान

आशीर्वाद :

परम पूज्य आचार्य 108 विद्या भूषण सन्मति सागर जी महाराज

रचियता :

आर्यिका 105 स्वस्ति भूषण माता जी

उपलक्ष्य :

हरिद्वार के इतिहास में, प्रथम चातुर्मास

आर्यिका श्री स्वस्ति भूषण माता जी ससंघ

चातुर्मास स्थापना : 1-7-2004

प्रकाशकः

सृष्टि-स्वस्ति केन्द्रीय मण्डल

कार्यालय : (राजकुमार जैन) जैन मन्दिर, प्रताप नगर, सहारनपुर

फोन : 0132-2658403, 2658546

प्रकाशन सहयोगी

वर्षायोग समिती हरिद्वार 2004

एवं

जे.सी. जैन, यू.सी.जैन

दि ऋषभ वैल्वेलीन लिमिटेड, हरिद्वार।

प्रथम संस्करण : 21 अक्टूबर 2004

प्रतियां : 1100 आश्विन सुदि अष्टमी वीर नि० स० 2530

प्राप्ति स्थान :

1. **सृष्टि-स्वस्ति केन्द्रीय मण्डल**
   गली जैन मन्दिरजी, प्रताप नगर, सहारनपुर (उ.प्र.)
   फोन : 0132-2658403
2. **जैन साहित्य सदन,** दिगम्बर जैन लाल मन्दिर
   चांदनी चौक दिल्ली
3. **श्री दिगम्बर जैन मन्दिर** ललतारौ, हरिद्वार (उत्तरांचल)
   फोन : 01334-226985, 227142
4. श्रीमती सुनीता जैन एवं नीता जैन, भगवान महावीर **दिगम्बर जिन मन्दिर,** मित्र वाटिका, रानीपुर मोड़, हरिद्वार-फोन नं० 01334-226630, 226149, 226718
   Fax : 01334-250484 - EMail-Velveleen@vsnl.com.
5. **कालेज ऑफ इन्जीनियरिंग रुड़की,**
   सातवां कि०मी० रुड़की हरिद्वार रोड, रुड़की (हरिद्वार)
   Ph. : 01332-278011 To 16.
   Fax : 01334-270307 - Email-Coer College@vsnl.net

लेजर टाइप सैटिंग- **राजीव जैन (ल्यूपिन कम्प्यूटर) फोन**-2613808

आकृति कम्प्यूटर हरिद्वार , **मो**०-9837107578

मुद्रक-**हिन्दुस्तान ऑफसैट प्रिंटिंग प्रेस**, हरिद्वार **फोन** : 01334-254264

मूल्य : स्वाध्याय

प०पू० आर्यिका रत्न 105 स्वस्ति भूषण माता जी

जन्म-	1-11-1969 छिन्दवाड़ा नगर (मध्य प्रदेश)
ब्रह्मचर्य व्रत-	परमपूज्य आचार्य पुष्पदन्त सागर जी महाराज द्वारा 1985 वीर. नि० सं० 20011
आर्यिका दीक्षा-	परम् पूज्य आचार्य श्री सन्मति सागर जी महाराज द्वारा–24 जनवरी 1996

प० पू० 105 आर्यिका रत्न ''स्वस्ति भूषण'' माता जी

की

साहित्य सूची

१. दीक्षा कठिन परीक्षा, २. जैन त्यौहार कैसे मनायें ?३. मेरी कलम से, ४. भजन संग्रह, ५. भजन सरिता, ६. जिनपद पूजांजलि, ७. अमृत की बूंदें, ८. प्रतिक्रमण (किये अपराध जो हमने), ९. स्वस्ति आत्मबोध, १०. राम से वैराग्य की ओर, ११. सम्मेद शिखर टोंक पूजन, १२. श्री सम्मेद शिखर चालीसा, १३. श्री सम्मेद शिखर विधान, १४. बड़ा ही महत्व है, १५. आरती ही सारथी, १६. आदिनाथ पूजन एवं चालीसा (रानीला), १७. पार्श्वनाथ पूजन एवं चालीसा (जलालाबाद), १८. महावीराष्टक विधान, १९. मुक्ति सोपान धार्मिक सांप सीढ़ी, २०. श्री कर्म दहन विधान, २१. श्री नवग्रह शान्ति विधान, २२. श्री चौंसठ ऋद्धि विधान, २३. श्री चन्द्र प्रभ जिन पूजन संग्रह (सोनागिरि जी), २४. श्री नेमिनाथ जिनपूजन संग्रह (श्री सिद्ध क्षेत्र गिरनार जी), २५. श्री महावीर जिन पूजन संग्रह (श्री सिद्ध क्षेत्र पावापुर जी), २६. जिन ज्ञान किरण,२७. श्री समवशरण विधान।

श्री आदिनाथाय नमः

प्राक्कथन

द्वार पर श्रीकृष्ण खड़े हैं पर आज घर में विदुर नहीं है। विदुर की पत्नी ने द्वार खोला तो श्रीकृष्ण को समक्ष देख अति प्रसन्नता हुई। सोचने लगी आज विदुर जी घर पर नहीं हैं अच्छा हुआ यदि होते तो मुझे सेवा का अवसर न मिलता। अब आज मैं ही स्वागत करूंगी। लेकिन द्वार पर खड़ी श्रीकृष्ण को देखने में इतनी मगन हो गई कि बस रूप ही निहारती रही, अंदर आने को भी नहीं कहा। जब याद आया तो अंदर बुलाया, फिर खड़े होकर देखने लगी। जब याद आया की बैठने को नही कहा तो मूढ़ा लाई और उल्टा रख दिया। श्रीकृष्ण उनके भक्ति से ओत प्रोत भावों को समझ रहे थे। इसलिए वे वहीं पर बैठ गये। वही प्रक्रिया फिर से शुरू हो गई, श्रीकृष्ण बैठे-बैठे मुस्कुराते रहे। तब उसे फिर याद आया कि मैंने तो पानी तक को नहीं पूछा आज तो मुझे मौका मिला परंतु प्रसन्नता में सब कुछ भूल गई। तब वह रसोई की ओर भागी परंतु ऐसा कोई सामान न मिला जिसे अपने प्रभु को खिला सकती, सामने केले नजर आये तो वही उठाकर भागी। जैसे ही श्रीकृष्ण नजर आये फिर निहारने लगी केले छीलती जा रही है गूदा फेंकती जा रही है और छिलके खाने को देती जा रही है। भक्त की भक्ति से भरे छिलकों में बड़ा स्वाद आ रहा था इसलिए भगवान ने उन छिलकों को भी खा लिया।

जब भक्ति की लहर आत्मा से उमड़ती है तो सब कुछ भुला देती है। कुछ भी होता रहे बाह्य प्रक्रिया उसे नजर ही नहीं आती है। भक्ति में जब भक्त लीन हो जाता है तो तन, मन, धन सब कुछ समर्पित कर देता है। प्रतिमा में जब तक साक्षात् परम पिता परमेश्वर ना दिखे तब तक मानों कि अभी दर्शन नहीं हुए।

चेहरे पर अगर मुस्कान है, तो इंसान तुमसे दूर नहीं।
पंखों में अगर उड़ान है तो आसमान तुमसे दूर नहीं॥
शिखर पर बैठ पक्षी ने यही गीत गाया।
श्रद्धा में अगर जान है तो भगवान तुमसे दूर नहीं॥

श्रद्धा से पाषाण में भी परमात्मा नजर आता है। आस्था से ही भक्ति के बीज का अंकुरण होता है। श्रद्धा पर भक्ति का महल टिका है इसके अभाव में बिखर कर चूर-चूर हो जायेगा। श्रद्धावान ही कह सकता है कि भक्त का तन ही भगवान का मंदिर है। जिसमें परमात्मा का निवास होता है।

जब भगवान सामने हो तब भक्ति से भरा हृदय हिलोरे मारने लगता है। मेरठ से हरिद्वार, बिहार के बीच समवसरण विधान की रचना हुई। लिखते हुए अत्यंत आनंद आता था। समवसरण की आठों पृथ्वी का वर्णन, मानस्तंभ की सुंदर रचना, बावड़ी भवन चैत्यवृक्ष, खाई झालर ध्वजा घंटा धूपघट पश्चात बारह सभा वहां बैठे भव्य जीव

और स्वर्णमय सिंहासन पर कमल के चार अंगुल ऊपर विराजमान तीर्थंकर वीतरागी प्रखर तेज रूप जिसका संपूर्ण वर्णन करना कठिन है। विधान की रचना करते हुए समवसरण साक्षात् सम्मुख नजर आता है।

इसी श्रृंखला में हरिद्वार चातुर्मास में कल्पद्रुम विधान करवाने की चर्चा हुई। जे. सी. जैन एवं पंडित नरेश चंद कांसल जी का विशेष आग्रह था कि माताजी समवसरण विधान को आगे बढ़ा दीजिए और कल्पद्रुम विधान की रचना कर दीजिए। हमने पहले तो सोचा फिर स्वीकृति दे दी। बी.एच.ई.एल. पहुंच कर कार्य शुरू किया। सामायिक आहार और अल्प निद्रा के समय के अतिरिक्त संपूर्ण समय विधान रचना में ही जाता। श्रावक भी बैठे-बैठे सुनते और देखते कि विधान की रचना कैसे की जाती है। थोड़ी सी शिकायत भी थी कि आपका संपूर्ण ध्यान मात्र विधान रचना की ओर है और हम श्रावक आपके ज्ञान से वंचित हैं। तब हमने समझाया आप वंचित नहीं वरन् और अधिक प्राप्त होगा। और अल्प समय में ही विशाल कार्य संपन्न हो गया। बड़ा हर्ष था शारीरिक अनुकूलता न होते हुए भी यह कार्य मात्र भक्ति की शक्ति से ही संपन्न हुआ है। रचना काल में घंटा दिन और तारीख कुछ भी याद न थी। सामान्य कार्य तो क्या विशेष भी भगवान की भक्ति से सहजता में संपन्न हो जाते हैं।

इस विधान के लेखन में ''बृजेन्द्र हर्ष'' जी का विशेष प्रयास रहा तथा धीरज जैन, रोहित जैन, श्रीमती सुनीता जैन, श्रीमती अतिशया जी ने भी लेखन कार्य से प्रिटिंग तक धी संपूर्ण कार्य देखा। पंडित नरेश चंद्र कांसल जी ने संपादन का कार्य संभाला। इन सभी को धर्म वृद्धि शुभाशीष। जे.सी. जैन एवं यू.सी. जैन के सद्प्रयासों से यह रचना आपके हाथों तक पहुंच रही है।

वर्षायोग समिति के समस्त पदाधिकारियों ने भी विशेष लगन और भक्ति से कार्य किया। वे सब भी स्नेह के पात्र हैं। तथा रचना के पश्चात् प्रथम विधान भी हरिद्वार नगर के प्रतिष्ठित उद्योगपति जे.सी.जैन, यू.सी. जैन के निवास स्थान 'अहिंसा मंदिर' मित्र वाटिका में सम्पन्न हुआ यह भी एक विशेष विशेषता है।

सभी जन इस भक्ति महाकाव्य को करके अपने अंदर परमात्मा की प्यास को पैदा करें, श्रद्धा भक्ति एवं लगन को बढ़ायें।

इस विधान का एक-एक अक्षर भक्ति के मोती हैं जिन्हें गूंथ-गूंथकर एक ऐसा हार बनाया गया है जिसे जनसामान्य अपने अंतस में धारण कर भक्ति पथ का अनुगामी बन सकता है।

आर्यिका ''स्वस्ति भूषण''
१० अक्टूबर, २००४
हरिद्वार

श्री महावीराय नम:

नवीन कल्पद्रुम विधान की रचियता, आर्यिका रत्न १०५ ''स्वस्ति'' भूषण माता जी एक अद्वितीय व्यक्तित्व

जैन संतों की साधना एवं आराधना की श्रेष्ठता को तो भारत का समस्त जनमानस नतमस्तक है ही साथ ही उनकी जीवनचर्या को देखकर आश्चर्य चकित भी है। कोई अजैन समाज का व्यक्ति इतनी कठोर जीवनचर्या की कल्पना भी नहीं करता।

दरअसल जैन संतों की साधना का क्रम उनकी इसी जीवनचर्या से प्रारम्भ होता है। जैन मुनि हो या आर्यिका दोनों की चर्या समान ही होती है। यदि महिला होने के नाते आर्यिकाओं के तीन गुणों की छूट को ना देखा जाये तो मुनि एवं आर्यिका का सन्तव्य समान होता है। जैनाचार्य, मुनि एवं आर्यिका जीवनभर अपनी इसी चर्या का सुधि पूर्वक निवर्हन करते हुए पूरे देश में अहिंसा की भावना का प्रचार-प्रसार करने एवं उस भावना को लोगों के हृदय में प्रतिष्थापित करने में लगे रहते हैं। परिषह सहकर भी ये संत कठोर तप के माध्यम से मुक्ति की ओर सतत् अग्रसर रहते हैं। इन्हीं के दम से जैन समाज का परचम पूरे विश्व में गौरव और सम्मान के साथ में लहरा रहा है।

ऐसे अनेक संत भारत भर में भ्रमण कर मानवता की सेवा में लगे हैं। ऐसी ही संत श्रृंखला की एक मजबूत कड़ी के रूप में आर्यिका रत्न 105 ''स्वस्ति भूषण'' माता जी जैन धर्म की ध्वजा को उन्नत रखने की अभिलाषा एवं मुक्ति पथ में तप एवं साधना के माध्यम से प्राप्त ओजश्विता से जन-जन के मन के अंधकार का नाशकर उन्हें आलोकित कर रही हैं। परम पूज्य ''स्वस्ति भूषण'' माता जी का सरल एवं सौम्य व्यक्तित्व आम आदमी को सहज ही प्रभावित कर लेता है। तप से प्राप्त उनका गम्भीर्य, अध्ययन से प्राप्त ज्ञान तथा संतत्व से प्राप्त वाणी की प्रखरता उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व के बीच के फासले को कम करके उनमें एकरूपता का समावेश कर देती है। एक ओर तो उनकी यही विशेषता उन्हें इतना लोकप्रिय बना रही है कि वे जिस स्थान को छोड़कर आगे बढ़ती है वहां के लोग उनके प्रस्थान को विछोह मानने के लिए मजबूर हो जाते हैं। और काम, मोक्ष, मद, लोभ, मोह से विमुक्त साधना की उस प्रतिमूर्ति के प्रति अज्ञानतावश मोह का बंधन बाधने का असफल प्रयास करते हैं। दूसरी ओर उनकी अंदर की विरक्ति और तपस्वी चरित्र से उपार्जित उनकी वैराग्यपूर्ण मुद्रा और उसका आभामण्डल भव्य जीवों को सहज ही मोक्ष मार्ग अनुगमन के लिए प्रेरित करते हैं। आचार्य सन्मति सागर जी महाराज की

सुशिष्या ''स्वस्ति भूषण'' माता के जीवन में बाल्यकाल से ही प्रवाहित वैराग्य सरिता आज भी उन्नत गति से प्रवाहमान है। बचपन की गुड़िया एवं शैशव की संगीता को आज आर्यिका ''स्वस्ति भूषण'' माता के रूप में पाकर भारत का जैन समाज तो गदगद है ही साथ ही उनकी वाणी का श्रवण करने वाला अजैन समाज भी उनकी साधुता एवं ज्ञान का कायल है। उनके सान्निध्य को जो भी प्राप्त करने का सौभाग्य पाता है स्वयं को धन्य मानकर सदैव आहल्लादित रहता है। मां स्वरूपा तपस्विनी ''स्वस्ति भूषण'' माता जी की सतत् आत्मसाधना के साथ ज्ञान साधना भी समान्तर चल रही है। उनके स्नेही हृदय वात्सल्य भाव एवं ज्ञान की उन्नतशीलता ने उन्हें एक कवियत्री बना दिया है जिसमें भगवद् भक्ति की सलिला अनुवरत प्रवाहित रहती है।

स्वरचित भक्ति के भजनों की छन्दबद्धता और उनकी सुमधुर वाणी से उनका प्रस्फुटन उनकी जिव्हया पर साक्षात् सरस्वती के वास की कल्पना को साकार कर उठता है। उनकी रचनाओं में सहजता, सरलता, बोधगम्यता उनकी भावनाओं के उत्कर्ष का परिचय तो कराती ही है साथ ही उनकी आगम ज्ञान की गंभीरता की झलक भी उनमें स्पष्ट रूप से मिलती है। साधना के सागर में गहरे उतरे बिना ऐसी अप्रतिम काव्य रचना की कल्पना भी असंभव है।

माता जी के द्वारा रचित तमाम भक्ति साहित्य उनकी साहित्यप्रियता का प्रमाण है। जीवन के मध्य से पूर्व तक ही साहित्य सृजन की श्रृंखला खड़ी कर उन्होंने अपनी ज्ञानाराधना का परिचय दिया है। उनके सान्निध्य में अपने यहां कल्पद्रुम महामण्डल विधान पूजा कराने का मेरा निवेदन एक ऐसे नवीन काव्यखण्ड की रचना का कारण बनेगा ऐसी कल्पना भी मैंने नहीं की थी। निश्चित ही माताजी द्वारा रचित यह विधान जैन समाज के इतिहास में एक ऐतिहासिक उपलब्धि के रूप में जाना जायेगा। माताजी ने इस नवीन कल्पद्रुम विधान की रचना कर उसी के द्वारा मेरे घर पर पूजा कराकर केवल मुझे या मेरे परिवार को अपनी कृपा का पात्र ही नहीं बनाया बल्कि मुझे और मेरे परिवार को भगवान की आराधना की पात्रता का प्रमाण भी प्रदान किया है। मैं उनकी इस कृपा के लिए स्वयं को उनका ऋणी या आभारी नहीं बल्कि ऐसा उपकृत पात्र मानता हू जो सदैव के लिए उनकी कृपा पात्रता प्राप्त कर चुका हो। मैं परिवार सहित उनके चरणों में नत होकर उनकी सरलता, सौम्यता, बोधगम्यता, रूचिता, वक्तत्रता, रचनीयता, साधुता एवं तपस्विता को शत्-शत् नमन करते हुए स्वयं को धन्य करता हू।

जे.सी. जैन
''अहिंसा सदन'' मित्र वाटिका
रानीपुर मोड़, हरिद्वार।

हरिद्वार में प्रथम बार ऐतिहासिक चातुर्मास

(जैन समाज के लिए प.पू. 105 आर्यिका स्वस्ति भूषण माता जी का चातुर्मास उपलब्धिदायक रहा)

जिसने राग, द्वेष, कामादिक, जीते सब जग जान लिया,
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया।
बुद्ध, वीर, जिन हरि हर ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो,
भक्ति भाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी में लीन रहो।।

यूं तो मां गंगा के सतत् प्रवाह के कारण हरिद्वार की भूमि अखण्ड पावनता को प्राप्त है तथा आदिनाथ भगवान एवं ऋषि मुनियों की तपस्थली होने के कारण यह देव भूमि के रूप में पूज्या भी है लेकिन जब कोई संत यहां आकर आध्यात्म की सलिला प्रवाहित करता है तो यह पावन भूमि और भी पावन हो उठती है। जब भी कोई पुण्य आत्मा संत हरिद्वार प्रवास पर होता है तो वह अपनी बाणी से पूरे समाज को आध्यात्म का प्रसाद तो वितरित करता ही है साथ ही वह सुसंस्कारों की हृदयस्थापना कर मानव मात्र के कलयाण का पथ भी प्रशस्त करता है साथ ही वह इस क्षेत्र को कोई ऐसी उपलब्धि दे जाता है जो पूरे मानव समाज के उपयोग हेतु चिरस्थायी रूप धारण कर लेती है। ऐसे कई उदाहरण हमारे सामने हैं। यदि हम निकट भूत की बात ही करें तो प.पू. 108 गुप्ति सागर महाराज के हरिद्वार प्रवास के समय उनके आशीर्वाद एवं प्रेरणा से कालेज आफ इंजीनियरिंग रुड़की की स्थापना का साक्षात उदाहरण हमारे सामने है जिसका लाभ न सिर्फ इस क्षेत्र बल्कि भारत भर के इंजीनियरिंग के इच्छुक छात्रों को मिल रहा है। दूसरा उदाहरण हमारे सामने पं. पू. आचार्य 108 विद्या भूषण सन्मति सागर जी महाराज की सुशिष्या ''स्वस्ति भूषण माता जी के हरिद्वार प्रवास का है। उनके हरिद्वार चतुर्मास के दौरान क्षेत्र के जैन समाज ही नहीं बल्कि अजैन समाज ने भी उनके प्रवचन प्रवाह में स्नान कर स्वयं को धन्य किया है। स्वस्ति भूषण माता जी ने हरिद्वार में चतुर्मास के

दौरान अध्यात्म का ऐसा वातावरण कायम किया कि पूरा क्षेत्र ''स्वस्तिमय'' होकर प्रभु आराधना की ओर उन्मुख हो चला। पूरी तरह धार्मिक रंग में रंगे हरिद्वार नगर का पूरा जैन समाज ही नहीं बल्कि क्षेत्रीय जनपदों का जैन समाज भी पूरी तरह आपस में जुड़ गया और लोग एक दूसरे के नामों से भली भांति परिचित हो गए। धर्म की इस अविरल धारा में सराबोर पूरा जैन समाज स्व कलयाण के साथ-साथ परकल्याण की गतिविधियों में भी अनुरक्त हो गया। छोटे-छोटे बच्चों एवं युवाओं में सुसंस्कार का बीजारोपण कर ''स्वस्ति भूषण'' माता जी ने इस क्षेत्र के जैन समाज को ऐसी अमूल्य निधि दे डाली जो अब पूरा जीवन चिरस्थाई बनी रहेगी। माता जी ने प्रथम वर्षा योग हरिद्वार को देकर यहां की जनता पर बहुत बड़ी कृपा की है। इसके अलावा उन्होंने ''स्वयम्भू कल्पद्रुम विधान'' की रचना कर जैन समाज को ऐसी सौगात उपलब्ध करा दी है जिसके अनुमन से प्रत्येक का कल्याण मार्ग प्रशस्त होगा। उन्होंने इस नवीन विधान की रचना के संकल्प को ही परवान नहीं चढ़ाया बल्कि इस विधान की प्रथम आराधना (पूजा) का उपक्रम भी हरिद्वार में ही सम्पन्न कराया। जैन समाज की इस शीर्ष पूजा (विधान) में जनपद के पूरे जैन समाज ने पूरे मनोयोग से भाग लिया। ''स्वस्ति भूषण'' माता जी के हरिद्वार प्रवास से समाज को जो उपलब्धि हुई है वह अपार है, असीमित है उनकी इस तपशील कृपा को यहां का समाज कभी विस्मृत नहीं कर पाएगा।

मैं हरिद्वार की जनता के जैन समाज से निवेदन करना चाहता हूं। माता जी के हरिद्वार प्रवास के रूप में अनायास ही हुई इस प्रभु कृपा को अकारथ न जाने दें। माता जी द्वारा किये गए इस कठोर उपक्रम को तभी सार्थकता मिलेगी जब सकल जैन समाज उनके उद्‌गारों, का अक्षरश: अनुसरण कर स्व: कल्याण के मार्ग की ओर अग्रसर हो जाएगा।

यू.सी.जैन.
अहिंसा सदन
मित्र वाटिका-हरिद्वार

अनुक्रमणिका

क्रसं	विषय	पृष्ठ संख्या
१.	समवशरण का स्वरूप	७
२.	श्री समवशरण विधान प्रस्तावना	११
३.	प्रस्तुति	१४
४.	समवशरण विधान	१५
५.	मानस्तम्भ संबंधी सोपान वर्णन	२०
६.	पूर्व दिशा मानसतम्भ संबंधी पूजा	३१
७.	उत्तर दिशा मानसतम्भ संबंधी पूजा	३४
८.	दक्षिण दिशा मानसतम्भ संबंधी पूजा	३६
९.	पश्चिम दिशा मानसतम्भ संबंधी पूजा	३९
१०.	प्रथम प्रासाद भूमि पूजा	४३
११.	चैत्य भूमि पूजा	४६
१२.	खातिका भूमि सम्बन्धी पूजन	५०
१३.	तृतीय पुष्प वाटिका भूमि पूजन	५३
१४.	चतुर्थ भूमि वर्णन प्रारम्भ	५७
१५.	अशोक वृक्ष पूजा	६०
१६.	सप्तपर्ण वन वृक्ष पूजा (नैऋत्य दिशा)	६२
१७.	चंपक वन पूजा	६४
१८.	आम्रवनस्थ जिन पूजा प्रारंभ ईशान दिशा	६६
१९.	पंचम भूमि (ध्वज भूमि)	७०
२०.	समवसरण षष्ठम भूमि अर्घ्य	७५
२१.	मेरूभूप कल्पवृक्ष जिनपूजा	७९
२२.	मंदार भूप कल्पवृक्ष जिनपूजा	८१
२३.	संतान भूप कल्पवृक्ष जिनदेव पूजन	८३
२४.	पारिजात भूप कल्पवृक्ष जिनपूजन	८६

क्रसं	विषय	पृष्ठ संख्या
२५.	सप्तम भूमि वर्णन प्रारंभ	८९
२६.	अथ केवल ज्ञान पूजा	९२
२७.	नवस्तूप पूजा (पूरब दिशा)	९६
२८.	नवस्तूप पूजा (दक्षिण दिशा)	९७
२९.	नवस्तूप पूजा (पश्चिम दिशा)	९९
३०.	नवस्तूप पूजा (उत्तर दिशा)	१००
३१.	श्री मंडप भूमि पूजा	१०४
३२.	श्री मंडप वर्णन प्रारंभ	११४
३३.	समवशरण में क्रियमाण पूजा	१२०
३४.	समुच्चय पूजा प्रारंभ	१२४
३५.	हवन विधि	१२८
३६.	गंध कुटी पूजा	१३६
३७.	तीर्थंकर गुण पूजा	१४३
३८.	दिव्यध्वनि पूजा	१६४
३९.	गणधर पूजा	१७७
४०.	चौंसठ ऋद्धि पूजा	१८५
४१.	सर्व साधु पूजा	२०२
४२.	पंचकल्याणक पूजा	२४२
४३.	अनुबद्ध केवली पूजा	२७३
४४.	तीर्थ प्रवर्तन काल पूजा	२९०
४५.	जिनसहस्त्र नाम पूजा	२९९
४६.	सम्पूर्ण जयमाला	४२१
४६.	कल्पद्रुम विधान प्रशस्ति	४२५
४७.	आरती	४२६
४८.	महत्व	४२७-४२८

समवशरण का स्वरूप

-आर्यिका ''स्वस्ति भूषण''

समवशरण प्रभु का महल है। समवशरण में चक्रवर्ती की संपत्ति से अधिक वैभव होता है। वास्तुशास्त्र के हिसाब से समवशरण बिल्कुल सही होता है। कुबेर स्वयं ही समोशरण की रचना करता है। उत्तम से उत्तम वस्तुओं से इसका निर्माण होता है। इसे उपदेश सभा भी कहते हैं। भगवान आदिनाथ का समोशरण 12 योजन का था, क्रम से घटते हुए भगवान महावीर का समोशरण एक योजन का रह गया था। यहाँ एक योजन में चार कोश अर्थात् 8 मील होता है। पृथ्वी पर एक हाथ की ऊँचाई पर इन्द्रनील मणि की शिला होती है। उस पर समोशरण विराजमान होता है। समवशरण से बाहर मान को गलाने वाला मानस्तम्भ होता है। उसके चारों ओर छोटी बड़ी बावड़ियां बनी होती हैं। 20,000 स्फटिक मणि की सीढ़ियाँ ऊपर पहुँचने तक होती हैं। कोटों से परिवृत आठ भूमियाँ हैं। मंगलकारी अति सुंदर इन भूमियों में देवता और मनुष्य भ्रमण एवं क्रीड़ाएं करते हैं।

सबसे बाहर की ओर एक धूलिसाल कोट होता है। सुन्दर पाँच रंग के रत्नों का यह कोट दूर से ही प्रकाशित होता हुआ भव्यों को आमन्त्रण देता है। यह कोट तीर्थंकर से चौगुना ऊँचा होता है। समोशरण में मुख्य चार गोपुर द्वार होते हैं जिसके नाम विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित हैं। प्रत्येक द्वार के बाहर और मध्य द्वार के पार्श्व भागों में मंगल, द्रव्य, नवनिधि और धूप घट रखे होते हें। धूप घट पुतलियों के मस्तक पर स्थित होते हैं। झारी, कलश, दर्पण, चामर, ध्वजा, पंखा, छत्र और सुप्रतिष्ठ ये आठ मंगल द्रव्य हैं। ये प्रत्येक 108 द्रव्य होते हैं।

नव निधियाँ वहाँ सभी जीवों को तृप्त करती हैं। काल, महाकाल, पांडु, माणवक, शंख, पद्म, नैसर्प, पिंगल और रत्न। ये निधियाँ वस्त्रमाला, आभूषण, वादित्र आदि वस्तुओं को देती हैं।

चैत्य प्रसाद भूमि-अष्ट भूमि में प्रथम चैत्य प्रसाद भूमि है। इनमें भगवान के मंदिर हैं। एक जिन मंदिर के बाद 5-5 देव प्रसाद हैं। इस प्रथम पृथ्वी के पृथक-पृथक गलियों के दोनों तरफ पार्श्व भागों में दो-दो नाट्यशालाएं हैं। प्रत्येक नाट्यशाला में 32-32 देवियाँ तीर्थंकरों का गुणगान करते हुए नृत्य करती हैं।

खातिका भूमि-चैत्य प्रसाद भूमि के आगे खातिका भूमि है। यह तीर्थंकरों की ऊँचाई से चतुर्थ भाग प्रमाण गहरी है। वेदी आदि से सहित इस भूमि में खाई है जिसके अन्दर चित्र बने हैं। पुल हैं और नाव में देवता क्रीड़ाएं करते हैं। दृश्य सुन्दर एवं मनोहारी होते हैं। खाई अन्दर रत्न जड़े हैं जिससे उसकी सुन्दरता चौगुनी हो जाती है।

लता भूमि-यथा नाम तथा गुण भूमियों के होते हैं। लता भूमि सुन्दर लताओं से मंडित है। विशेष प्रकार के वृक्ष और सुन्दर फूलों से इसकी शोभा और भी बढ़ जाती है। लताओं के बीच शिलाओं पर बैठकर मुनिराज ध्यान करते हैं। वेदी आदि पूर्ववत् होती हैं। झुकी हुई लताएं जिनवर के चरणों में प्रणाम करती प्रतीत होती हैं।

उपवन भूमि-चतुर्थ उपवन भूमि में पूर्व दिशादि में अशोक वन, सप्तच्छद वन, चंपक वन और आम्रवन स्थित होते हैं। इन चारों दिशाओं के बीच में चार चैत्य वृक्ष हैं। इसमें प्रतिमायें विराजित हैं। इन प्रतिमाओं के पूजन के लिए इन्द्र चक्रवर्ती राजा महाराजा आते हैं तथा मुनिगण आकर वंदना करते हैं। उपवन भूमि में सुन्दर बावड़ियां हैं जिनके जल में मुख देखने पर सात भव नजर आते हैं। नाट्यशालाओं में पूर्ववत् नृत्यांगनाएं नृत्य करती हैं। इस वनभूमि के चारों तरफ से घेरे हुए तीसरी वेदी है। इसके द्वारा पर यक्षेन्द्र देव पहरा देते हैं।

ध्वज भूमि-ध्वज भूमि में ध्वजों की सुन्दर पंक्तियाँ भव्यों को दूर से ही आकर्षित करती हैं। प्रत्येक दिशा में 108-108 बड़ी ध्वजाएं होती हैं। प्रत्येक बड़ी ध्वजा के साथ 108 छोटी ध्वजाएं होती हैं। इन पर

सिंह, गज, वृषभ, गरुड़, मयूर, चंद्र, सूर्य, हल, कमले और चक्र इन दस चिन्ह बने होते हैं। लहराती ध्वजाएं ऐसी लगती हैं, मानो भव्यों को प्रभु दर्शन के लिए आमंत्रित कर रही हैं।
इस भूमि को घेरे हुए तीसरा परकोटा चाँदी के समान चमकता हुआ अति सुन्दर है। धूलिसाल के समान यह गोपुर द्वार नवनिधि आदि से सुसज्जित है। इसके द्वार पर भवनवासी रक्षक देव खड़े हैं।

कल्प भूमि-कल्पभूमि में दस प्रकार के कल्पवृक्ष हैं। ये कल्पवृक्ष लोगों को मनवांछित वस्तुओं को प्रदान करते हैं। इनके दस भेद हें। पानांग, तूर्यांग, भूषणांग, वस्त्रांग, भोजनांग, आलयांग, दीपांग, भाजनांग, मालांग और तेजांग। नाम के इन दस भेदों में चार सिद्धार्थ वृक्ष होते हैं। चारों वृक्षों पर चार सिद्ध प्रतिमाएं होती हैं। उन वृक्षों के नाम पूर्वादि दिशाओं में नमेरू, मंदार, संतानक और पारिजात हैं। मुनिराज इन प्रतिमाओं की वंदना हेतु भी आते हैं। इस भूमि की गलियों के पार्श्व भागों में भी 4-4 नाट्यशालाएं हैं जिनकी 32 रंग भूमियों में ज्योतिषी देवियाँ नृत्य किया करती हैं। इसके आगे चौथी वेदी है जो प्रथम वेदी के सदृश ही गोपुरद्वार नवनिधि आदि से सहित है। यहाँ भवनवासी रक्षक देव द्वार पर खड़े होते हैं।

भवन भूमि-सुन्दर भवनों सहित भवन भूमि में अनेक देवता निवास करते हैं। भवनों के अंदर जिन प्रतिमाएं होती हैं। देवता प्रतिमाओं का अभिषेक पूजन आदि करते हैं, सुंदर लय ताल और संगीत के साथ पूर्ण भक्ति में तन्मय होकर प्रभु का गुणगान करते हैं।

भवन भूमि के पार्श्व भागों में प्रत्येक वीथी गली के मध्य में नौ-नौ स्तूप खड़े हैं, जिनमें अर्हत व सिद्धों की प्रतिमाएं विराजमान हैं। इन स्तूपों के बीच में बहुत से तोरण बने हैं। छत्र और ध्वजाओं से इसकी शोभा और भी बढ़ जाती है।

इसके आगे चौथा कोट आकाश स्फटिक के समान है। गोपुर

द्वार मरकत मणि के बने हैं। द्वार रक्षक कल्पवासी देव हैं, बाकी पूर्ववत् हैं।

श्री मण्डप भूमि-इस भूमि में तीन गति के जीव आकर बैठते हैं और प्रभु की दिव्य ध्वनि का रसपान करते हैं। इसके बीच-बीच में सोलह दीवाल है जो स्फटिक मणि से बनी हुई हैं। चार गली को छोड़कर चार-चार दीवालों के मध्य तीन-तीन कोठे हैं। इनकी ऊंचाई अपने काल के तीर्थंकर से बारह गुनी ऊँची होती है। देव मनुष्य और तिर्यंच के बैठने का स्थान अलग-अलग होता है। इस सभा तक मात्र भव्य जीव ही पहुँच सकते हैं। बाकी नाट्यशाला में नृत्यादि देखने में ही उलझ जाते हैं।

पूर्व दिशा से लेकर प्रथम कोठे में गणधर, मुनिवर बैठते हैं। दूसरे कोठे में कल्प वासिनी देवियाँ, तीसरे में आर्यिकायें और श्राविकायें, चौथे में ज्योतिषी देवियाँ, पांचवे में व्यंतर देवियाँ, छठे में भवनवासी देवों की देवियाँ, सातवें में भवनवासी देव, आठवें में व्यंतर देव, नवें में ज्योतिषी देव, दसवें में कल्पवासी देव, ग्यारहवें में चक्रवर्ती राजा महाराजा आदि मनुष्य और बारहवें में हाथी, सिंह, व्याघ्र आदि पशुगण बैठते हैं। भगवान के चरणों में बैठकर न रोग होता है, न भूख लगती है, न नींद आती है, न मोह सताता है और न ही बैर भाव टिक पाता है।

इसके आगे स्फटिक से बनी हुई पांचवी वेदी है। इसके पहले कटनी वैडूर्य मणि की होती है। प्रथम कटनी के ऊपर चढ़ने के लिये चारों गलियों से और बारह कोठों से ऐसे सोलह स्थानों से सोलह-सोलह सीढ़ियां होती हैं। इस कटनी के चारों दिशा में यक्षेन्द्र अपने मस्तक पर धर्मचक्र रखकर खड़े हैं। गणधर देव आदि बारह कोठे के भव्य जीव इस प्रथम कटनी पर चढ़कर जिनेन्द्र देव की प्रदक्षिणा देकर वंदना पूजा भक्ति करके सीढ़ियों से उतरकर अपने-अपने कोठे में जाकर बैठते हैं।

प्रथम कटनी के ऊपर दूसरी कटनी है, वह सुवर्णमय है। इसके ऊपर चढ़ने के लिए चारों दिशाओं में आठ-आठ सीढ़ियां हैं। इस कटनी

पर सिंह बैल, कमल, चक्रमाला, गरुड़ वस्त्र और हाथी आदि के चिन्हों से चिन्हित ध्वजायें फहरा रही हैं। इस कटनी पर धूप घट नव निधियाँ-पूजन द्रव्य और मंगलद्रव्य रखे हुए हैं। इस पीठ के ऊपर तृतीय पीठ है। ये सूर्य के समान चमकदार एवं गोल है। यहां जाने के लिये चारों दिशाओं में आठ-आठ सीढ़ियाँ हैं। इस तृतीय कटनी के ऊपर गंधकुटी है जिसमें जिनेन्द्र देव विराजमान रहते हैं। यह गंधकुटी माला, मोती, छत्र, चंवर, दीप, धूप, घट आदि से सुशोभित होती है। गंधकुटी के मध्य सिंहासन पर एक सहस्त्र दल का कमल है जिस पर प्रभु चार अंगुल अधर विराजमान होते हैं। तिलोय पण्णति हरिवंश पुराण और आदि पुराण में कमल का कथन नहीं है, मात्र सिंहासन का उल्लेख है। किंतु श्री विष्णु सेन द्वारा रचित समवशरण स्तोत्र में सिंहासन के ऊपर कमल का वर्णन आया है।

इस तरह वीतरागी प्रभु पूर्व अथवा उत्तर दिशा की तरफ मुख करके विराजमान होते हैं किन्तु अतिशय है कि चारों दिशा के जीवों को दर्शन होते हैं। इसीलिए उन्हें चतुर्मुखी नाम से भी पुकारते हैं।

विधान का उद्देश्य

स्वयंभू कल्पद्रुम महामंडल विधान को किसी पक्ष के शुभ दिनों में करना उत्तम होता है। यज्ञ तीन तरह के होते हैं महायज्ञ, यज्ञ और लघुयज्ञ, कल्पद्रुम विधान महायज्ञ है। वर्ष में इसे एक बार अवश्य करना चाहिये। मांडला इसमें बना हुआ है। इसे बनवा कर विधिपूर्वक करवाना चाहिये। यह पूजा विशेष चक्रवर्ती के द्वारा होती है। इसके पश्चात यथाशक्ति दान आदि करना चाहिए। इस विधान को करने का विशेष फल स्वर्गादि, चक्रवर्ती पद प्राप्त करके क्रम से मुक्ति प्राप्त करना है।

श्री कल्पद्रुम विधान प्रस्तावना

प्रस्तावना

समवशरण में राजते, तीर्थंकर भगवान ।
पूजन भक्ति मैं करूं, बारंबार प्रणाम ।।

चतुर्मुखी होकर दिखें, दर्श करें हर जीव ।
परम पिता के दर्श से, हो सम्यक की नींव ।।

तीर्थंकर के दर्शन से, तन-मन सब हुलसाय ।
आत्म संपदा प्राप्त हो, चरणन शीश झुकाय ।।

समवशरण वैभव महा, सुंदर सुमुख सुजान ।
तीर्थंकर का महल है, बैठे हैं भगवान ।।

पुण्य उदय कब आयेगा, हे जिनवर जिनदेव ।
हमको होगा दर्श कब, करूँ आपकी सेव ।।

समवशरण पूजन करूं, समवशरण में आन ।
यही भावना है मेरी, बारंबार प्रणाम ।।

छंद-भुजंग प्रयात

करी है तपस्या करम दुष्ट भागें, फिर दिव्य ज्ञान का दीप प्रकाशै ।
चहुं दिश है फैला धरम का उजाला, भव्यों के कंठों में भक्ति कीमाला ।
त्रिभुवन पति की हम पूजा रचायें, भक्ति का अमृत आओ हम पिलायें ।
स्वर्गों के इन्द्रों ने पूजा रचाई, जय-जय उचारे औ जयमाल गाई ।

शेर चाल (हे दीनबन्धु.....)

प्रभु घातिया को घात पूर्ण ज्ञान ले लिया ।
सौधर्म इन्द्र के सिंहासन को हिला दिया ।।
हो मग्न इन्द्र ने विचारा अवधिज्ञान से ।
जब हुआ ज्ञात किया नमन भक्ति भाव से ।।1।।

स्वर्गों के सभी देवों को है पास बुलाया ।
आज्ञा करी प्रभु दर्श का है ज्ञान कराया ।।
हर्षित कुबेर से कहा समवशरण बनाओ ।
सुंदर सभी कोठे में वहां रत्न लगाओ ।।2।।

पाकर कुबेर आज्ञा को प्रभु पास में आया।
करके नमन मनहारी समवशरण बनाया।।
मानुष तिर्यंच देव सभी दर्श को आये ।
जिनवर सभा के मध्य में हमें दर्श दिखाये ।।3।।

योजन है बारा आदिनाथ का समवशरण ।
क्रम-क्रम से घट के होता है वो एक ही योजन ।।
आकार गोल सुंदर सुखकारी धाम है ।
जिन ठाठ हो उसके वहां जो लेते नाम है ।।4।।

(दोहा)

जिनवर की छवि मोहनी, मोहे उनका ज्ञान ।
आकर हम पूजा करें, हमको दो वरदान ।।
समवशरण पूजा करे, मिले मुक्ति का राज ।
इन्द्र समान वे नर भये, नमता सकल समाज ।।

प्रस्तुति

चौपाई

पंचम गति पंचम ज्ञान पाये,
शुभ समवशरण शोभा बढ़ाये ।
शत इन्द्र चरण वंदन करते,
मन वच तन से सेवा करते ।।

तिष्ठे सिंहासन पर जु आप,
उपदेश सुने मिट जाये ताप ।
चौसठ शुभ चमर ढुराय देव,
इंद्रादिक तिनकी करत सेव ।

तुम छत्र तीन फिरते हैं शीश,
तीनों लोकों के आप ईश ।।
भामंडल की आभा अपार,
हो सूर्य चंद्र की द्युति असार ।

सब शोक नष्ट करता अशोक,
तुम दर्श से भागे रोग शोक ।
चतुबार दिव्य ध्वनि सुनत भव्य,
जा नहि सकते हैं वहां अभव्य ।।

जाकर के सम्यग्दर्श पाय,
उपदेश सुने अज्ञान जाय।
भक्ति पूजा जो भी कराय,
तीर्थंकर के गुणगान गाय।।

चक्री बनता है वह विशेष,
क्रम से पाये मुक्ति अशेष।
यह कल्पद्रुम का शुभ विधान,
जो भी करता बनता महान।।

शुभ दिन में इसको करवाना,
भक्ति से मुक्ति को पाना।
'स्वस्ति' ने भक्ति पाठ रचा,
कर्मों को कर से आन कसा।।

श्री कल्पद्रुम विधान पूजा प्रारम्भ

श्री समवशरण पूजा

समुच्चय पूजा

स्थापना (त्रिभंगी छंद)

चौबिस जिनवर, छवि है मनहर, भक्तों के मन भाती है ।
जिनसमवशरण को, प्रभु चरण को, दृष्टि लख हर्षाती है ।।
नित करूं मैं पूजा, काम न दूजा, समवशरण में मैं आया ।
मम हृदय पधारो, काज संवारो, आव्हानन करने आया।।

दोहा

भक्त पुकारे तुम्हें प्रभु, देते हैं आवाज ।
आकर दर्शन दो हमें, करते हैं हम आश ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

जल

शंभू छंद

हूँ जनम-जनम का प्यासा मैं, जल से नित प्यास बुझाता हूँ ।
पर प्यास न मेरी शांत हुई, इसीलिये मैं जल ले आता हूँ ।।
चौबीसों जिन के समवशरण में, भक्ति भाव भरकर आया ।
मुझको भी दर्शन शीघ्र मिले, यह आश हृदय में ले आया ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्र: जलं निर्व. स्वाहा।

चन्दन

जग में कर्मों का ताप मिला, शीतलता की फिर चाह हुई ।
चंदन को शीतल है माना, आतम की न परवाह हुई ।।
चौबीसों जिन के समवशरण में.......

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्र: चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षत

सारा ही जग पद पाने को, पुरूषार्थ निरंतर करता है ।
पर अक्षय पद अविनाशी है, आनंदित आतम करता है ।।
चौबीसों जिन के समवशरण में.......

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्र: अक्षतं निर्व. स्वाहा।

पुष्प

शुभ भावों से हमें दूर करा, यह काम अशुभ करवाता है ।
पूजन को पुष्प मैं ले आया, जो अशुभ कर्म हरवाता है ।।
चौबीसों जिन के समोवशरण में, भक्ति भाव भरकर आया ।
मुझको भी दर्शन शीघ्र मिले, यह आश हृदय में ले आया ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

नैवेद्य

भोजन करके फिर भूख लगे, न तृप्ती इससे पाई है ।
नैवेद्य बनाकर ले आया, तेरी छवि मुझको भाई है ।।
चौबीसों जिन के समोवशरण में.......

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रः नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

दीप

उजियारा बाहर करता हूँ, अज्ञान अंधेरा है छाया ।
प्रभु ज्ञान दीप की ज्योति जगे, इसीलिये दीप मैं आया ।।
चौबीसों जिन के समोवशरण में.......

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रः दीपं निर्व. स्वाहा।

धूप

कर्मों ने सुखी दुखी कीना, कर्मों ने जग भरमाया है ।
कर्मों का धुआं उड़ाने को, वन्हि मैं धूप जलाया है ।।
चौबीसों जिन के समोवशरण में.......

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रः धूपं निर्व. स्वाहा।

फल

रसदार सरस फल खाने पर, ये मन आनंदित होता है ।
मुक्ति फल जैसा स्वाद नहीं, मुक्ति फल अनुभव होता है ।।

चौबीसों जिन के समोवशरण में, भक्ति भाव भरकर आया ।
मुझको भी दर्शन शीघ्र मिले, यह आश हृदय में ले आया ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रः फलं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्य

मद राग द्वेष को दूर किया, फिर मोह का जाला तोड़ा है ।
सब आधि-व्याधि से रहित आप, सारे जग से मुंह मोड़ा है ।।
कर्मों के पर्वत चूर किये, निज से ही नाता जोड़ा है ।
श्रद्धा से अर्घ्य बना लाये, हमने निज मोह मरोड़ा है ।।
चौबीसों जिन के समोवशरण में, भक्ति भाव भरकर आया ।
मुझको भी दर्शन शीघ्र मिले, यह आश हृदय में ले आया ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

दोहा

ज्ञानावरण नाश कर, केवल ज्ञान को पाये ।
अनंत चतुष्टय के धनी, शत्-शत् शीश झुकाये ।।
समवशरण वैभव महा, चौबीसों जिनराय ।
मूलगुण छ्यालीस हैं, नमूं तुम्हारे पाये ।।

पद्धरि छंद

सुंदर शरीर रचना महान, जन्मत ही दस अतिशय प्रमान ।
ज्यों जन्म लेय सौधर्म आये, ऐरावत हाथी पर बिठाये ।।1।।

पांडुक वन में अभिषेक किया, सबने सुख अमृत पान किया ।
तन वज्रमयी पाया शरीर, है रूधिर श्वेत बहता है क्षीर ।।2।।

सम चतुरस्त्र संस्थान पाये, तन पर न पसीना जरा आये ।
तन उड़ती है शुभ गंध ज्ञान, इक सहस आठ लक्षण बखान ।।3।।

हित मित प्रिय वच अमृत गिराये, शक्ती अनंत तन में जु आये ।
दश अतिशय जन्मत होत होय, भक्तों के जो सब करम खोय ।।4।।

ज्यों केवलज्ञान का दीप जले, त्यों दश अतिशय की हवा चले ।
सौ कोश न हो दुर्भिक्ष कहीं, फिर मंद-मंद भी पवन बही ।।5।।

जीवों का वध भी नहीं होय, आहार न ले जिनवर भी कोए ।
अब होगा न उपसर्ग कभी, चारों दिश में मुख दिखे सही ।।6।।

ईश्वर विद्या के हुये आप, तन छाया रहित हम करें जाप ।
विद्याओं ने ईश्वर माना, तन छाया ने छोड़ा बाना ।।7।।

पल-पल में पलक न उठे-गिरे, नख केश भी अब तो नाहीं बढ़े ।
दश अतिशय केवल ज्ञान पाएं, चौदह देवों कृत है बनाएं ।।8।।

भाषा है अर्द्धमागधी जान, मैत्री आई जीवों के प्राण ।
सारी ऋतुओं फल एक साथ, दर्पण बन पृथ्वी भयी पाथ ।।9।।

सब जीवों को आनंद होय, वायु में गंध सुगंध होय ।
पथ से कांटे अरू धूल हटी, गंधोदक बरसे मेघ छटी ।।10।।

चरणों तल पंकज को रचाये, द्वि सहस द्वि पंच कमलों को लाये ।
देवों ने जय-जयकार करी, वाणी में सबके क्षमा भरी ।।11।।

आगे-आगे यह धर्म चक्र, है चौदह अतिशय देवकृत्य ।
अठ प्रातिहार्य भी साथ रहे, प्रभु की शोभा को बढ़ा रहे ।।12।।

सब शोक नष्ट करता अशोक, नभ से वृष्टी पुष्पों की थोक ।
वाणी की अमृत धार बहे, जय चौसठ चमर ढुराय रहे ।।13।।

रत्नों से खचित सिंहासन है, जय भामंडल का भासन है ।
गंभीर नाद दुंदुभि होय, सर छत्र तीन शोभित ये होय ।।14।।

अठ प्रातिहार्य शोभा को पाये, जय अनंत चतुष्टय सुनो गाय ।
अंतर अनंत का ज्ञान हुआ, उस ज्ञान ने लोका लोक छुआ ।।15।।

दर्शन पाया तुमने अनंत, जीवों को दिखाया मुक्ति पंथ ।
पाया है सौख्य हो आतम का, जिन ध्यान लगा परमातम का ।।16।।

शक्ति अनंत के बने वीर, कर्मों पर अपना चला तीर ।
दश-दश चौदह वसु चार जान, छ्यालीस मूलगुण हैं प्रमाण ।।17।।

ऐसे प्रभु की हम भक्ति करें, तप त्याग क्षमा से धर्म धरे ।
किरपा कीजे मोहि दीन जान, 'स्वस्ति' ने पकड़े चरण आन ।।18।।

दोहा

मूलगुण छ्यालीस की, सुंदर माल बनाय ।
भविजन कंठमें धारिये, शत्-शत् शीश नवाय ।।

समोवशरण सु विधान को, भाव सहित करवाय ।
मुक्ति सुख समृद्धि हो, शत्-शत् शीश झुकाए ।।

परि पुष्पांजलि क्षिपेत्

मानस्तम्भ संबंधी सोपान वर्णन

दोहा

विजय द्वार पूरब दिशा, अतिशय सुन्दर जान ।
चौक आगे सोपान है, जपूं तुम्हारा नाम ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशायां विजय नामक द्वाराग्रे विद्यमान चतुष्कस्याग्रे सोपानसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।1।

वैजयन्त है हार सम, है जयन्त गुणगान ।
कर प्रवेश जिनवास में, करते चरण प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्ष चतुर्णां द्वाराणाम् अग्रे चतुष्कस्याग्रे चतु: सोपानसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।2।

ऋषभ देव जिनागार में, सीढ़ी बीस हजार ।
एक हस्त ऊँची कही, नमूं मैं बारंबार ।।
समोवशरण तेईस का, क्रम-क्रम घटता जाये ।
हीरा मणि मुक्ता लड़ी, शोभा कही न जाये ।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवस्य विंशतिसहस्त्रहस्तोच्च-एकहस्तायत- एकक्रोश लम्ब सोपानसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।3।

चार हस्त का इक धनु, हाथ हैं बीस हजार ।
ऊँचा पंच सहस्र है, समवशरण तैयार ।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशति तीर्थंकराणां यथाविधिहीनहीन सोपानसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।4।

दोनों ओर सीढ़ी बनी, वेदी सुन्दर जान ।
भक्ति भाव से समभाव से, चरणन करूं प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं चतुर्हस्तानाम् एकं धनुर्मत्वा मध्यभूमित: पंचसहस्त्रधनु: प्रमाणोच्च समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।5।

रतनमयी वेदी बनी, बैठक सुन्दर जान ।
समवशरण शोभा बढ़े, प्रभु का हो गुणगान ।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवस्य सार्धसप्तशतधनु:स्थूल सोपान वेदिकासंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।6।

(गीता छंद)

वेदी शोभा है बढ़ाती, देख प्रभु भक्ति बढ़े ।
है कमल पांखुरी खूब सुंदर, देव दर्श को हैं खड़े ।।
शुभ ज्योति जगमग हो रही, सुख पा रहे सब जीव हैं ।
सात शत पंचाशतों का, धनुष प्रमाण अतीव है ।।

ॐ ह्रीं वेदिकाया: नानाविधरचनासम्पन्नचतुष्के पीठसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।7।

यत्र छत्र जहां लगा है, छाया प्रभु पर शोभती ।
गोल कलशा गोल जिनगृह, स्वयं शोभा बोलती ।।
मन:थम्भ सहित है विष्ठर, यह प्रथम ही आवता ।
जिनराज की भक्ति करे वो, मोक्ष पद को पावता ।।

ॐ ह्रीं वेदिकोपरि मूलविषें सूची 750 धनुष, ऊपर चूलिकास्थल में लघुसूचीप्रमाण गोलाकार कूट पर स्थित देवीदेवकृत जिनगुणगानसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।8।

द्वितीय बैठक द्वार चतु है, स्वर्ण के रत्नों जड़े ।
पर प्रभु की शोभा लख के, ये सभी फीके पड़े ।।
भक्तों की ये जब भावना, स्वीकार प्रभु जी कीजिये ।
हम नैन नीचे करके बैठे, दृष्टि हम पर दीजिये ।।

ॐ ह्रीं ऊपरि कलशयुक्त छत्रिकायुक्त अध: स्तम्भसहित प्रथमविष्ठरसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।9।

द्वार वसु सुंदर बताये, खम्भा भी वसु जानिये ।
तीन गुमठी ग्यारा कलशा, प्रभु की आज्ञा मानिये ।।
इन्द्र की आज्ञा मिली तब, जिन महल तैयार है ।
स्वर्ग का वैभव है आया, प्रभु चरण से प्यार है ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दो दिशाओं में आमने-सामने तीन-तीन द्वार तथा दो दिशाओं में बीचों-बीच आमने-सामने द्वारयुक्त द्वितीयविष्ठरसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।10।

(चौपाई)

बैठक में बैठे हैं जिनवर, मूरत सूरत प्यारी मनहर ।
जिनकी शोभा वरणी न जाये, गणधर इन्द्र भी शीश झुकाएं ।।

ॐ ह्रीं आठ आठ स्तम्भयुक्त 3।3 गुमठियों के ऊपर 11।11 कलशयुक्त 8।8 द्वारयुक्तवेदिकासंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।11।

पंच सहस ऊँचा बरसावे, बैठक मणिमय लख हर्षावे ।
प्रथम भूमि में विजय-द्वार है, चार चौक शोभा अपार है ।।

ॐ ह्रीं वेदिकोपरि बहुविष्ठरसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।12।

चार चौक चांदी बरसावे, बैठक मणिमय लख हर्षाते ।
मध्य जनोंतर चौक विपुल है, चित्र बने सुकुमाल सुकुल है ।।

ॐ ह्रीं समभूमितः पंचसहस्रचापोन्नत विजयद्वारस्य अग्रे चतुष्क (चौक) संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।13।

पद्धरि छंद

भक्तिमय सारा देश हुआ, भक्तों ने आतम सौख्य लिया ।
सब देव देवियां नृत्य करे, प्रभु के सिर पर शुभ चमर ढुरे ।।

ॐ ह्रीं चतुष्कस्याग्रे पार्श्वद्वये विष्ठरेषु मध्ये नानाविधरचनायुक्त चतुष्कसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।14।

द्वारे पे बंधन वार बांधे, रत्नों की माल से द्वार सजे ।
चहुं ओर ध्वजा फहराय गई, भक्तों के मन को भाय गई ।।

ॐ ह्रीं बैठक विष्ठर सोपानवेदिकामत्तवारणावारक शोभासंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।15।

देवों ने तव यशगान किया, नर नारी ज्ञान बखान किया ।
झूमे नाचे वे नृत्य करें, हर अंग-अंग से भक्ति झरे ।।

ॐ ह्रीं रत्नमुक्तानिर्मित सकम्पबहुध्वजासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।16।

सीढ़ी पर चढ़ नहि थकते हैं, नहि देर जरा भी करते हैं ।

अतिशय यह देवों कृत होता, दर्शन कर कर्मों को खोता ।।

ॐ ह्रीं पूर्वोत शोभासम्पन्नविष्ठरेषु देवीदेवनरनारीकृत जिनराज गुणगानसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।17।

आदि का बारह योजन था, अंतिम योजन बस एक रहा ।
तेईस का क्रम-क्रम से घटता, निर्मल शिव वैभव खूब वहां ।।

ॐ ह्रीं जिनातिशयतः यत्सोपानानि खेदं बिना क्षणमात्र चटनसमर्थानि एवम्भूतनीलमणि-निर्मित द्वादशयोजनवर्तुलशिला संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।18।

है गोल-गोल शुभ समवशरण, फिर आया धूली साल कोट ।
आया जो प्रभु के चरणों है, भागे सब उसके रोग शोक ।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशतितीर्थंकराणाम् उत्तोत्तरहीनरचना परिणाम विशिष्टशिलासंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।19।

रतनन का चूरा इन्द्रों ने, वह इन्द्रधनुष की कांति धरे ।
काला पीला रंग पंचवर्ण, इससे बैठक में चौंक पुरे ।।

ॐ ह्रीं पंचविधचूर्णनिर्मित-गगनविसारिज्योतिर्युक्त धूलिसाल दुर्गसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।20।

प्रभु के वपु से चौगुना ऊंचा, है कोट वहां का होता है ।
दो भाग मोटी वह हो करके, कर्मों के पर्वत खोता है ।।

ॐ ह्रीं जिनशरीरतः चतुर्गुणोच्च-मूलभागद्वयस्थूल उपरिक्रमशः सूक्ष्मधूलिसालदुर्ग (कोट) संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।21।

है चार द्वार और चार कोट, वैजयन्त जयन्त है आदि करे ।
कंगूरा उन पर शोभित है, आते-जाते सब भव्य रहे ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्ष कंगूरागुरजबैठकसंयुक्त चतुर्द्वारसहित धूलि-सालदुर्ग (कोट) संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।22।

तीनों लोगों के चित्र बने, लख वहां भव्य शिक्षा लेते ।
नरकों का रस्ता तज करके, मुक्ती की राह पकड़ लेते ।।

ॐ ह्रीं नानाविधिचित्रावलिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।23 ।

है गली चार सीढ़ी संग में, मणियों की शिला वहां शोभे ।
देवों की यह सुंदर रचना, भव्यों का अति ही मन मोहे ।।

ॐ ह्रीं वृषभदेव क्रोशैकायतत्रयोविंशति तिक्रोशलम्बासु सोपानचतुर्गलिषु उभयत: स्फटिकमणिमयवेदिका संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।24 ।

दोहा

हर वेदी के बीच में, चौड़ा है स्थान ।
जिनवर की पूजा करें, बारंबार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशतितीर्थंकराणाम् यथागमक्रमहीन वेदिका संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।25 ।

अडिल्ल छंद

सुंदर भाव हुये प्रभु के दर्श से ।
मन भी पावन हुआ प्रभु स्पर्श से ।।
लम्बी वेदी गली एक सी जानना ।
तेईस की क्रम-क्रम से हानि मानना ।।

ॐ ह्रीं चतुर्वीथिकानांमध्ये अन्तरालभूमौ चतुर्णां दुर्गाणां पंचानां वेदिकानाम् अन्तरालेऽष्टानां भूमिशिलानां पर्यन्ते धूलिशालदुर्ग संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।26 ।

समवशरण की अष्ट भूमि को जानिये ।
सबसे अंत में धूलिसाल को मानिये ।।
चार गली के मध्य चतु अंतर हुआ ।

हुआ उसे शुभ ज्ञान जिन्हों अंतर छुआ ।।

ॐ ह्रीं जिनदेहाच्चतुर्गुणोच्च भित्तिकासमसमायत पंचवेदिकाभि: उपर्युपरि क्रमहीनायाम तथोच्चदुर्गैश्च संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।27।

कोट के नीचे बनी मनोहर वेदिका ।
कोट चौगुना रूप आपका शोभता ।।
मैं भी दर्श करूं यही है भावना ।
जागे आतम ज्ञान यही है कामना ।।

ॐ ह्रीं कंगूरा मन्दिर ध्वजा सुशोभिताभि: कंचनवर्णपंचवेदिकाभि संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।28।

स्वर्णमयी है वेदी औ मणियों भरी ।
कंगूरों से शोभा उसकी औ बढ़ी ।।
ध्वज फहराकर गीत धर्म के गावते ।
दर्शन करने प्रभु के नित हम आवते ।।

ॐ ह्रीं पंचवेदिका-चतुर्दुर्गाष्टान्तरालेषु नानाविधिचित्ररचना संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।29।

शंभु छंद

शुभ समवशरण में वसुभूमि, शोभा को और बढ़ाती है ।
भू चैत्य खातिका पुष्प वाटिका, पवनों से लहराती है ।।
उपवन ध्वजा औ कल्पवृक्ष से, मनवांछित फल पाते हैं ।
अष्टम भू में सभा प्रभु की, ज्ञानामृत बरसाते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्ष चतुर्दुर्ग-पंचवेदिका-षट्त्रिंशदद्वार संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।30।

(दोहा)

चार कोट के मध्य में, पंच वेदिका जान ।

अतिशय ज्ञान की धार है, बारंबार प्रणाम ।।
पंच वेदी चतु कोट है, नवद्वारों को जान ।
चतु दिश में छत्तीस है, करते तुम्हें प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्ष चतुर्दुर्ग-पंचवेदिका-षट्त्रिंशदद्वार संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।31।

प्रथम कोट वेदी प्रथम, प्रथम गली में द्वार ।
प्रथम की पूजा प्रथम में, प्रथम मुक्ति का द्वार ।।

ॐ ह्रीं प्रथमदुर्ग-प्रथमवेदिकाद्वाराणां मध्ये प्रथमवीथिकाभूमि भिन्नद्वाराणां मध्ये द्वितीयादिवीथिकाभूमि संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।32।

अष्ट भूमि आठों गली, पार्श्व वेदिका सार ।
हीरों के वे द्वार हैं, शोभा अपरंपार ।।

ॐ ह्रीं अष्टभूमिसम्बन्धिनोनाम् अष्टवीथिकानाम् उभयपार्श्वे अनेकवज्रमय-कपाटयुक्त स्फटिकनिर्मित वेदिकाद्वारसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।33।

तिन गलियों की वेदी में, मानुष दर्श करेय ।
बैठक में बैठें वहां, भक्ति कर्म हरेय ।।

ॐ ह्रीं आभ्यान्तरबीथिकाद्वारसंयुक्त -समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।34।

धूली कंचन मणिमयी, दरवाजे हैं चार ।
जगमग-जगमग होत है, झलके ज्ञान का सार ।।

ॐ ह्रीं स्वर्णमयचतुःद्वारयुक्तधूलिशालदुर्गसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।35।

दोय कोट चतु वेदी है, दरवाजे चौबीस ।
श्वेत रंग के सब कहे, नित्य झुकाऊं शीश ।।

ॐ ह्रीं रौप्यमयचतुर्विंशतिद्वारयुक्त दुर्गद्वय संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।36।

फटिक मणि के कोट में, आठ बने हैं द्वार ।
हरित रंग के द्वार हैं, दर्शन हैं सुखकार ।।

ॐ ह्रीं स्फटिकमयदुर्गद्वाराभ्यन्तरवेदिकाष्टद्वारहरिद्वर्णकपाट संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।37।

जिन तनु से बारह गुने, द्वार वहां छत्तीस ।
चौड़े जिन वपु चौगुने, तुम्हें झुकाऊँ शीश ।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनदेहतः द्वादशगुणितोच्च-चतुर्गुणायतषट्त्रिंशद् द्वारसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।38।

बैठक में सब बैठ के, भक्ति करें जिनदेव ।
नहि दूसरा काम है, करें आपकी सेव ।।

ॐ ह्रीं द्वाराणाम् उभयपार्श्वे मुकुटयुक्तविष्ठरसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।39।

खम्भा ऊपर गुमठी है, छोटी-छोटी जान ।
ऊपर कलशा ध्वज रहे, जपूं आपका नाम ।।

ॐ ह्रीं जिनगुणगायकदेवीदेवविभूषितः क्षुद्रघण्टिकायुक्तानेक गुमठी विशिष्टद्वारसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।40।

रत्नमयी तोरण वहां, रतनन पुष्प की माल ।
घंटी की पंकति बनी, तुम्हें झुकाऊँ भाल ।।

ॐ ह्रीं विविधरत्नमाल-पुष्पमाल-क्षुद्रघण्टिका-पंक्तियुतद्वार संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।41।

चित्र बने हैं द्वार पर, जगमग ज्योत जगाय ।
सुरनर इनको देख के, मन में अति हर्षाय ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तद्वार संयुक्त-समवसरणस्थित

जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।42।

शंभू छंद

नव द्वारों में है द्वार पाल, त्रिद्वार में ज्योतिष है ठाड़े ।
दो द्वार में व्यंतर वासी हैं, दो में भवनों वाले ठाड़े ।।
वे गदा धरे हैं गर्दन पर, कल्पों के वासी द्वार खड़े ।
यद्यपि आवश्यक न होते, इनसे वैभव और कांति बढ़े ।।

ॐ ह्रीं विविधानेकद्वारपाल संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।43।

मंगलमय मंगल द्रव्य धरे, मंगल जीवन सबका करते ।
है छत्र चमर झारी कलशा, ध्वज पंखा ठोना को धरते ।।
दर्पण में अर्पण कर दीना, प्रभु चरणों का ही ध्यान रहे ।
ये एक सौ अठ हर जगह रहे, इनकी गिनती मुनिराज कहे ।।

ॐ ह्रीं एकलक्षवयुविंशतिसहस्त्रचतुःशतषोडशमंगलद्रव्य विभूषित षट्त्रिंशदद्वार संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।44।

(दोहा)

पांडु काल महाकाल ये, पिंगल पद्म है मान ।
रत्न शंख• नैसर्प है, बारंबार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं एकलक्षोनचत्वारिंशत्सहस्त्रनवशताष्टासीति निधियुक्त-षट् त्रिंशदद्वारसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।45।

शेर चाल (दीन बन्धु,....)

जिनवर चरण में आके निधि सौख्य है देती ।
नर देव पशु मानवों की सेवा वो करती ।।
वे अन्न वस्त्र आयुध औ गहने भी देती ।
बर्तन दिये बाजे दिये, गुणगान भी करती ।।
वे रत्न दे शस्त्र दे महलों को भी देती ।

आकार है गाड़ी बना वे कुछ नहीं लेती ।।
गणधर ऋषि मुनि भी जाके राजते वहां ।
सब जानते हैं किन्तु सौख्य लेते न जरा ।।
भक्ति में भक्त आके तुम्हें, शीश झुकाते ।
निधियां हैं कितनी गणधर जी गिनती बताते ।।

ॐ ह्रीं गगनव्यापकधूम्रघटायुक्तधूपघटयुक्तद्वार संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।46।

छत्तीस द्वार सुन्दर हैं एक दिशा में ।
चऊ एक सौ चालीस हैं मिल चार दिशा में ।।
परदा लगे है स्वर्ण औ कंचन मणिमयी ।
घट धूप के ऊपर रखे, सौगंध है भयी ।।
मेघों की घटा छाय गई धूम है इतना ।
उठ के चली आकाश में उसे चन्द्र से मिलना ।।
शुभ वास को पा करके वहां, भौंरे झूमते ।
भक्ति में भक्त डोल के दु:खों को भूलते ।।

ॐ ह्रीं प्रथमतुर्यषष्ठवीथिकानाम् अन्तराले नृत्याले नृत्यशाला युक्तपार्श्वसंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।47।

प्रभु वाणी सुन के कर्म धुआं ऐसे ही उड़ता ।
निज चेतना का हो विकास जाती है जड़ता ।।

ॐ ह्रीं षोडशनृत्यशालासहित चतुर्दिशाचतुर्द्वार संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।48।

प्रथम गली चतुर्थ गली छटवी गली में ।
अंतर में नृत्य शाला सुन्दर होती गली में ।।
देवांगना हर पल वहां वे नाचती रहती ।
गुणगान वे हरपल करें पर वे नहीं थकतीं ।।

ॐ ह्रीं कल्पवासिनी नत्ययुक्त चतुर्थान्तरवीथिकायाम् पूर्ववत् नत्यशालासंयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।49।

अध्यात्म ज्ञान लोक ज्ञान मन वहां रमे ।
जिनवास है जहां पे वहां ध्यान में जमें ।।
है चार दिश में चार-चार नृत्य शालायें ।
भवनों की है ये देवियां पहनी हैं मालायें ।।
इक नृत्य शाल में बत्तीस नृत्य करें हैं ।
प्रभु ध्यान में हो करके लीन पाप हरे हैं ।।
चौथी गली में कल्पवासिनी है नाचती ।
है नृत्य शाला पूर्ववत् हो करके जांचती ।।
कर-करके नृत्य भक्ति में वे होती लीन हैं ।
परिणाम है निर्मल वहां न मन मलिन है ।।

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशत् नृत्यशालायुक्तषष्ठान्तरवीथिका संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।50।

पूर्व दिशा मानस्तम्भ संबंधी पूजन

स्थापना

शंभु छंद

जिन वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, यह अन्तर आतम ज्ञानी हैं ।
हैं दोष अठारह रहित प्रभु, निज में निज के ध्यानी हैं ।।
जग छोड़ा है सुख पाया है, संसार तुम्हें जिनवर कहता ।
अन्तर में आओ हे जिनवर, तुम सम बनने पूजा करता ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

जल

तर्ज- चौबीसी पूजन

धोया तन जल से खूब, तन न स्वच्छ हुआ ।
हो जन्म, जरा, मृत्यु, नाश, जल का कलश लिया ।
पूरब दिश मान स्तम्भ, भक्ति नित्य करें ।
हो मान रहित मम ज्ञान, ऐसे भाव धरें ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

चन्दन

बांधू चिन्ता में कर्म, अग्नि सम जलता ।
चन्दन से पूजूं नाथ, पाऊँ शीतलता
पूरब दिश मान स्तम्भ.......

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षत

दुखड़े पाये गति चार, सुख पद ना पाया ।
अक्षत लेकर के नाथ, चरणों में आया ।।
पूरब दिश मान स्तम्भ.......

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा।

पुष्प

ये राग भाव भगवान, कर्म कराते हैं ।
छूटूं इनसे हे नाथ, पुष्प चढ़ाते हैं ।।
पूरब दिश मान स्तम्भ.......

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्व. स्वाहा।

नैवेद्य

चारों गति खाया खूब, पर न पेट भरा ।

नैवेद्य समर्पित आज, काटो कर्म जरा ।।
पूरब दिश मान स्तम्भ, भक्ति नित्य करें ।
हो मान रहित मम ज्ञान, ऐसे भाव धरें ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

दीप

केवलज्ञानी हो नाथ, ज्ञान ही उजियारा ।
हाथों में लाया दीप, कर्मों का हारा ।।
पूरब दिश मान स्तम्भ.......

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

धूप

काया को रहा संवार, आतम भूल गया ।
अग्नि में खेऊं धूप, दर्शन आज हुआ ।।
पूरब दिश मान स्तम्भ.......

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

फल

ठग है सारा संसार, मुझको लूट लिया ।
फल पाने फल हम लाये, हर्षित आज जिया ।।
पूरब दिश मान स्तम्भ.......

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्य

तेरी छाया में बैठ, भक्ति हम करते ।
ले अष्ट द्रव्य का थाल, पूजा नित करते ।।
पूरब दिश मान स्तम्भ, भक्ति नित्य करें ।
हो मान रहित मम ज्ञान, ऐसे भाव धरें ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

उत्तर दिशा मानस्तम्भ संबंधी पूजन

स्थापना

शंभु छंद

अध्यातम अनुभव मानव को, प्रभु का दर्शन ही देता है ।
अध्यातम शांति जब आये, मानव चिन्ता को खोता है ।।
मानस्तम्भों के दर्शन से, ही अभिमान मान खण्डित होता ।
अतिशय कारी प्रभु का दर्शन, भक्तों की झोली भर देता ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

जल

(तर्ज : नीर गंध अक्षतान् ....)

विश्व शान्ति आत्म शान्त, हो त्रिलोक में सदा ।
कर्म मैल भी धुले, जीव पायेंगे मुदा ।।
जिन महल मानथंभ, मान को गलायेगा ।
भव्य दर्श लेयकर, मोक्ष पथ को पायेगा ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

चन्दन

ईर्ष्या से आत्मदाह, क्रोध भी जलावता ।
चंदनादि लेयकर, चर्ण में चढ़ावता ।।
जिन महल मानथंभ......

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षत

अक्षतों से पूजता मैं, जन्म न हो फिर मेरा ।
अक्षतों की सम्पत्ति पे, वास प्रभु है तेरा ।।
जिन महल है मानथंभ, मान को गलायेगा ।
भव्य दर्श लेयकर, मोक्ष पथ को पायेगा ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा।

पुष्प

रूप रंग पुष्प का, जीव को लुभावता ।
छूटने को काम से, पुष्प मैं चढ़ावता ।।
जिन महल मानथंभ......

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्व. स्वाहा।

नैवेद्य

भूख की जो औषधि, आप ने वो खायी है ।
मेरी क्षुधा भी नशे, भावना ये भायी है ।।
जिन महल मानथंभ......

ॐ ह्रीं उत्तरदिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

दीप

भ्रमण भ्रमित होके करे, राह नाही सूझती ।
दीप चर्ण में धरूं, प्रभु चरण को पूजती ।।
जिन महल मानथंभ......

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

धूप

विकृति ने प्रकृति को, फल से दूर है रखा ।
मुक्ति फल मुझे मिले, हो ध्यान में मेरा सखा ।।

जिन महल मानथंभ, मान को गलायेगा ।
भव्य दर्श लेयकर, मोक्ष पथ को पायेगा ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

फल

कल्पवृक्ष आप हो, आप ही चिन्तामणि ।
कर्म मेघ छाये रहे, आप हो आतम धनी ।।
जिन महल मानथंभ......

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्य

प्रेम की वेदी बना, आत्मा बिठा दिया ।
अर्घ्य से मैं पूजता, हर्ष मय मेरा जिया ।।
जिन महल है मानथंभ, मान को गलायेगा ।
भव्य दर्श लेयकर, मोक्ष पथ को पायेगा ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दक्षिण दिशा मानस्तम्भ संबंधी पूजन

स्थापना

त्रिभंगी छन्द

अरिहन्त नमन कर, आत्म चमन कर, समवशरण पूजा करते ।
मुक्तिकी राहें, धर्म की चाहें, कर्मगिरि को सब हरते ।।
प्रभु न लौटेंगे, मुक्त रहेंगे, ध्या भावों को शुद्ध करें ।
हिरदय कमलासन, प्रभु का शासन, बारम्बार प्रणाम करें ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

जल

चाल : सोलहकारण पूजा

जल का कलशा लेकर आए, भावों से हम पूज रचाएं ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज ।।
दक्षिण दिश के मानस्तम्भ, बारम्बार मैं करूं नमन ।
श्री जिनराज, पूरण होवें सारे काज ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

चन्दन

चन्दन है शीतलता दाय, मन मेरा शीतल हो जाए ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज........

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षत

अक्षय पद को अक्षत लाए, स्थिर मन मेरा हो जाए ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज........

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा।

पुष्प

पुष्पों की थाली भर लाए, राग भाव से मन हट जाए ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज........

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्व. स्वाहा।

नैवेद्य

चरू मैं पूजन कारण लाए, भोजन नहीं भूख मिट जाए

श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज ।।
दक्षिण दिश के मानस्तम्भ, बारम्बार मैं करूं नमन ।
श्री जिनराज पूरण होवें सारे काज ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

दीप

जगमग अन्तर दीप जगायें, पूजन को दीपक ले आए ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज........

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

धूप

अग्नि मांही धूप चढ़ाएं, अष्टकर्म का धुआं उड़ाएं ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज........

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

फल

फल लेकर हम चरण में आये, मृत्यु नहीं मोक्ष को पाये ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज........

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्य

अर्घ्यों का हम थाल सजाए, मुक्ति महल की सेज दिलाय ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज ।।
दक्षिण दिश के मानस्तम्भ, बारम्बार मैं करूं नमन ।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पश्चिम दिशा मानस्तम्भ संबंधी पूजन

स्थापना

त्रिभंगी छंद

गति चार घुमाया, कष्ट दिलाया, कर्म दुष्ट पीड़ा देते ।
करूणा को तरसा, धर्म न बरसा, ज्ञान मेरा सब हर लेते ।।
तेरी ख्याति सुनकर, नाम को जपकर, पूजा को हम आए हैं ।
भटकूं न वन-वन, पाऊं उपवन, चरणों में शीश झुकाये हैं ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

जल

चौपाई

जलता-जलता मैं आया हूं, जल झारी में भर लाया हूं ।
तन मन मेरा शुद्ध कर देना, पीड़ा मेरी सब हर लेना ।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है, समवशरण में चमन-चमन है ।
भावों से हम पूज रचाये, पूजन समवशरण कर आये ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

चन्दन

नन्दन को चन्दन अर्पण है, वीतरागता जिन दर्पण है ।
चन्दन तन की दाह मिटाये, पूजा कर शीतल हो जाये ।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है......

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षत

रहती मुझको पद अभिलाषा, समझी न अक्षत की भाषा ।
पूजा को अक्षत ले आये, अक्षय पद जो शीघ्र दिलाये ।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है, समवशरण में चमन-चमन है ।
भावों से हम पूज रचाये, पूजन समवशरण कर आये ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा ।

पुष्प

पुष्पों ने जीवन उलझाया, इसमें सार कहीं न पाया ।
पुष्पों से पूजा हम करते, काम वासना को जो हरते ।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है......

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो पुष्पं निर्व. स्वाहा ।

नैवेद्य

भूखा उदर है दीन बनाता, चारों गति में हर पल खाता ।
मैं नैवेद्य की थाली लाया, तुमसा कोई और न पाया ।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है......

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा ।

दीप

अंधियारा बाहर जब होवे, दीप जला हम तम को खोवें ।
अन्दर में उजियारा कर दो, दीप चढ़ाये ज्योति भर दो ।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है......

ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा ।

धूप

काटा प्रभु कर्मों को तुमने, छांटा प्रभु कर्मों को तुमने ।
कर्म बंध हम खूब करायें, अब चरणों में धूप चढ़ायें ।।

पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है, समवशरण में चमन-चमन है ।
भावों से हम पूज रचाये, पूजन समवशरण कर आये ।।
ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

फल

जग के जंजालों में फंसते, पाप कर्म को करके हंसते ।
पर न फल को हमने जाना, फल अर्पित है तुमको माना ।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है......
ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्य

जैसे सूरज ढल जाता है, जैसे हिम भी गल जाता है ।
वैसा जीवन है प्रभु मेरा, अर्घ्य समर्पित करो बसेरा ।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है, समवशरण में चमन-चमन है ।
भावों से हम पूज रचाये, पूजन समवशरण कर आये ।।
ॐ ह्रीं पश्चिम दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

सुंदर हैं चारों दिशा, मानस्तम्भ हैं चार ।
जिन प्रतिमाएं राजती, दर्शन है सुखकार ।।

पद्धरि छंद

जय समवशरण महिमा अपार, भव्यों को करता है ये पार ।
नाना प्राणी जन दर्श लेय, मानी का मान ही तुम हरेय ।।
जग कर्मों का बन्धन रहता, कर्मों के दु:ख को वह सहता ।
चारों गतियों में घूम रहे, गतियों में जाकर कष्ट सहे ।।
बन्धन बांधा तन को काटा, क्षण को न मिली मुझको साता ।
अब शरणा तेरे आये हैं, अब चरणा तेरे पाये हैं ।।

इन हाथों से पूजा करते, इन आंखों से दर्शन करते ।
अब पुण्य प्रबल मेरा जागा, मन तेरे चरणों में लागा ।।
शुभ समोशरण पूजा करता, पुण्यों से झोली मैं भरता ।
प्रभु ने आतम को पाया है, आतम में ध्यान लगाया है ।।
तव दर्श से आतम मैं पाऊं, आतम को पा मुक्ति जाऊं ।
जिनवर का महल तो सुन्दर है, जिसमें बैठे प्रभु अन्दर हैं ।।
चारों दिश में चतु मानस्तम्भ, दर्शन कर हो जाते हैं नम्र ।
नीचे से है चौकोर धार, हम करते इनको नमस्कार ।।
ऊपर हो जाए गोलाकार, दैदीप्तमान प्रतिमा निहार ।
है वज्रमयी, है फटिकमयी, दिपता सुंदर वैडूर्यमयी ।।
नन्दोत्तर आदि कही जान, सुन्दर-सुन्दर हैं इनके नाम ।
चहुं ओर वापिका चार जान, राजीव खिले मनहर महान ।।
उन पर भौंरे झूमे ऐसे, पृथ्वी में लगा अंजन जैसे ।
जय ध्वजा चमर है शोभ पाए, चारों दिश में वह लहलहाए ।
मानी जन आके मान जाए, मन की आकर शुद्धि करायें ।।
चारों दिश में सोलह वाणी, तिर जावे जो होवे पापी ।
चारों दिश में चतु प्रतिमा है, लखते जगती मन प्रतिभा है ।।
सुर-नर वंदन को आते हैं, नाचें गाते हर्षाते हैं ।
वसु-प्रातिहार्य शोभा बढ़ाये, प्राणीजन तुमको सिर नवाएं ।।
इससे ही मानस्तम्भ नाम, सुर-नर करते तुमको प्रणाम ।
वापी समीप है कुण्ड दोए, है स्वर्णमयी तव दर्श होए ।
जिन पूजा को जो भी आवे, पग धोकर के आनंद पावे ।
वापीजल से पूजा करेय, यह जन्म जरा मृत्यु हरेय ।
लटकी है रत्नों की माला, यह तोड़े कर्मों का जाला ।।
पूरब दिश का वर्णन कीना, दक्षिण दिश में ऐसे लीना ।

पश्चिम उत्तर सब एक जान, चहुं दिश में मानस्तम्भ मान ।।
जिनराज बहुत वैभवशाली, जिन महल के जिनवर है माली ।
भव्यों के फूल खिलाते हैं, मुक्ति से उन्हें मिलाते हैं ।।
''स्वस्ति'' करती जिन नमस्कार, इस कर्म मान पर कर प्रहार ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्सम्बन्धि मानस्तम्भ स्थित जिन प्रतिमाभ्य: पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

मानस्तम्भ के दर्श से, मान गलित हो जाये ।
विनय भाव आवे महा, मुक्ति से मिलवाये ।।

।। इत्याशीर्वाद पुष्पांजलि क्षिपेत ।।

प्रथम प्रासाद भूमि पूजा

चौपाई

प्रथम भूमि प्रासाद को जानो, गणधर कहे सहस्त्र प्रमानो ।।
भक्ति में हम पाठ रचायें, प्रभुवर के गुणगान को गायें ।

प्रथम कोट है वेदी प्रथम, दर्शन कर मन होता है नम ।
चैत्य भूमि भी बीच में होती, कर्मों के वह गिरि को खोती ।।

ॐ ह्रीं प्रथम गली द्वारोभयपार्श्वभागे अन्तर्गलीमध्ये चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।1।

जिन मंदिर के आजू-बाजू, पांच-पांच मन्दिर को साजू ।
वायव अरू ईशान बताया, जिन भवनों में प्रभु को पाया ।।

ॐ ह्रीं चतुर्विदिशासु पंचपंचमन्दिरमध्य जिनमन्दिर संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।2।

वलय व्यास को आप विचारो, वायव दिश में प्रभु निहारो ।
भक्ति का सुख ज्ञान में पाये, ज्ञानी आतम ध्यान लगायें ।

ॐ ह्रीं वायव्यांदिशायां वलयव्यासयुक्तचैत्यभूमि सयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।3।

चैत्य भूमि में सुन्दर मन्दिर, तालवृक्ष बावड़ी है अन्दर ।
रचना देखत ही सुख पाये, देव-देवी विद्याधर आये ।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमिसरोवरवापिकासोपानविष्ठरसंयुक्त चैत्यमन्दिर स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।4।

सरस सरोवर सार वापिका, बनी बैठ के सुन्दर लतिका ।
सुन्दर सीढ़ी चढ़कर जाये, फिर जिनदेव के दर्शन पाये ।।

ॐ ह्रीं सरोवरवापिकातालवृक्षयुक्तचैत्यभूमिमन्दिरसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।5।

वापी ऊपर छतरी छत है, चार खंभ होते अक्षत हैं ।
शिखर पे कलशा ध्वजा चढ़ाये, सुन्दर मन्दिर शोभा पाये ।।

ॐ ह्रीं वापिकाया: कोणस्थस्तम्भेषु शिखरध्वजाकलशयुक्तचैत्य मन्दिर स्थितजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।6।

सुन्दर घने वृक्ष लहराए, षट ऋतु के फलफूल भी लाये ।
जहां जिनेश्वर स्वयं विराजें, सरस ध्यान शोभा में राजे ।।

ॐ ह्रीं षड्ऋतु फलफूलयुक्त श्रेणीबद्धवृक्ष चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।7।

उन वृक्षन की शाखा सुन्दर, मन्द पवन जिनवास है अन्दर ।
जहां प्रभु जी ध्यान लगायें, प्रकृति शोभा वहीं बढ़ायें ।।

ॐ ह्रीं अनेकशाखासहित वृक्षशोभितभूमि चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।8।

वृक्षों नीचे शिला रखी है, चन्द्र कांतिसम वहीं दिखी है ।
संघ सहित मुनिवर हैं राजे, लख शोभा मस्तक झुक जावे ।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमिवृक्षतलेषु अनेकशिलासु दिगम्बरमुनिसमूहसहित चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।9।

दया के सागर गुण मणि आगर, ज्ञान ध्यान को करे उजागर ।
चैत्य भूमि में ध्यान लगायें, दर्शन कर हम सुख को पाएं ।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि दिगम्बर मुनिसंयुक्त चैत्यमन्दिरस्थजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।10।

ध्यान किया निज ज्ञान को पाया, जीवों को उपदेश सुनाया ।
ऐसे मुनिवर दर्शन देवे, भव सिन्धु की नाव को खेवें ।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि शिलासु द्विविध धर्मोपदेशक दिगम्बरयति संयुक्त चैत्यमन्दिरस्थजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।11।

कर्म गिरि को नित्य गिराये, तप तपते वो ध्यान लगाये ।
प्रशम मूर्ति वैराग्य जगाये, वैरागी का ध्यान बढ़ाये ।।

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि कर्मध्वंसक दिगम्बर यति संयुक्त चैत्य मन्दिर स्थजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।12।

स्वर्ण मयी रत्नों के द्वारा, द्वार पे सुन्दर वंदन वारा ।
महल गोख छज्जा है सुन्दर, वहां बने हैं मन्दिर सुन्दर ।।
शोभा इसकी हमें लुभाये, जिनवर दर्शन हम भी पायें ।
सुर-नर विद्याधर भी आते, लख शोभा सबही हर्षाते ।।

ॐ ह्रीं अनेक शोभा संयुक्त चैत्य भूमिस्थ पंच मन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।13।

समोवशरण में चित्र बने हैं, कर्म घातिया आप हने हैं ।
चित्रों से भी शिक्षा पाते, अपना-अपना ज्ञान बढ़ाते ।।

ॐ ह्रीं अनेक रचनासंयुक्त चैत्य भूमि मन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।15।

चैत्य भूमि पूजन

आग्नेय दिशा चैत्य भूमि मन्दिर जिन स्थापना

त्रिभंगी छन्द

आग्नेय दिशा में, कर्म नशाने, बिम्ब जिनालय राज रहे ।
पूजा करना है, दुख हरना है, आव्हानन का ताज रहे ।।

अथ आग्नेय दिशाचैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना

नैऋत्य दिशा में कर्म नशाने, बिम्ब जिनालय राज रहे ।
पूजा करना है, दुख हरना है, आव्हानन का ताज रहे ।।

अथ नैर्ऋत्यदिशा चैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना

वायव्य दिशा में कर्म नशाने, बिम्ब जिनालय राज रहे ।
पूजा करना है, दुख हरना है, आव्हानन का ताज रहे ।।

अथ वायव्य दिशाचैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना

ईशान दिशा में, कर्म नशाने, बिम्ब जिनालय राज रहे ।
पूजा करना है, दुख हरना है, आव्हानन का ताज रहे ।।

अथ ईशान दिशाचैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना

स्थापना

त्रैलोक्य में जिनराज सेवा, भाग्य से सबको मिले ।
संसार सागर पार होने, धर्म का अमृत मिले ।।
भगवन तेरा गुणगान सुनकर, दर्शन को हम आये हैं ।
मनहर तुम्हारा रूप लखकर, हर्ष मन में पाये है ।।

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू छंद

जल

तन को निर्मल करने प्रभुवर, जल से स्नान किया करता ।
मन निर्मल मेरा होजावे, इसीलिये मैं जल अर्पण करता ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे, जिस पर कलशा शोभा पाते ।
जिन समवशरण की पूजा को, शुभ भाव बनाकर हम आते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः जलम्।

चन्दन

क्रोधी मन चैन न पाता है, यह द्वेष भाव बढ़वाता है ।
चरणों में चन्दन अर्पित है, शांति की आस लगाता हैं ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे.......

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः चन्दनं।

अक्षत

उज्जवल अक्षत शुभ भाव करे, अक्षय पद पाने आया हूं ।
अक्षत से पूजा करके मैं, अक्षय भावों को पाया हूं ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे.......

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं।

पुष्प

कोमल पुष्पों की कलिकाएं, जीवों का चित्त लुभाती हैं ।
विषयों के भौंरे दुखी रहें, पुष्पों से पूजा भाती है ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे.......

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं।

नैवेद्य

रसयुक्त सरस भोजन खाकर, यह तन भी रोगी होता है ।
नैवेद्य से पूजा करते हैं, यह तन रोगों को खोता है ।।

चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे, जिस पर कलशा शोभा पाते ।
जिन समवशरण की पूजा को, शुभ भाव बनाकर हम आते ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं।

दीप

दीपक उजियाला करता है, अंतः में छाया अंधकार ।
दीपक ले पूजन को आये, चरणों में शत्-शत् नमस्कार ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे.......

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः दीपं।

धूप

कर्मों ने जग भरमाया है, कर्मों ने नाच नचाया है ।
कर्मों का धुआं उड़े प्रभुवर, तव पूजा कर हर्षाया है ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे.......

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः धूपं।

फल

ज्ञानामृत सम फल कोई नहीं, ज्ञानामृत रस कभी पिया नहीं ।
चरणों में फल अर्पित करते, मुक्ति का फल मिल जाए सही ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे.......

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः फलं।

अर्घ्य

जल फल वसु द्रव्य मिलाकर के, यह अर्घ्य समर्पित करते हैं ।
पाऊं अनर्घ्य पद हे प्रभुवर, आनन्द के झरने झरते हैं ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे.......

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं।

जयमाला

चैत्य भूमि पूजन करी, उत्तम भाव बनाये ।
सुर गण नरपति आए के, शत्-शत् शीश नवाए ।।

शेर चाल (हे दीन बंधु,...)

जयकार करें हम, प्रथम भगवान तुम्हारा ।
चरणों में शीश झुकाता है भक्त तुम्हारा ।।
जाके समोशरण की, प्रभु वन्दना करें ।
है चैत्यधरा के प्रभों की अर्चना करें ।।

है पृथ्वी वहां नीलमणि, रत्न की बनी ।
श्रेणी में पंच मन्दिरों से, शोभा भी बढ़ी ।।
जिनदेव बसे मध्य में शोभा को बढ़ायें ।
हम भाव सहित जाके वहां अर्घ्य चढ़ायें ।।

ऊंची है भूमि जिस पर मन्दिर बहुत बने ।
जिनद्वार की शोभा बढ़ाने रत्न भी जड़े ।।
औ चौक बने कोठा बने द्वार भी बने ।
तिन पर सजी है गुमठी कलशा वहां घने ।।

आकाश में ध्वजा अनूप शोभा बढ़ाये ।
मानो हो नृत्यकार जैसे नृत्य कराये ।।
अंदर बनी है रचना बाहर भी है बनी ।
शुभ पीठ बने शिखर पे, मंडप भी है तनी ।।

एक सहस पत्र के कमल है साजते ।
उस गंधकुटी में प्रभु जी आके राजते ।।
मणियों से देव-देवियां मिल आरती करें ।
भावों से करें भक्ति को वे नृत्य भी करें ।।

शुभ पुण्य का उदय हुआ, जिन दर्श को पाया ।
ले अष्ट द्रव्य थाल सजा चरणों में आया ।।
है आपका ये मंदिर जहां पुण्य कमाये ।
घर जाके प्राणी पाप में ही डुबकी लगाये ।।

है आपका ये द्वार सत्य ज्ञान सिखाता ।
भटके हुए राही को भी ये राह दिखाता ।।
है आपका ये द्वार त्याग धर्म बताता ।
ये भक्त द्वार आके तुम्हें शीश झुकाता ।।

दोहा

तुच्छ बुद्धि से है किया, हमने प्रभु गुणगान ।
यदि गलती हो गई कहीं, क्षमा करो भगवान ।।
''स्वस्ति जिन भगवान की, पूजा करें अपार ।
भवसागर से होएगी, नाव हमारी पार ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धी चैत्यभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घं।

खातिका भूमि सम्बन्धी पूजन

दोहा

दूजी गली विशाल है, भूमि दूजी जान ।
स्वच्छ नीर से है भरी, नाम खातिका मान ।।

ॐ ह्रीं मार्गे वामदक्षिणपार्श्वे अन्तर्गलिमध्ये द्वितीयखातिकाभूमि संयुक्तसमवसरणस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।1।

खाई रतनन है जड़ी, वलय व्यास में मान ।
शोभा अपरम्पार है, श्री सर्वज्ञ बखान ।।

ॐ ह्रीं द्वाविंशतिभागवलय व्यासयुक्त द्वितीयखातिकाभूमि

रत्नसोपान संयुक्तसमवसरणस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।2।

प्रथम दूजी के मध्य में, भरी खातिका जान ।
वेदी सुन्दर द्वार है, शोभा परम प्रमान ।।

ॐ ह्रीं प्रथम द्वितीय परिधौ अनेकलघुद्वारसंयुक्तसमवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।3।

लघु द्वारे बहु शोभते, गुमठी बनी प्रमान ।
सुंदर कलशा भी धरे, बारम्बार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं लघुद्वारे सकलशक्षुद्रगुमठी संयुक्तसमवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।4।

लघु द्वार के आगे में, खतिका पे पुल जान ।
पुल की शोभा है अधिक, देव करत सम्मान ।।

ॐ ह्रीं लघुद्वाराग्रे रत्नखचितसेतुयुक्तखातिकासंयुक्तसमवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।5।

लघु द्वार पुल से चले, गंध कुटी की ओर ।
सुगम मार्ग लगता कहें, रत्नों की है भोर ।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमेः अग्रे वेदिकालघुद्वारानेकलघुद्वारसेतुमार्गेभ्यः गन्धकुट्याः भूमिपर्यन्तसुगममार्गसंयुक्तसमवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।6।

दूजी वेदी द्वार पर, निकले नर पशु देव ।
अंतर गलियन जाय के, दर्श करें जिनदेव ।।

ॐ ह्रीं द्वितीयवेदिकाद्वारमध्यतः गन्धकुटीपर्यन्तसुगममार्गसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।7।

पुल के ऊपर बैठ के, करते हैं आराम ।
ध्वजा कलश मणिमय बनी, आतम में विश्राम ।।

ॐ ह्रीं सेतोः उपरि उभयपार्श्वे कलशन्वजाबहुशिखरयुक्तबहु-विष्ठर संयुक्तसमवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।8।

दर परदा बैठक लगे, चित्र बने अभिराम ।
झलके खाई में सभी, सुन्दर जिन भगवान ।।

ॐ ह्रीं सेतोः उपरि अनेक विष्ठर संयुक्तसमवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।9।

चौपाई

खाई खातिका नीर जु प्यारा, जल है क्षीर सिन्धु सम न्यारा ।
छोटी बड़ी नाव भी चलती, तेज धार में नावें हिलतीं ।।

ॐ ह्रीं अनेकलघुविशालनौकासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।10।

सुन्दर बंगला बने है ऊपर, शोभा पावे छतरी तापर ।
सिंह, गजादिक मुंह को बाये, ऐसे उसमें चित्र बनाये ।।

ॐ ह्रीं जबनिकाशोभाशोभितानेकनौकासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।11।

नौकाओं में सुर–नर नाचे, जिन भगवान के गुण को वांचे ।
बाजे बजते बजे बधाई, प्रभु दर्शन की महिमा गाई ।।

ॐ ह्रीं जिनगुणगाण्कदेव विद्याधरयुक्तनोकासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।12।

अति शीघ्र नौका भी हिलती, दौड़–दौड़ करके वह चलती ।
जाकर उसमें आनन्द लेते, भवसागर से नाव को खेते ।।

ॐ ह्रीं खातिकासु अतिशीघ्रगामिनौकासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।13।

श्री प्रभुवर के दर्शन पावे, समवशरण में पुण्य कमावे ।
भक्ति रंग में सब रंग जावे, पूजा करके हम हर्षावे ।।

ॐ ह्रीं अनेकातिशययुक्त पुण्यसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।14।

तृतीय पुष्प वाटिका भूमि पूजन

(शेर चाल....हे दीन बन्धु....)

तीसरी है भूमि, पुष्प वाटिका कही ।
पुष्पों की गंध, चारों ओर आती है सही ।।
अंतर गली में दूसरी वेदी वहां बनी ।
सुंदर बने हैं द्वार वो मणियों से है सजी ।।

ॐ ह्रीं अनेकातिशययुक्त पुण्यसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

सुंदर है कोट दूसरा, शोभा को बढ़ावे ।
चारों दिशा के मंदिरों के दर्श को पावे ।।
आगे हैं बनी पुष्प वाटिका को जानिये ।
शोभा बढ़े जिनदेव की, सब ये भी मानिये ।।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि द्वारे बामदक्षिणान्तर्गलीषु चतुर्थभागप्रमाण द्वितीयवेदिका संयुक्तसमवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

भूमि है तीसरी का वलय व्यास जू कहा ।
रम्यक् है भूमि, घूमने को देव भी गया ।।
चारों दिशाओं में ही, चार द्वार कहे हैं ।
ऊंचे हैं द्वार तिन पर, कलशा भी धरे है ।।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि चतुर्थभागद्वितीयसाल (कोट) संयुक्त-समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

अन्तर गली में द्वार, अग्र भाग बताया ।
रम्यक् है भूमि, घूमने को देव भी आया ।।
चारों दिशाओं में ही, चार द्वार कहे हैं ।
ऊंचे हैं द्वार तिन पर, कलशा भी धरे हैं ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमी चत्वारिंशद्भाग वलयव्यासपुष्पवाटिका संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चारों दिशा में शोभते हैं चार चौपरा ।
है आसपास वृक्ष लगे रंग है हरा ।।
सोपान चारों ओर भी मणियों की है बनी ।
बारहदरी में बार द्वार शोभा है बढ़ी ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ चत्वारिंशद्भाग पुष्पवाटिकासंयुक्तसमवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

बंगला बने प्रकोष्ठ बने कलशा चढ़ाए ।
मंडप बने जिनगार की शोभा को बढ़ाये ।।
चौतरफा बनी रौंस रत्नजड़ित है क्यारी ।
सुरवृक्ष फूल खिल रहे, शोभा भी है न्यारी ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अन्तरगल्याः द्वाराग्रे रम्यभूमिसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

बेला गुलाब केतकी औ फूल चमेली ।
उत्तम हैं फूल वाटिका में जानो पहेली ।।
इसकी सुगंध से दिशाएं महकती रहें ।
आकर के देव-देवियां भी क्रीड़ा को करें ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ पुष्पवाटिकाचतुर्दिश अनेकरचनायुक्त चतुद्वारसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चौपाई

रौंस के दोनों ओर खड़े हैं, क्रम से केले वृक्ष बड़े हैं ।
सहज श्रेणी में बढ़ते जाएं, वृक्षों से शोभा बढ़ जाए ।।
रौंस के दाहिनी ओर है सुनना, आम अनार वृक्ष है गुनना ।
नींबू नरियल इमली जामुन, है बादाम बहुत फल के गुन।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अन्तरगल्याः द्वाराग्रे ससीमद्वादशद्वारीयुक्त

चतु:चतुष्कसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

(दोहा)

चारों विदिशा में बनी, रौंस वापिका ताल ।
वहां सार बैठक बनी, तुंग कलश ध्वज जाल ।।

ॐ ह्रीं अनेकप्रकोष्ठयुक्त तृतीयभूमिसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

उज्जवल नीर है क्षीर सम, सुन्दर कान्ति विशाल ।
रत्नों की झालर बंधी, दर्शत होए निहाल ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमिपुष्पवाटिकामण्डपसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

(शेर चाल)

चारों दिशाओं में ही, चार द्वार कहे हैं ।
ऊंचे हैं द्वार तिन पर, कलशा भी धरे हैं ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूंमी चत्वारिंशद्भाग बलयव्यासपुष्पवाटिकासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

(दोहा)

वृक्षों की शाखा हिले, नीचे शिला सुथान ।
मणिमय रत्न सुहावनी, मुनि विराजें आन ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमिरत्नखचितसीमाचतुरालबालसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

धरें योग अनगार जी, ज्ञान ध्यान में लीन ।
मुक्ति सुंदरी पाएंगे, निज में हो लवलीन ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ बेलादिअनेकपुष्पयुक्तवाटिका संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

है प्रकोष्ठ मनहर बने, महिमा अतिशय जान ।
चार दिशा झालर लगी, हुई कर्म की हान ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अनेकपुष्पयुक्तपुष्पवाटिकासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

उपदेशक वहां बैठते, भव्य ज्ञान को पाय ।
अतिशय युक्त प्रकोष्ठ है, अपने कर्म खिपाये ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अनेकपुष्पयुक्तपुष्पवाटिकासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

शिला चन्द्र की शोभती, मुनि विराजे आन ।
कर्म गिरि को तोड़ने, करे आत्म का ध्यान ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ देवादिक्रीड़ायुक्तपुष्पवाटिकासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

अभ्यंतर बंगला बना, करें देवता वास ।
नृत्य करें गुणगान भी, मुक्ति की हमें आस ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ सीमायाश्रेणीबद्धकदलीवृक्षसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

रौंस क्षेत्र में देवगण, घूमे फिरे प्रवाह ।
प्रभु दर्शन के पुण्य से, मिले ज्ञान की राह ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौसीमाया: वामदक्षिणभागयो: अनेकवृक्ष फलपुष्पसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

(चौपाई)

वरन-वरन की रचना सोहे, समवशरण सबका मन मोहे ।
ज्ञानमयी फुलवारी महके, मनमोहक पक्षी भी चहके ।।
समवशरण में बैठे जिनवर, साथ में इनके होते गणधर ।
नित प्रति इनको शीश झुकाऊं, चरणों में आ अर्घ्य चढ़ाऊं ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौसीमापार्श्वद्वयनिम्बुसंगतरप्रमुखवृक्षसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चतुर्थ भूमि वर्णन प्रारम्भ

चौथी भूमि मे चौथी गली है, सुन्दर वरण सुहाता है ।
वाम सु दक्षिण अंतरगली में, ॐ का द्वार सुभाता है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थवीथिकायां वामदक्षिणान्तरवीथिकाद्वारसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

सुभग सुसुन्दर नाटकशाला, नर नारी को भाती है ।
ऐसे जिन के समवशरण की, पूजा हमें सुहाती है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ सुभगनाट्यशालासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री जिन के गुण गा गाकर के, सुर बालायें नृत्य करें ।
हाव-भाव से पग रख रखके, मनहारी वह नृत्य करें ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ द्वारेनाट्यशालासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

सुभग सु सुन्दर नाटकशाला, नर-नारी को भाती है ।
ऐसे जिन के समवशरण की, पूजा हमें सुहाती है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ तुर्यभागप्रमाणद्वितीयदुर्गतृतीयवेदिकासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

आगे दूजा कोट बताया, भाग चार परमाण कहा ।
तीजी वेदी नैन निहारे, चार भाग उर धार जरा ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ द्वितीयदुर्गतृतीयवेदिका चत्वारिंशद्भागेपवन संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

चौथी उपवन भूमि है यह, भव्य जीव को भाती है ।
ऐसे जिन के समवशरण की, पूजा हमें सुहाती है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ आग्नेयदिशि अशोकवनेन नैर्ऋतदिशि सप्तवर्णवनेन संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

विदिशाओ मे उपवन भूमि, शोभा अधिक बढ़ाती है ।
वलय व्यास के भाग चवालिस, पवन युक्त हर्षाती है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ वायव्यदिशायां चम्पकवनेन ईशानदिशायाम् आम्रवनेन च संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

ज्ञान के मोती प्रभु लुटायें, भर-भर सखियां लाती हैं ।
ऐसे जिन के समवशरण की, पूजा हमें सुहाती है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अशोक चम्पकसप्तवर्ण रसालवनमध्य स्थभूतवृक्षसंयुक्तसमवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

त्रिभंगी छन्द

आग्नेय दिशा में, स्वच्छ दशा में, वन अशोक जहं शोभत है ।
नैऋत्य को जानो, निज पहचानो, सप्त वर्ण मन मोहत हैं ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अनेकरचनायुक्तचतुर्वनसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

वायव्य दिशा में, स्वच्छ दशा में, चम्पक वन जहं शोभत है ।
ईशान को जानो, निज पहिचानो, वन आम्र मन मोहत हैं ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अशोकवने द्वादशद्वारीसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

वृक्षों को जाति, मन भरमाती, भूप वृक्ष जहं शोभ रहे ।
है प्रथम अशोका, चंप विशेषा, वृक्ष आम्र मन मोह रहे ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अनेकरचनायुक्तद्वादशद्वारीसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

महिमा है न्यारी, बारह द्वारी, भक्तों का मन हरता है ।
गुण गान कराऊं, भावना भाऊं, जो कर्मों को हरता है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ द्वादशद्वार्या:उपरि अनेकरचनायुक्तत्रितल गवाक्षसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

बैठक की गोखे, परदा शोभे, रत्नों की माला लटकी ।
जय जय सब ओर जय-जय शोर है, पापों की गठरी झटकी ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अशोकवने द्वादशब्दार्या: उपरि देवा द्यधिष्ठित गवाक्षसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

विद्याधर आवे, जिनगुण गावे, बैठक हर्ष बढ़ावत है ।
हैं देव अधिष्ठित, प्रभुवर तिष्ठित, आकर शीश नवावत हैं ।।

ॐ द्वादशद्वार्या: आभ्यन्तरे दुर्गत्रयमध्ये पीठत्रयसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

दोहा

बनी है बारह दरी वहां, अभ्यंतर में जान ।
चौक बीच त्रिकोट है, बीच त्रिपाठ महान ।।

ॐ चतुर्थभूमौ जिनदेहप्रमाणत: द्वादशगुणातुंगाशोकवृक्ष युक्तपीठत्रयसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

तीन पीठ ऊपर लगा, राजा वृक्ष अशोक ।
परम सरस गुणवान है, हरता सबका शोक ।।

ॐ चतुर्थभूमौ विविधशोभायुक्ताशोकवृक्ष संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

हीरा की है जड़ बनी–शाखा बनी है स्वर्ण ।
'स्वस्ति' देख हर्षित हुई, है सुंदर रूप सुवर्ण ।।

ॐ ह्रीं विविधशोभायुक्ताशोकवृक्षसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

पत्र बने पन्ना रतन, खिले लाल के फूल ।
शोभा अतिशय वान है, न करता है भूल ।।

ॐ चतुर्थभूमौ चतुर्वनेष चतुर्भूपवृक्षशोभासंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

त्रिभंगी

चारों विदिशा हैं, स्वच्छ दशा है, चारों वन भी शोभ रहे ।
कुल चार अशोका, हवा का झोंका, देवों का मन लुभा रहे ।।
शोभा है न्यारी, देव संवारी, सब सौभाग्य को जगा रहे ।
'स्वस्ति' हर्षित है, आकर्षित है, शीश चरण में झुका रहे ।।

अशोक वृक्ष पूजा

स्थापना-गीता छंद

त्रैलोक्य दर्शीनाथ मम जीवन सफल कर दो मेरा ।
संसार में दर-दर भटकता, अब शरण पाया तेरा ।।
भगवन् तुम्हीं, जिनवर तुम्हीं, सुख संपदा के नाथ हो ।
मनहर अशोका, पर विराजे, तव चरण में माथ हो ।।

ॐ ह्रीं अशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

गीता छंद

जंजाल में फंसकर प्रभो, निशदिन कमाया पाप है ।
इस पाप मल प्रक्षाल हेतु, तव चरण की जाप है ।।
आग्नेय दिश में है अशोका, जल ले हम पूजा करें ।
संकट हरो सब पाप मेरे, तव चरण वंदन करें ।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्व.स्वाहा।

न चाह है न कोई इच्छा, बस तेरा ही ध्यान हो ।
औ मैं अशोक की छांव बैठूं, मुझको केवल ज्ञान हो ।।
आग्नेय दिश में है अशोका, भाव से पूजा करें ।
संकट हरो सब पाप मेरे, तव चरण वंदन करें ।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्व.स्वाहा।

अक्षय तुम्हीं अविनाशी तुम, अक्षय तुम्हारा धाम है ।
अधिपती बनूं अविनाशी पद का, मिल रहा विश्राम है ।।
आग्नेय दिश में है......

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्व.स्वाहा।

पुष्प मनहर मन लुभावे, काम ने उलझाया है ।
पुष्पों से पूजा हम करें, भक्तों का मन हर्षाया है ।।
आग्नेय दिश में है......

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

पेट मांगे नित्य भोजन, आपकी से पूजा करूं ।
हो जाय क्षय यह भूख मेरी, ध्यान मैं तेरा धरूं ।।
आग्नेय दिश में है......

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

दीप जग मग ज्योति देवा, ज्ञान निज दीपक जले ।
अज्ञान हर विज्ञान पावे, आत्म निज ज्योति जले ।।
आग्नेय दिश में है......

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्व. स्वाहा।

दुष्ट कर्मों ने सताया, जग से हम हैरान हैं ।
हम ध्यान आतम का करे, होवे मेरा कल्याण है ।।
आग्नेय दिश में है......

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्व. स्वाहा।

भाग्य में सौभाग्य न था, फल बिना भटका फिरा ।
मैं खाके जग की ठोकरों को, अब चरण में आ गिरा ।।
आग्नेय दिश में है......

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्व. स्वाहा।

चारित्र ना पालन किया, और ज्ञान मुझसे दूर है ।
औ दृष्टि ना सम्यक हुई, अवगुण भरे भरपूर हैं ।।
आग्नेय दिश में है......

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सप्तपर्ण वन वृक्ष पूजा (नैऋत्य दिशा)

स्थापना-शंभू छंद

सम अवसर जिसमें मिलता है, शुभ समवशरण कहलाता है ।
दुःखों के सागर से निकाल, सुख अमृत पान कराता है ।।
निज की दृष्टि निज में रखते, फिर भी सब जीवों को देखे ।
पावन महिमा को गाकर हम, निज का कारण निज में लेखे ।।

दोहा

सप्त वर्ण वन में प्रभु, है अशोक की छांव ।
दिश नैऋत्य में राजते, देते सब को ठांव ।।

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

तर्ज (चौबीसी पूजा)

मन के मलसे दुर्गंध, निशदिन है आती ।
निर्मलता मन में होय, तो पूजा भाती ।।
है सप्त वर्ण नव दीप, वृक्ष अशोक लगा ।
मैं जलसे पूजूं नाथ, धर्म स्वभाव सगा ।।

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मकड़ी सा जाल बनाय, खुद फंसता जाता ।
चिन्ता ने जलाया नाथ नेक न सुख पाता ।।
है सप्त पर्ण नव दीप, वृक्ष अशोक लगा ।
चंदन से पूजूं नाथ, धर्म स्वभाव सगा ।।

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः चंदनं

निर्वपामीति स्वाहा।

यह आंख होयेगी बंद, फिर भी पद चाहे ।
अक्षय पद की है चाह, मुक्ति पथ राहें ।।
है सप्त वर्ण नव.....

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम है खुशबूदार, फूल तो मुरझाता ।
सुंदर चेतन का रूप, तप से खिल जाता ।।
है सप्त वर्ण नव.....

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

रसना का रस हम घोल, निशदिन पीते हैं ।
तृप्ती ना होती नाथ, फिर भी जीते हैं ।।
है सप्त वर्ण नव.....

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतर की आंख न खोल, बाहर भटक रहा ।
अंतर में ज्ञान प्रकाश, जग में दुःख सहा ।।
है सप्त वर्ण नव.....

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने छिपाया ज्ञान, ढूंढूं मैं बाहर ।
तप से मिटता अज्ञान, करता न आदर ।।
है सप्त पर्ण नव दीप, वृक्ष अशोक लगा ।
चंदन से पूजूं नाथ, धर्म स्वभाव सगा ।।

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्यः धूपं

निर्वपामीति स्वाहा।

हो सपना सुख साकार, यह पुरूषार्थ किया ।
सुख मिले धर्म आधार, यह न ज्ञान लिया ।।
है सप्त वर्ण नव.....

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्य: फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आया था मुट्ठी बांध, कुछ न साथ गया।
तप दर्शन ज्ञान चरित्र, इनसे दूर रहा ।।
है सप्त पर्ण नव दीप, वृक्ष अशोक लगा ।
चंदन से पूजूं नाथ, धर्म स्वभाव सगा ।।

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तअर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिभ्य: अर्घ्यंनिर्वपामीति स्वाहा।

चंपक वन पूजा

वायव्य दिशा

स्थापना-गीता छंद

अग्नि तपाये स्वर्ण को जब, वह खरा हो जाता है ।
यह जीव तप अग्नि में तपकर, शुद्ध शिव बन जाता है ।।
ये पूजा अर्चा और वंदन, ध्यान आतम का करे ।
सार्थक बने इस से ही जीवन, कर्म दुर्गति को हरे ।।

स्थापना (चाल : नरेन्द्रं फनेन्द्र)

ये संसार की माया सबको घुमाये ।
जगत में बचा वो जो प्रभु शर्ण आये ।।
चंपक के चन में अशोका है राजे ।
वायव्य दिशा में प्रभुजी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

हाथों में लेकर के, जल हम चढ़ायें ।
भावों की निर्मलता आके बढ़ायें ।।
प्रभु तेरी पूजा सभी सौख्य देती ।
हरती करम को नहीं दुःख देती ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवन पहेली को सुलझाने आया, अपने प्रभु को मनाने मैं आया ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोंने जीवन को क्षयवत किया है, प्रभु आपसे सौख्य अक्षत लिया है ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रागों के कांटों में निशदिन उलझता, ढल जाये उम्र न फिर भी सुधरता ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम का भोजन कभी नाहीं कीना, रसना रसों का सदा स्वाद लीना ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम में ज्ञान का फैले उजाला, प्रभु तेरे चरणों की फेरूं मैं माला ।

चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।
ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की धूप सदा है सताती, तपस्या करम सेना को है भगाती ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।
ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हाथों की रेखा कर्म फल बताती, पूरी ये बातें सही नाहीं पाती ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।
ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यों से जीवन की ज्योति जलायें, अर्घ्यों की थाली चरण ले के आयें ।
चंपक के वन में अशोका है राजे, वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे ।।
ॐ ह्रीं वायव्य दिशि चम्पक वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: अर्घ्यंनिर्वपामीति स्वाहा।

आम्रवनस्थ जिन पूजा प्रारंभ
ईशान दिशा

त्रिभंगी छंद

हो सम्यक ज्ञानी, त्रिभुवन ध्यानी, ज्ञानामृत पिलवाया है ।
हो करूणा दानी, हितमित वाणी, आनंद फूल खिलाया है ।।
स्थित हो वन में, आम चमन में, भक्त तुम्हें परणाम करें ।
बहे ज्ञान की गंगा, मन हो चंगा, ध्यान तेरा सब कर्म हरें ।।
ॐ ह्रीं ईशान दिशि आम्रवन वृक्षस्थ जिन प्रतिमा: अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू छंद

बहती रहती सरिता हर पल, इससे जल निर्मल रहता है ।
जब जैसे निर्मल भाव बने, शांति से कर्मों को सहता है ।।
आमों के वन में स्थित है, उन जिनवर को करता प्रणाम ।
हो मान गलित मेरा प्रभुवर, जीवन की न हो दुखद शाम ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन ने तन शीतल कीना, पर आतम ताप से भरा हुआ ।
सर्दी में भी मन गरम रहे, पर शीतल धर्म न कभी छुआ ।।
आमों के वन में स्थित है.......

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम अक्षय अविनाशी है, तन तो जीता मरता रहता ।
अक्षत थाली भर ले आया, अक्षय पद से जब है तरता ।।
आमों के वन में स्थित है, उन जिनवर को करता प्रणाम ।
हो मान गलित मेरा प्रभुवर, जीवन की न हो दुखद शाम ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुंदर-सुंदर पुष्पों ने जग, जीवन को नित्य लुभाया है ।
इस काम वासना से छूटे, पुष्पों का थाल भराया है ।।
आमों के वन में स्थित है.......

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मन से कीना वच से कीना, तन से भोजन नित करते हैं ।
पर पेट रहे निशदिन खाली, नैवेद्य समर्पित करते हैं ।।
आमों के वन में स्थित है.......

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक की ज्योति दम दमके, आतम उजियारा ना करती ।
निज ज्ञान दीप की ज्योति जले, इसीलिये दीप अर्पित करती ।
आमों के वन में स्थित है.......

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों कर्मों के घेरे में, आतम कर्मों से भरा हुआ ।
इन कर्मों का ही धुआं उड़े, हमने प्रभु तेरा ध्यान किया ।।
आमों के वन में स्थित है.......

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो अशुभ कर्म फल अशुभ गति, शुभ से शुभ ही मिलता जाता ।
कर्मों को नित करता रहता, फल क्या है ध्यान नहीं जाता ।।
आमों के वन में स्थित है, उन जिनवर को करता प्रणाम ।
हो मान गलित मेरा प्रभुवर, जीवन की न हो दुखद शाम ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत पुष्प चरू, दीपक की ज्योति ले आया ।
आठों द्रव्यों को मिला लिया, अर्घ्यों का संगम है भाया ।।
आमों के वन में स्थित है, उन जिनवर को करता प्रणाम ।
हो मान गलित मेरा प्रभुवर, जीवन की न हो दुखद शाम ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशायाम् आम्र वनवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

चारों ओर चतु भूमि है, वृक्ष फूल फल जान ।
उपवन में जिन राजते, शत् शत् करूं प्रणाम ।।

पद्धरि छंद

उपवन भूमि है अति विशाल, दर्शत मन होता है खुशाल ।
सुंदर-सुंदर वृक्षों के फूल, जाकर के सब कुछ जात भूल ।
वृक्षों की महिमा है अपार, जीवन कर देते हैं निसार ।
आपस में ईर्ष्या द्वेष नहीं, पृथ्वी अंदर की थाह नहीं ।
मानव लंबे हैं पास खड़े, इसीलिये वृक्ष वे कहां बढ़े ।
मानव के साथ में वृक्ष रहे, मरने पर साथ भी यही जले ।
फिर मानव भी दानव बनता, पेड़ों से न शिक्षा लेता ।
वृक्षों में भूप अशोक कहां, इसके नीचे जिन ज्ञान बहा ।
चारों दिश में है चार खड़े, प्रभु के कारण बन जाय बड़े ।
जय तीन पीठ सुंदर महान, शोभे श्री गंध कुटी सुजान।
उस पर सिंहासन है प्यारा, और कमल रचा न्यारा-न्यारा ।
उस पर प्रतिमा शोभा पाये, भक्ति में भक्त वहां जाये ।।
चारों दिश में ही राज रहे, त्रिभुवन के ईश्वर साज रहे ।
जय तीन छत्र फिरता है शीश, दर्शन से मिलता शुभाशीष ।
अठ प्रातिहार्य चमके महान, तीर्थंकर देवें आत्मज्ञान ।
जिनवर के गुण का गान करें, जय जय करके सम्मान करें ।
पृथ्वी फल फूल चढ़ाती है, वीणा यश गान भी गाती है ।
दीपक ये ज्योति प्रणाम करे, ज्ञानी जग का अज्ञान हरे ।
तप करके अमृत पाया है, भक्तों को ज्ञान लुटाया है ।
तीनों लोकों के आप ईश, चरणों में झुकता रहे शीश ।
उपवन की उपमा कौन कहे, उपवन में जाकर शांति लहे ।
उपवन में सुंदर फूल खिले, उपवन में प्रभु का ज्ञान मिले ।
उपवन में जा बन जाते है, सुःखों के फूल खिलाते हैं ।
तुम तपः पूत चिद् शाश्वत हो, आराध्यों के आराधक हो ।
तुम काम क्रोध को जीत लिया, जय राग द्वेष को दूर किया ।
भक्तों के हो तुम कल्पवृक्ष, भक्तों के हो तुम रक्ष-रक्ष ।

तेरे चरणो का वरण करू, चरणों मे आकर शीश धरू ।
'स्वस्ति' उत्थान की राह मिले, बस केवल ज्ञान का दीप जले ।
ॐ ह्रीं चतुर्दिशासम्बन्धि चतुर्थोपवन भूमि वृक्षस्थ जिन प्रतिभाम्य: पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

वन में उपवन में जाय कर, ज्ञान दीप जग जाये ।
सौख्य महा संपत्ति मिले, शत्-शत् शीश नवाय ।।

भगवन कुछ न लेते हैं, देते अमृत ज्ञान ।
जीवन अमृतमय हुआ, बारंबार प्रणाम ।।
समवशरण शुभ पाठ को, जो भी भव्य कराय ।
जीवन चमन खिलाये कर, मुक्ति सुंदरी पाय ।।

।।इत्याशीर्वाद ।।

पंचम भूमि (ध्वज भूमि)

चौपाई

भूमि पंचम गली बताई, बाम दाहिने देखो भाई ।
अंदर द्वार तीसरी वेदी, चार भाग परमाण जु देदी ।।
ॐ ह्रीं पंचमगल्यां वामदक्षिणभागयो: आभ्यन्तरगल्यां चतुर्थ भागप्रमाणान्तरवेदिका संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।
कोट तीसरा भाग चार हैं, स्वर्ण वर्ण शोभे अपार है ।
पंचम भूमि सुंदर भारी, ध्वज फहरे जिन गुण तैयारी ।।
ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुर्थभागस्वर्णमयमहासुन्दरतृतीय सालसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।
भूमि पांचवीं भाग चवालिस, वलय व्यास पहचाने जे ईश ।
वेदी कोट विशाल बने है, नानाविधि चित्राम जजे हैं ।।
ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतु: चत्वारिंशद भागवलयव्यासवेदिकाचित्र

समूह संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

मन हारी चित्रों की क्यारी, तीर्थंकर के भवके धारी ।
चित्र निहार ज्ञान को पाये, चरणों में जा शीश झुकाये ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौसमवरणरणेशालवेदिकायां: तीर्थंकरपूर्वभव चित्र संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

स्वप्नों को जिन माता देखे, राजा से फिर फल को पूछे ।
परंपरा चित्रों की सुंदर, सुंदर चित्र बने हैं अंदर ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिकाचित्र संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

तीर्थंकर का न्हवन करे हैं, क्षीर-नीर से कलश भरे हैं ।
ऐरावत पर चढ़कर जाये, हम चरणों में शीश झुकायें ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ जिनस्नपनचित्र संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चक्रवर्ती की सेना देखो, तीर्थंकर महिमा को लेखो ।
वैभव पुण्य बड़ा भारी है, झुके चरण दुनिया सारी है ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिका चक्रवर्तीविभव चित्रसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

नारायण बलभद्र बनाया, प्रतिनारायण को दर्शाया ।
भवों भवों के चित्र दिखायें, इन चित्रों से शिक्षा पाये ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिकायांनारायणबलभद्रादिविभव चित्र संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

भोग भूमि को भी दिखलाया, उत्तम-मध्यम, जघन्य बताया ।
युगल जोड़े इसमें रहते हैं, तीव्र कषाय नहीं करते हैं ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिकायां भोगभूमियुगलचित्र संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

कल्पवृक्ष वस्तु को देवे, चिंता सारी वे हर लेवें ।
प्रथम स्वर्ग का इन्द्र दिखाया, दूजे तीजे को बतलाया ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ

संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

स्वर्गों के मनहारि चित्र हैं, पुण्य की महिमा भी विचित्र है ।
इन्द्राणी प्रभु सेवा करती, गहने रतनमय तन पर धरती हैं ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ प्राक्चतुःस्वर्गमध्यमानस्तम्भे सुन्दरवस्त्रायुक्त मंजूषाद्वय संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

रत्नों की जंजीर चढ़ायें, आभूषण स्वर्गों से लाये ।
वस्त्राभूषण जहां से आवे, मंजूषा विशेष कहावे ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ वेदिकाशालकंगूरागुरजादिसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

खुश हो वस्त्रों को पहनाती, आभूषण से उन्हें सजाती ।
यही चित्र मन को हरते हैं, समवशरण सुंदर करते हैं ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ कोटशालवेदिकोपरि त्रितलदेवीदेवयुक्त विष्ठर संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

आगे-आगे सागर जानो, बनी कुभोग भूमि को मानो ।
वन मानुष जैसे बनते हैं, हाथी, घोड़ा, बैल घने हैं ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ सिंहादिदशभेदचिन्हयुक्तध्वजासंयुक्त समव-सरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

वेदी में है चित्र बनाये, आस-पास सुंदर झलकाये ।
वेदी कोट विशाल के ऊपर, गुरज कंगुरा बने हैं तापर ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ एकदिशासम्बन्धशीत्यधिकसहस्त्रध्वजासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

अडिल्ल छंद

ऊपर सुंदर बैठक जानिये, उन पर सुंदर चित्र बने हैं मानिये ।
कलशा रवि ध्वजा लहराये जी, जय जय करते देव देवियां आये जी ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षुत्रिशतविंशत्यधिकचतुःसहस्त्रमहाध्वजासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

ध्वजा भूमि में ध्वज ही ध्वज को देखिये ।
सब पर सुंदर चिन्ह बने हैं पेखिये ।।

सिह हाथी वृष मोर गनी माला बनी ।
चक्र हंस गरूड़ ओ देव कमल के भेदही ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशासु महाध्वजामि:सह 466560 लघुध्वजासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

एका ध्वजा पर चिन्ह एकही है बना ।
इकसो आठ ध्वजा ही क्रम से है तना ।।
एक सहस आठ ध्वजा साथ लहरायेजी ।
हो प्रसन्न हम मिलकर शीश झुकाये जी ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुर्दिशासु 470880 ध्वजासंयुक्तसमवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चारों ओर ध्वजा की पंक्ति शोभती ।
देव देवियां मिलकर यश को गावती ।।
सहस-सहस से वह शोभा को जानिये ।
मिले शांति प्रभु के चरणों में मानिये ।।

ॐ ह्रीं वृषभचिनस्य अष्टाशीत्यंगुलप्रमाण सुवर्णमयध्वजास्तम्भ संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

महाध्वजा के संग में लघु को जानिये ।
चार लाख छोटी चहूं दिश की मानिये ।।
महिमा समवशरण की अनुपम है महा ।
वर्णन कैसे करूं शक्ति भी है कहा ।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ ध्वजासमूहसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चार सहस अरू तीन सो बीस को मानिये ।
महा ध्वजा चारों दिश की परमानिये ।।
ध्वज देखत मन हर्षत होय विभोर जी ।
लहर लहर लहराये करती हैं वे शोर जी ।।
पीत वर्ण हो गया गगन के जानिये ।

'स्वस्ति' वर्णन गाये बात ये मानिये ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ विविधरचना संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

ध्वजा के खंभे स्वर्णमयी हैं शोभते ।
सुंदरता जीवों के मन को मोहते ।।
अट्ठासी अंगुल के बने प्रमाण जी ।
चरणों में प्रभु के मिलता है सार जी ।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ विविधरचना संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

ऊपर का वह दण्ड मणिमय है बना ।
धनु पच्चीस के अंतर में लहरे ध्वजा ।।
लहर लहर लहराये ध्वजा शुभ मानिये ।
प्रभु चरणों का है प्रताप यह जानिये ।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ विविधरचना संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चौपाई

सुंदर भूमि ध्वजा है सुंदर, बाल वापि गिरी जाय समंदर ।
जाते वहां सभी नर नारी, देव करें क्रीड़ाएं न्यारी ।।
वृक्ष खड़े फल फूल सुजानो, झुकी डालियां तीर कमानो ।
कल्प वृक्ष की बहती धारा, मनवांछित होवेगा सारा ।।
मुनिवर वहां विहार भी करते, सौख्य देते दोषों को हरते ।
दुष्ट कर्म के आप विनाशी, इससे हुऐ आप अविनाशी ।।
भव्य जीव चरणों में आवे, आकर तेरा ध्यान लगावे ।
कोई 'स्वस्ति' त्रिकाल ही ध्यावे, आकर वे शीश झुकावे ।।

दोहा

पंचम भूमि दर्श से, पंचम गति को पाये ।
पंचम ज्ञान मिले मुझे, शत् शत् शीश नवाये ।।

पंच महाव्रत धार कर, पंच पाप विनशाय ।
पांचों समिति पालकर, चरणन शीश झुकाय ।।

समवशरण षष्ठम भूमि अर्घ्य

त्रिभंगी छंद

षष्ठी भूमि की गली, दाई बायी ये जान ।
अंदर द्वारके पास को, नाटक शाला मान ।।

ॐ ह्रीं षष्ठ भूमेः गल्यां वामदक्षिण भागे अन्तर गल्याः द्वारे नाटयशाला संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व.

तीजो कोटके भाग में, चौथी वेदी जान ।
भूमि चवालिस में वलय, व्याप्त दृगों को आन ।।

ॐ ह्रीं तुर्यभागतृतीयसालभागद्वयचतुर्थवेदिकामध्ये चतुःचत्वा- रिंशद्भागबलयव्यासभूमि संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

तृतीय कोट कंचन वरण, ध्वज कंगुरा ज्ञान ।
तिहरी बैठक गोख में, नये देवधर ध्यान ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्ततृतीयसालसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चतुवेदी है रूपवती, पीत वर्ण परमाण ।
बनी बैठकें गुरज में, बारंबार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्त चतुर्थवेदिकासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

बीच भूमि वर्णन सुनो, विदिशा वन के मांहि ।
कल्पवृक्ष भी शोभते, दुःख संकट कुछ नाहि ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमिं परितः कल्पवृक्ष संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

मन वाछित वस्तु दिये, कल्पवृक्ष के वृक्ष ।
दश भेदों के सहित हैं, कार्य करन में दक्ष ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ मनोवांछितवस्तुदायक कल्पवृक्षसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चौपाई

सीखों तुम वृक्षों से देना, कभी किसी से कुछ न लेना ।
कल्पवृक्ष मन वांछित देते, नहीं किसी से कुछ भी लेते ।।
बर्तन देते, घर भी देते, आभूषण औ वस्त्र भी देते ।
भोजन पानी जग मग ज्योति, सुंदर दे माला के मोती ।।
बाजे दे खुशिया दिखलावें, दीपक तमको दूर भगावे ।
कल्पवृक्ष सम न है कोई, 'स्वस्ति' यह सब पुण्य कमाई ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमि दशप्रकार कल्पवृक्षसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

नरेन्द्र छंद

चारों दिश में कल्पवृक्ष हैं, मंदिर भी सुखकारी ।
ताल वापिका शोभा पाये, शोभित है त्रिपुरारी ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ वापिकाद्रहमन्दिर संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चन्द्रकान्त स्फटिक शिलामणि, इस पर मुनिवर राजे ।
ध्यान आतमा का नित करके, निज आतम में साजे ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ ध्यानस्थमुनिगणयुक्तचन्द्रकान्ताशिलासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

कर्मराज यह मोह बलि है, इस पर आप प्रहारी ।
महा पुण्य मय संयम धारी, कर्म मेघ को टारी ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ आत्मध्यानयुक्तपुण्यसम्पादकमहामुनिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

समवशरण में भविजन आवें, गुरू उपदेश सुनावें ।
ऐसे आचारज गुरू वरको, हम सब शीश झुकावें ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ विविधस्थानेषु धर्मोपदेशकदिगम्बयतिससंयुक्त

समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

सुंदर पर्वत बने वहां पर, उन पर मुनिवर राजे ।
ध्यानाग्नि में पाप नष्ट कर, आतम में ही साजें ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ ध्यानारूढ़यतियुक्तपर्वसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

क्रीड़ा करने देवों के गण, उस वन में भी आवें ।
पूजत मुनिवर के ये चरणा, उनका मन हर्षावें ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ स्वरोपकारदिगम्बरयतिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चारों दिश में चार ही वन है, भूप मध्य में रहता ।
दर्शत पाप भगे सब ही के, झरना सुख का बहता ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ चतुर्दिशासु वनमध्ये चतुभूपवृक्षसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

मन वच काय त्रियोग सम्हारो, भूप वृक्ष को देखो ।
बाहर दरी वहां पर रहती, अतिशय प्रभु का लेखो ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तद्वादशद्वारीसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

कुरसी जैसी बनी वहां पर, स्वर्ण रतनमय शोभे ।
पुण्यवान जाकर सुख भोगे, पापी कुछ न देखे ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तद्वादशद्वारीसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

ऊंचे-ऊंचे शिखर बुलाते, जग मग मणियां चमके ।
उन पर ध्वजा लहर लहराती, आतम प्रभु का दमके ।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रगुणगायकदेवयुक्तद्वारशद्वारीसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

सुंदर-सुंदर, ऊंचे-ऊंचे, देव गुणों को गाते ।
अतिशय महिमा तेरी सुनकर, दर्श को हम भी आते ।।

ॐ ह्रीं द्वादशद्वायमि् सालत्रयमध्य सिंहासनत्रयपीठत्रयसंयुक्त

समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

द्वादश द्वार है शोभा पाये, चौंक मध्य में आवे ।
कोट तीसरा पीठ तीन हैं, सिंहासन मन भावे ।।

ॐ ह्रीं पीठत्रयोपरि भूपवृक्षसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

भवियों की यह पीठ है, जग मग शोभा पावे ।
तीनों के ऊपर भी देखो, भूप वृक्ष झलकावे ।।

ॐ ह्रीं विविध रचनायुक्त भूपवृक्ष संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

जड़ हीरे के बनी हुई है, मणिमय शाखा जानो ।
पन्नों के पत्ते हैं शोभित, चारों सीधे मानो ।।

ॐ ह्रीं विविधपुष्पयुक्त भूपवृक्ष संयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

जिनवर के सम ऊंचा समझो, बारह गुना जानो ।
शोभा सुंदर समवशरण की, मौहे मन ये मानो ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ जिनशरीरद्वादशगुणोच्चभूपवृक्षसंयुक्त समव-सरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

वृक्षों के चारों दिशा में, जिन दर्शन अपना देवें ।
मानस्तंभ से मान गलित हो, कर्म आपना खेवें ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमिचतुर्दिशा चतुः चतुः मन्दिरस्थित भूपवृक्षसंयुक्त समव- सरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

एक वृक्ष का वर्णन करके, चारों दिश ये जानो ।
तीर्थंकर का वैभव है ये, बातें प्रभु की मानो ।।

ॐ ह्रीं प्रथम भूपवृक्ष समानशेष भूपवृक्षत्रय संयुक्त समव-सरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

मेरू वृक्ष आग्नेय दिशा में, नैऋत्य में मंदार खड़ा ।
वायव्य में संतान संतति, पारिजात ईशान बड़ा ।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ चतुर्विदिशासु मेरूवृक्षादिचतुर्भूपवृक्षसंयुक्त समव- सरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

मेरूभूप कल्पवृक्ष जिनपूजा

स्थापना (शंभु छंद)

तुम परम ज्योति तुम परम धाम, परमेश्वर तुम परमात्मा हो ।
तुम भक्तों के हो ज्ञान दीप, सच्चे भक्तों की आत्मा हो ।।
कर्मों के बादल घिर आये, आकर प्रकाश को प्रगटाओ ।
शुभ समवशरण पूजा करते, हृदय में दीप जगा जाओ ।।

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू छंद

कुछ भेद भाव सा प्रकट हुआ, शुभ धर्म ध्यान में भेद किया ।
धर्मों के तत्व को ना समझा, जल चढ़ा प्रभु का ध्यान किया ।।
आराध्य देव आराधक हम, भावों से पूजा करते हैं ।
राजा मेरू है कल्पवृक्ष, प्रभु दर्शन कर्म को हरते हैं ।।

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवन का बोझा ढोता हूं, नीती रीति से दूर रहूं ।
चंदन से चरणों को पूजूं, शीतलता दो दुख नाही लहूं ।।
आराध्य देव आराधक हम......

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पीड़ित है सारी वसुन्धरा, स्थिरता मन में ना होती ।
भावों का अक्षत हम लाये, यह बीज मुक्ति का बो देती ।।
आराध्य देव आराधक हम......

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः अक्षतं

निर्वपामीति स्वाहा।

रागों लिपटा रहता हूं, उसमें ही आनंद आया है ।
सुंदर पुष्पों को हम लाये, विषयों ने ही भटकाया है ।।
आराध्य देव आराधक हम, भावों से पूजा करते हैं ।
राजा मेरू है कल्पवृक्ष, प्रभु दर्शन कर्म को हरते हैं ।।

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोत्तम भूख ये मिट जाये, यह भूख तो कर्म कराती है ।
नैवेद्य चरण में रखते हम, यह क्षुधा रोग नशवाती है ।।
आराध्य देव आराधक हम......

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषियों ने आतम ध्यान किया, निज केवल ज्ञान जगाया है ।
यह दीपक ज्ञान चढ़ाते हैं, तम हटा ज्ञान प्रगटाया है ।।
आराध्य देव आराधक हम, भावों से पूजा करते हैं ।
राजा मेरू है कल्पवृक्ष, प्रभु दर्शन कर्म को हरते हैं ।।

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों कर्मों के सर्प डसे, कर्मों की मार भी सहता हूं ।
तपसे कर्मो का धुआं उड़े, अग्नि में धूप मैं खेता हूं ।।
आराध्य देव आराधक हम......

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्यासी हैं अखियां फल पाये, भक्तों की तुम आवाज सुनो ।
तपके फल फूल चढ़ते हैं, तुम भक्ति का ही साज सुनो ।।
आराध्य देव आराधक हम......

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः फलं

निर्वपामीति स्वाहा।

मानव में चिंता भरी हुई, भक्ती को न मन शुद्ध हुआ ।
अर्घ्यों का थाल सजा लाये, पाकर के हर्षित आज हुआ ।।
आराध्य देव आराधक हम, भावों से पूजा करते हैं ।
राजा मेरू है कल्पवृक्ष, प्रभु दर्शन कर्म को हरते हैं ।।

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुजिन मन्दिर प्रतिमाभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदार भूप कल्पवृक्ष जिनपूजा

स्थापना (त्रिभंगी छंद)

संतोष नहीं, सुख चैन नहीं, नैतिकता मुझसे दूर रहे ।
तप त्याग नहीं, वैराग्य नहीं, निजध्यान जरा भी नाही रहे ।।
भगवान चरण, शुभ समवशरण, हम भक्ति नित ही करते हैं ।
तप त्याग वरण, सब कर्म हरण, पुण्यों से झोली भरते हैं ।।

कल्पवृक्ष मंदार है, जिन पर जिनका वास ।
विश्व वैद्य जिनदेव से, की वरदान आस ।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमा: अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

त्रिभंगी

यह मोह का जाला, आतम काला, निशदिन करता रहता है ।
आतम बिसराया, ज्ञान न आया, कर्मों का फल फलता है ।।
मंदार में भगवन, ज्ञान का उपवन, दर्शन से आशीष मिले ।
कल्पों की छाया, आनंद आया, आतम में शुभ ध्यान पले ।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्य: जलं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय चदन, ध्यान से वदन, चरणो मे लेकर आया ।
करूणा के सिंधु, हम हैं बिंदु, तुमको सागर सम पाया।।
मंदार में भगवन, ज्ञान का उपवन, दर्शन से आशीष मिले ।
कल्पों की छाया, आनंद आया, आतम में शुभ ध्यान पले ।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम देव विलक्षण, है शुभ लक्षण, अक्षत से पूजा करते ।
उल्लास हमारा, ध्यान तुम्हारा, संकट जीवों के हरते ।।
मंदार में भगवन.....

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रागों की उलझन, तपसे सुलझन, दर्शन से यह जान लिया ।
पुष्पों की माला, लाया लाला, पूजा का सुख पाय लिया ।।
मंदार में भगवन.....

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ये तन का भोजन, इन्द्रिय भोजन, तृप्ति न दे पाता है ।
नैवेद्य चढ़ाऊं, शरण में आऊं, सुख शांति को पाता है ।
मंदार में भगवन.....

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग मग है ज्योति, ज्ञान का मोती, हृदय उजाला करता है ।
दीपक की थाली, इसमें लाली, यह अंधियारा हरता है ।।
मंदार में भगवन.....

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की लीला, ज्ञान रसीला, संकट सारे शीघ्र हरो ।

यह धूप समर्पित, भाव है अर्पित, कर्मों का तुम ध्वस करो ।।
मंदार में भगवन, ज्ञान का उपवन, दर्शन से आशीष मिले ।
कल्पों की छाया, आनंद आया, आतम में शुभ ध्यान पले ।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्य: धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल फूल सुहाते, स्वयं ही खाते, हरदम जी ललचाता है ।
पर कर्मों का फल, इसका न हल, आतम में बच पाता ।।
मंदार में भगवन.....

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्य: फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आनंद झरोखा, ज्ञान अनोखा, अमृत तुम बरसाते हो ।
मैं अर्घ्य चढ़ाऊं, ध्यान लगाऊं, मुक्ती पथ बतलाते हो ।।
मंदार में भगवन.....

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति मंदार वृक्षस्थ जिनपूजा समाप्त इत्याशीर्वाद पुष्पांजलि

संतान भूप कल्पवृक्ष जिनदेव पूजन

(वायव्य दिशा)

स्थापना

दोहा

जिनवर के दर्शन करें, समवशरण में जाये ।
कल्पवृक्ष संतान है, शत् शत् शीश नवाये ।।

ॐ ह्रीं सन्तान भूप वक्षस्य चतुर्दिशाना जिन प्रतिमा: अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

शेर चाल (हे दीन बंधू)

हे विश्वदेव वंद्य विश्व देव शरण आये हैं ।
गुणगान करें, पूजा करें, नीर लाये हैं ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणीयों को दान देते हैं ।
संतान के जिन देव का भी दर्श लेते हैं ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशाया: सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्य: जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार में ईर्ष्याग्नि से जलता रहा सदा ।
ले चंदनादि भाव सहित पूजता मुदा ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों........

ॐ ह्रीं वायव्य दिशाया: सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्य: चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सुनता रहा उपदेश किन्तु ज्ञान न किया ।
मैं अक्षत से पूजता हूं, हर्षमय जिया ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों........

ॐ ह्रीं वायव्य दिशाया: सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्य: अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रिश्तों की डोरियों में बंध राग मैं फंसा ।
रोता हूं कर्म के उदय कर्मों की है सजा ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों........

ॐ ह्रीं वायव्य दिशाया: सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्य: पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खाता रहा पीता रहा, पर अंत न पाया ।
होकर करके दु:खी हे, प्रभो मैं पूजने आया ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों........

ॐ ह्रीं वायव्य दिशाया: सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्य: नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न ज्ञान का दीपक जला, अधेरे में भटका ।
मोही बना पिटता रहा मैं मोह में अटका ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों को दान देते हैं ।
संतान में जिन देव का भी दर्श लेते हैं ।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशाया: सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्य: दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की श्रृंखला पड़ी है पांव में मेरे ।
मैं धूप चढ़ा अर्ज करूं चरण में तेरे ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों........

ॐ ह्रीं वायव्य दिशाया: सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्य: धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अच्छा करूं अच्छा मिले, ऐसा ही है होता ।
पूरब में किये कर्म के, फल आज भी पाता ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों........

ॐ ह्रीं वायव्य दिशाया: सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्य: फलं निर्वपामीति स्वाहा।

चरणों का मिले आसरा, मैं ध्यान लगाऊं ।
पा मुक्ति का ये रास्ता मैं अर्घ्य चढ़ाऊं ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों........

ॐ ह्रीं वायव्य दिशाया: सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति सन्तान भूप वृक्षस्य जिन पूजा समाप्त इत्याशीवार्द

पारिजात भूप कल्पवृक्ष जिनपूजन

(ईशान दिशा)

स्थापना

कल्पवृक्ष की भूमि में, भूप वृक्ष परमान ।
पारिजात शुभ नाम है, विदिशा में ईशान ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमा: अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

गीता छंद

अज्ञान मल यह दूर होवे, ज्ञान जल को ले लिया ।
निज आत्म गंगा जल नहाये, भव को शुभ यह कर लिया ।।
यह पारिजात वृक्ष सुंदर, जिन वहां पर दर्श दे ।
जिनवर महल जा पूजते, आतम यहां पर हर्ष ले ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्य: जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सब ताप शीतल ही बने, निज आत्म दर्शन को करूं ।
तेरे चरण को पूजकर, निज आत्म सिद्धि को वरूं ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर........

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्य: चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्र सम उज्जवल अखंडित, अक्षतों का थाल है ।
आत्मा उज्ज्वल बने, यह पाप जंजाल है ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर........

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्य: अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गति में वासना का, जाल है फैला हुआ ।
ये ही जग में है घुमाये, आत्म धन को ना छुआ ।।
यह पारिजात वृक्ष सुंदर, जिन वहां पर दर्श दे ।
जिनवर महल जा पूजते, आतम यहां पर हर्ष ले ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्य: पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भोज्य यह न पेट भरता, न किन्तु मन ही शान्त हो ।
तन मन प्रभुवर भूख मेटो, आतम प्रभा प्राशांत हो ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर........

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्य: नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब ज्ञान न हो अंध बनते, कर्म गति में जा फिरे ।
जग मग जगे जब ज्ञान दीपक, तो जगत का तम हरे ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर........

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्य: दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टी न अध्यात्म में, अभिमान ये झुकता नहीं ।
परद्रव्य में ही रत रहा, निज में कभी टिकता नहीं ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर........

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्य: धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पना में मोक्ष चाहूं, पर नहीं चारित्र है ।
शुभ कार्य ही शुभ फल को देते, धर्म सबका मित्र है ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर........

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्य: फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोपरि है सिद्ध पदवी, जिनकी हम पूजा करें ।
औं अर्घ्य चरणों में चढ़ाऊं, कर्म सारे वे हरें ।।

यह पारिजात के वृक्ष सुदर, जिन वहा पर दर्श दे ।
जिनवर महल जा पूजते, आतम यहां पर हर्ष ले ।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्य जिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ चारों भूप वृक्ष संबंधी जयमाला

छटवी भूमी वृक्ष की, सुंदरता गुणखान ।
मनवच काया से सुनो, बारंबार प्रणाम ।।

पद्धरि छंद

जय मेरूवृक्ष उत्तम सुजान, वृक्षों में राजा के समान ।
शीतलमयी तरूवर की छाया, मेरू वृक्षों की शुभ माया ।।
चारों दिश में है चार मान, जिनवर बैठे जिनपर महान ।
जय गंध कुटी शुभ गंध देय, जग मग जोती तम को हरेय ।।
रत्नोंमय सिंहासन प्यारा, प्रभु रूप दिव्य शोभे न्यारा ।
वृक्षों ने छाया फैलाई, भक्तों ने छाया है पाई ।।
जय चमर ढुरे आनंद देय, उज्जवल कांती मनको हरेय ।
अठ प्रातीहार्य शोभा बढ़ाये, चरणों में आकर सिर नवाये ।।
देवों ने प्रभु गुणगान किया, जिनवर का शुभ सम्मान किया ।
पूजा भक्ति में ताल देय, सब हरष-हरष ता थेई करेय ।।
इक भूप वृक्ष इक दिशा होय, चारों दिश में जिन दर्श देय ।
जिन मंदिर सोलह दर्श जायें, पापों के मेघों को हटाये ।।
दर्शन से तत्क्षण पाप नष्ट, मिट जाये सारे दु:ख कष्ट ।
चारों गतियों में घूम रहे, मोही बनकर के झूम रहे ।।
आठों कर्मों ने लिया घेर, आठों कर्मों ने किया ढेर ।
कर्मों की लीला न्यारी है, कर्मों की ही तैयारी है ।।
ये कर्म-कर्म बुलवाते, जीवों के नाच नचाते हैं ।
तुमने कर्मों को छोड़ा है, कर्मों से नाता तोड़ा है ।।
संकल्प हमें भी लेना है, तप में ही ध्यान को देना है ।

तप अग्नि मे ही कर्म जरे, तप कर्मों के हो मेघ हरे ।।
तप द्वारा तुमको पाना है, चरणों तेरे आना है ।
'स्वस्ति' गुणगान को गाती है, चरणों में शीश झुकाती है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशि पारिजात भूप वृक्षस्थ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

समोवशरण का दर्श है, तीर्थंकर भगवान ।
है कर्म बंध से छूटकर, पहुंचू शिवपुर धाम ।।
प्रीती चरणों से करूं, चरण नहीं शिवधाम ।
चरण शरण को पायेकर, बारम्बार प्रणाम ।।

सप्तम भूमि वर्णन प्रारंभ

शंभु

सप्तम भूमि स्तूप बने, रत्नों मय राशि शोभित है ।
शुभ समवशरण सुंदर रचना, लख भविजन होते मोहित हैं ।।
शुभ द्वार सु सुंदर चौथी वेदी, समवशरण में साज रही ।
कंगुरा लटके घंटी बाजे, उपमा अद्‌भुत राज रही ।।

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि गल्यास्तूप काम दक्षिणभागे अन्तर गल्याः द्वारे आभ्यन्तः चतुर्थ वेदिका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चौपाई

वेदी में चित्रों की रचना, पाप करम से ही है बचना।
चित्र यहां पर ज्ञान सिखाये, दर्शन कर सबही मुस्काये ।।

ॐ ह्रीं विविधचित्रयुक्तचतुर्थवेदिकासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

मुनिवर ध्यान लगाकर ठाड़े, सर्दी गर्मी या हो जाड़े ।

पर्वत पर जा ध्यान लगाया, ऐसे चित्र ने ज्ञान सिखाया ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ चतुर्थवेदिका चतुर्थशालमध्ये धर्मोपदेशकयति चित्रसंयुक्तसमवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चलते हुए भूमि वे देखे, चलते-चलते आतम लेखे ।
आतम से आतम में रहते, आतम में रह परिषह सहते ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ चतुर्थवेदिका चतुर्थशालमध्ये आत्मलीन दिगम्बरयतिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

लौकान्तिक वैराग्य बढ़ाये, ऐसे सुंदर चित्र दिखाये ।
नभ में मेघ घटा उठ आई, दिव्य दिवाकर छिपता भाई ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ नानाविधिचित्रचित्रितचतुर्थवेदिकासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

जो सूरज आकाश में चमके, धरती पर उजियारा दमके ।
सप्त रंग का धनुष बना है, मानो सुंदर धनुष तना है ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ चतुर्थशालचतुर्भागस्वेतवर्णचतुर्थवेदिका संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

मेघ ही नभ में काले-काले, बिजली चमके हो उजियाले ।
चित्र प्रकृति के रंग दिखाये, इन सबमें वैराग्य बढ़ाये ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ द्वाविंशतिभागवलयव्यासंयुक्त मन्दिर-षड्क्तिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चौथा कोट श्वेत रंग भायो, चौथी वेदी को दर्शाओ ।
हीरा जिन मंदिर चमकाये, इन्द्र महल आकर बनवाये ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ विविधरचनायुक्त जिनमन्दिरसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

पंक्ति में तब मन्दिर सोहे, वलय व्यास बाईस भी मोहे ।
स्वर्ण खंभ हीरे के जड़े, मंदिर के आगे हैं खड़े ।।

ॐ ह्रीं एवम्बिधानेकरचनासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

बैठक में भक्तों का मेला, देव देवियां करती रेला ।

परदा मोती झालर शोभे, विद्याधर सबका मन मोहे ।।
ॐ ह्रीं सप्तभूमौ मन्दिर मध्यचतुष्कोपरिमण्डपसंयुक्त समवसरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

ऊंचे-ऊंचे शिखर सुहाने, कलशा सुंदर लगे चढ़ाने ।
उस पर ध्वजा लहर लहराये, मानो भव्य को पास बुलाये ।।
ॐ ह्रीं सप्तभूमौ मध्यचतुष्कोपरि मण्डपसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

मंदिर बहुत भक्त बहु अ ावे, सब में अपनी भक्ति दिखावे ।
बीन बजा सुरताल मिलावे, ले मृदंग ऊंचे स्वर गावे ।।
ॐ ह्रीं सप्तभूमौ मध्यचतुष्कोपरि मण्डपसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

नृत्य करे जिनवर के आगे, पाप वहां से शीघ्रही भागे ।
महिमा भगवन सुर नर गावे, तो भी न पूरी हो पावे ।।
ॐ ह्रीं सप्तभूमौ श्री मण्डपसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

दोहा

मंदिर मध्य में देखिये, चौक है कुरसीदार ।
रत्न जड़ित सोपान है, होवे नित्य बहार ।।
ॐ ह्रीं सप्तभूमौ श्रीमण्डपे केवलिजिनसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

एक सहस खम्बों बने, ऊपर चौक प्रमाण ।।
मंडप सुंदर साजता, बारंबार प्रणाम ।।
ॐ ह्रीं सप्तभूमौ श्रीमण्डपे श्रुतकेवलिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

द्वार जहां तोरण बने, सुंदर रत्नों माल ।
झक झक ज्योति होत है, पुष्प बनेगा लाल ।।
ॐ ह्रीं सप्तभूमौ विविधरचनासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

गध कुटी सुदर सुभग, त्रय सिहासन धार ।
तीन छत्र शिरपर फिरे, केवल ज्ञान बहार ।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ युक्तविविधरचनासंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

श्री मंडप श्रुत केवली, देते ज्ञान महान ।
ज्ञान दीप जलता वहीं, बारम्बार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

जिनवाणी की वाणी को, जन जन देय सुनाय ।
श्री मंडप शुभ भूमी हैं, 'स्वस्ति' भव्य ही आय ।।

ॐ ह्रीं संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

जितना हमको ज्ञान था, उतने लेख लिखाये ।
वचन न पूरण कह सके, प्रभुवर गुण प्रगटाये ।।

ॐ ह्रीं संयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

अथ केवल ज्ञान पूजा

दोहा

स्थापना (शंभु छंद)

**चार घातिया घात के स्वामी, केवलज्ञान को पाया है ।
सप्तम भूमी में आन विराजे, आतम आनंद छाया है ।।
सुरनर मिल सब पूजा करते, मुझको भी ज्ञान का दान मिले ।
केवलज्ञानी मैं बन जाऊं, आतम आनंद का फूल खिले ।।**

ॐ ह्रीं केवलज्ञान संयुक्तजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

छंद जोगी रासा

मम ज्ञान पे परदा डाले करम, सच्चा मुझको न ज्ञान हुआ ।

अच्छी बातो को भूल जाये, निर्मल होने को जल लाये कुआ ।।
केवलज्ञानी केवल धारक, केवल पाने पूजा करते ।
शुभ समवशरण में आकर के, चरणों में मस्तक हम धरते ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्य: जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्षु से आतम न दिखता, आतम दर्शन हो ध्यानी को ।
शुद्धोपयोग में लीन होय, शीतल आनंद हो ज्ञानी को ।।
केवलज्ञानी केवल धारक......

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्य: चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का फल सुख दु:ख होता, सुख दु:ख में हंसते रोते हैं ।
पुरूषार्थ करें निज भक्ति का, अक्षय आतम को पाते हैं ।।
केवलज्ञानी केवल धारक......

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्य: अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

हर वस्तु से जग मोह करे, मोही माया का जाल कसे ।
कर्मों के राजा बन बैठे, पुष्पों सम रोते और हंसे ।।
केवलज्ञानी केवल धारक......

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्य: पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गतियों में बंधन है, यह आयु कर्म का खेल रहा ।
हर गति में बस भोजन कीना, सम्यक् पुरूषारथ नही गहा ।।
केवलज्ञानी केवल धारक......

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्य: नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन चित्र विचित्र बने नूतन, मर मर के तन को धरते हैं ।
बाहर देखे अंदर तम है, दीपक से पूजा करते हैं ।।

केवलज्ञानी केवल धारक, केवल पाने पूजा करते ।
शुभ समवशरण में आकर के, चरणों में मस्तक है धरते ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्य: दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊंचा नीचा है कर्म करें, ऊंचा बन नीचा काम किया ।
कर्मों का धुआं उड़ाने को, प्रभुवर तेरा है नाम लिया ।।
केवलज्ञानी केवल धारक......

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्य: धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

दूजे को अगर सुखी देखूं, ईर्ष्या में मन जलता रहता ।
कर्मों के फल को ना जाने, जग के दुख को सहता रहता ।।
केवलज्ञानी केवल धारक......

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्य: फलं निर्वपामीति स्वाहा।

विघ्नों ने कार्य बिगाड़ा है, यह अंतराय निज शत्रु बना ।
अर्घ्यों का थाल चढ़ाऊं मैं, छाया कर्मों का मेघ घना ।।
केवलज्ञानी केवल धारक......

ॐ ह्रीं समवशरणस्य केवलि जिनप्रतिमाभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

जय पाने जय बोलते, जयमाला गुणखान ।
केवल ज्ञान ही जय करे, शत् शत् बार प्रणाम ।।

पद्धरि छंद

हे परम ज्ञान है परम ध्यान, है परम पिता तुमको प्रणाम ।
तुम विश्व वंद्य तुम विश्व जीत, प्रभुवर तुम सबके हुये मीत ।।
घर वैभव तज तुम जोग धरा, आतम में आनंद ज्ञान भरा ।

तुम मात-पिता का मोह तजा, आतम से आतम राम भजा ।।
वस्त्राभूषण जग को दीना, गुण आभूषण धारण कीना ।
हिंसा त्यागी तपको धारा, कर्मों का राजा भी हारा ।।
तुम क्रोध से है नाता तोड़ा है, तुम क्षमा भाव को जोड़ा है ।
माया की छाया दूर रहे, बाहर जाकर के कपट सहे ।।
संयम के फूल खिलाये हैं, गुण चिंतन जब प्रगटाये हैं ।
यह धर्म अहिंसा प्यारा है, सबको दीना यह नारा है ।।
तप सत्य मयी तुम वाणी है, जीवों की जग कल्याणी है ।
ग्रह भी विग्रह को न करते, चरणों में आकर के झुकतें ।।
तीर्थंकर के ही पास रहे, प्रभु के अतिशय दिन-रात बहे ।
रचना कुबेर ही करता है, शुभ समवशरण को भरता ।।
हीरा-मोती पन्ना मुक्ता, है सर्वश्रेष्ठ वे ही वक्ता ।
स्फटिक मणी दिवाल बनी, देवों की आई भीड़ घनी ।।
द्वारे पर मानस्तम्भ बना, मानी जन का सब मान गला ।
सीढ़ी पर अतिशय होता है, पग धरते दर्शन होता है ।।
रोगी रोगों को खोता है, पुण्यों का नर्तन होता है ।
केवलज्ञानी अतिशय कारी, यह ज्ञान की महिमा है न्यारी ।।
दर्पणवत् ज्ञान में दिखता है, आतम का स्वाद भी चखता है ।
भगवन मेरी विनती सुनना, 'स्वस्ति' के मन हर क्षण रहना ।।

ॐ ह्रीं सप्तम भूमौ केवलज्ञान जिनेन्द्राय पूर्णार्घं निर्व. स्वाहा।

दोहा

निर्मोही जिन देव तुम, मोहे हैं जग जीव ।
चरण शरण जब भी मिले, सम्यग्दर्शन नीव ।।
दर्पणवत् तुम ज्ञान है, राग रहे न द्वेष ।
वीतरागता के धनी, वीतरागता वेश ।।

।। इत्याशीर्वाद ।।

नवस्तूप पूजा (पूरब दिशा)

स्थापना

गीता छंद

प्राची दिशा में लालिमा, जग को अजब संदेश दे,
जागो उठो हे भोले प्राणी, यह नया उपदेश दे ।
पूरब दिशा स्तूप नव है, जिनप्रभु जी राजते,
हो सौख्य धन शांति सभी को, कर्म सब ही भाजते ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

चौपाई

जल ने मल को दूर हटाया, ज्ञान ने जल का कार्य निभाया ।
कर्म मैल मेरा धुल जावे, नवस्तूप की पूजा गावे ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमामाभ्यः जलं निर्व. स्वाहा।

चंदन चंदा सम शीतल है, कर्म ताप सम जीवन हल है ।
चंदन सम शीतलता पावे, नवस्तूप की पूजा गावे ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमामाभ्यः चन्दनं निर्व. स्वाहा।

उज्जवल अक्षत कर में लाया, अक्षत सम तुमको है पाया ।
अक्षय पद पाने को आवे, नवस्तूप की पूजा गावे ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमामाभ्यः अक्षतं निर्व. स्वाहा।

पुष्पों ने जग जीव लुभाया, काम बाण में उन्हें फंसाया ।
शुद्ध भाव मेरा हो जावे, नवस्तूप की पूजा गावे ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमामाभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

पेट भरा खाली हो जावे, बार-बार भोजन को खावे ।

क्षुधा रोग को शीघ्र मिटावे, नवस्तूप की पूजा गावे ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमामाभ्य: नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

मोह अंध कुछ न सच दीखा, सम्यग्ज्ञान न लागे नीका ।
आतम में उजियाला होवे, नवस्तूप की पूजा गावे ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमामाभ्य: दीपं निर्व. स्वाहा।

आठो कर्म महादुख दायी, कर्मों के मारे सब भाई ।
कर्मो के पर्वत को तोड़ो, नवस्तूप से नाता जोड़ो ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमामाभ्य: धूपं निर्व. स्वाहा।

आतम ज्ञानी आनंद पावे, आतम के फल मिष्ट ही भावे ।
आतम में आतम खो जाये, नवस्तूप की पूज कराये ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमामाभ्य: फलं निर्व. स्वाहा।

द्रव्यों की थाली भर लाया, शुभ भावों से तुम्हें चढ़ाया ।
शिव सुख वासी तेरा धाम, नवस्तूप को करें प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिश नवस्तूप जिन प्रतिमामाभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

नवस्तूप पूजा (दक्षिण दिशा)

स्थापना

गीता छंद

निज आत्मा में लीन हो, निज ज्ञान धन को पा लिया ।
आराधना हम सब करें, आनंद अनुभव आ लिया ।।
दक्षिण दिशा स्तूप नव है, जिन प्रभु जी राजते ।
हो सौख्य धन शांति सभी को, कर्म सब ही भाजते ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

दोहा

जल मल को धोवे सदा, जल सम हो मम भाव ।
नवस्तूप को पूजते, पार लगेगी नाव ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: जलं निर्व. स्वाहा।

चंदन से वंदन करें, शीतल भाव बनायें ।
नवस्तूप को पूजने, चरणों में हम आये ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: चन्दनं निर्व. स्वाहा।

क्षत विक्षत होता रहा, अक्षय का दो दान ।
नवस्तूप को पूजते, बारंबार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: अक्षतं निर्व. स्वाहा।

जीव पुष्प को चाहते, पर यह तो मुरझाये ।
संयम बगिया खिल उठे, चरणों शीश झुकायें ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: पुष्पं निर्व. स्वाहा।

भूख लगी भोजन किया, नहीं किया निज पान ।
नैवेद्यों से पूजते, कर स्तूप का ध्यान ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

ज्योति सदा जलती रहे, फैले भा चहुं ओर ।
दीप चरण में भेंटता, होगा ज्ञान का भोर ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: दीपं निर्व. स्वाहा।

आठों कर्म का ठाठ है, धर्म हुआ मम दूर ।
अष्ट कर्म के नाशने, ज्ञान होय भरपूर ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: धूपं निर्व. स्वाहा।

फल से फल की चाह है, मुक्ती फल मिल जाये ।
नवस्तूप को पूजते, शत्-शत् शीश झुकाये ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: फलं निर्व. स्वाहा।

पद अनर्घ्य है सुख भरा, जग है दुख भंडार ।
नवस्तूप को पूजते, मिले प्रभु का प्यार ।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

नवस्तूप पूजा (पश्चिम दिशा)

स्थापना

गीता छंद

मम साधना आराधना, प्रभु भक्ति है तेरे लिये ।
तेरे चरण ही पूजना, बस श्रद्धा है तेरे लिये ।।
पश्चिम दिशा स्तूप नव है, जिन प्रभु जी राजते ।
हो सौख्य धन शांति सभी को, कर्म सब ही भाजते ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभु छंद

भावों की निर्मलता प्रभुवर, गंगा से भी निर्मल होती ।
जल चरणों में अर्पित करते, मन के भावों को धो देती ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: जलं निर्व. स्वाहा।

ईर्ष्या की अग्नि दाह करे, मन कल-कल बेकल होता है ।
अर्पित है चरणों में चंदन, जो बीज शान्ति का बोता है ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षय पद पाने को प्रभुवर, अक्षत की थाली लाया हूं ।
अक्षयपुर वासी बन जाऊं, भावों का पुंज बनाया हूं ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: अक्षतं निर्व. स्वाहा।

मम ज्ञान पुष्पों से चुनकर, भावों के पुष्प मैं ले आया ।

रागों के कांटे दूर हटे, शुभ भावों से मैं भर लाया ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: पुष्पं निर्व. स्वाहा।

देवों ने अमृत पान किया, फिर भी यह क्षुधा सताती है ।
नैवेद्य समर्पित करते हैं, जो आतम शुद्धि लाती है ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

है जनम-जनम का नाता प्रभु, अंधे को राह दिखा देना ।
अर्पित करने दीपक लाया, मुक्ती का मार्ग बता देना ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: दीपं निर्व. स्वाहा।

कर्मों का कैदी बना हुआ, चारों गतियों में घूम रहा ।
कर्मों का धुआं उड़ाने को, मैं चरण तुम्हारे चूम रहा ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: धूपं निर्व. स्वाहा।

अर्पण सब कुछ है कर दीना, फल और नहीं मैं कुछ चाहूं ।
मुक्ती में जाकर वास करूं, इक यही भावना मैं भाऊं ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: फलं निर्व. स्वाहा।

मैं क्या मांगूं प्रभुवर तुमसे, मेरे रोम-रोम में बस जाओ ।
अर्घ्यों की थाली लाया हूं, हृदय में आन समा जाओ ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

नवस्तूप पूजा (उत्तर दिशा)

स्थापना

गीता छंद

निज आत्मा में लीन हो, निज ज्ञान धन को पा लिया ।
आराधना हम सब करें, आनंद अनुभव पा लिया ।।
उत्तर दिशा स्तूप नव है, जिन प्रभु जी राजते ।

हो सौख्य धन शांति सभी को, कर्म सब ही भाजते ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

चौबीसी पूजा

अंधियारा मोह घना, सत्य न दिख पाया ।
जल से मल धोवन हार, मन यह हर्षाया ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः जलं निर्व. स्वाहा।

चंदन है प्रभु का ज्ञान, शीतलता देवे ।
आतम शीतलता हो जाये, आतप मिट जावे ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः चन्दनं निर्व. स्वाहा।

मिथ्या है जग के कार्य, मंगल आप करें ।
अक्षय पद धारी नाथ, सारे कर्म हरें ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्व. स्वाहा।

श्रुत धारा का जिन ज्ञान, भाव स्वभाव करे ।
यह पुष्प चढ़ाऊं नाथ, भाव अभाव करे ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

चुन-चुन नैवेद्य बनाये, चरणों में लाऊं ।
मम क्षुधा रोग नश जाये, नित मस्तक नाऊं ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

तमहर रवि देय प्रकाश, तम को दूर करे ।
दीपक ले करता आश, सब अज्ञान हरे ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः दीपं निर्व. स्वाहा।

आकुल व्याकुल जग जीव, कर्म सतावत हैं ।
कर्मों की धूम उड़ाये, पथ दर्शावत हैं ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्व. स्वाहा।

निष्काम कल्पतरू आप, फल ही फल देते ।
फल लाया हूं मैं साथ, मुक्ती में रहते ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: फलं निर्व. स्वाहा।

दोषों से रहित जिनेश, दोष रहित कर दो ।
मैं अर्घ्य चढ़ाऊं नाथ, झोली को भर दो ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिश नवस्तूप जिन प्रतिमाभ्य: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

दोहा छत्तीसों स्तूप में, जिनवर देव महान ।
गली सातवीं है कहीं, बारंबार प्रणाम ।।

शेर चाल

स्वीकार हो जिनदेव तुम्हें मेरा नमस्कार ।
आराधना औ साधना के देव नमस्कार ।।
सीता सती सोमा सती को तारा नमस्कार ।
अर्पित करूं श्रद्धाके सुमन तुम्हें नमस्कार ।।

छत्तीस हैं चारों दिशा में शोभते रहे ।
भक्तों के आत्मज्ञान को भी मोहते रहे ।।
जिनदेव का जब दर्श हो सम्यक भी दर्श हो ।
जाते ही समोशरण में निज आत्म हर्ष हो ।।

है पूर्व दिशा हो सहस स्तूप धारती ।
द्वारे में दे के दर्श वो भक्तों को तारती ।।
जय पीठ तीन रत्न औ मणियों के हैं बने ।
देते प्रकाश देते ज्ञान पुंज हैं घने ।।

जिनदेव तन से ऊंचा, स्तूप है महान ।
ऊंचा शिखर ध्वजा लगी, शत् बार है प्रणाम ।।
जय मोतियों की झालरों से शोभा है बढ़ी ।

तोरण चढ़े घंटा लगे, हो घटे की ध्वनि ।।
मंगल वसु है द्रव्य शुद्ध ध्यान से लखे ।
कांति बढ़े शांति बढ़े, जो ध्यान को चखे ।।
अरिहंत देव घात के अरिहंत हैं हुये ।
पाई है दिव्य ज्योति, वे कृतकृत्य है हुये ।।
सब देव देवियां अपार द्रव्य लाय के ।
भक्ती में झूमती हैं, शुद्ध भाव भाय के ।।
मेरा जनम सफल हुआ दर्शन हुआ जिनदेव ।
जब तक न मिले मोक्ष मुझे मैं करूंगी सेव ।।
चिंतामणी हो कल्पतरू तरूं आश पूरी हो ।
चारित्र रत्न पाऊँ साधना भी पूरी हो ।।
तुम चन्द्र हो तुम सूर्य हो पावन हो तुम प्रभो ।
निष्काम हो निर्वेद हो सावन हो तुम प्रभो ।।
भगवान मेरी आत्मा को आके बचाओ ।
ये डूबती है नाव इसे पार लगाओ ।।
हम आश ले के द्वार तेरे आये हैं प्रभो ।
''स्वस्ति'' निजात्म ज्ञान हो ये भाव है विभो ।।
प्रबल भावना है मेरी, दर्शन हो जिनदेव ।
समवशरण में जायके, करूं आपकी सेव ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशा सम्बन्धिषट् त्रिंशत्स्तूपस्थ जिनेन्द्रभ्य: पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

उज्जवल आतम को किया, तीर्थंकर भगवान ।
आकर हम पूजा करें, शत्-शत् बार प्रणाम ।।

।। इत्याशीर्वाद ।।

श्री मंडप भूमि पूजन

स्थापना

शंभू छंद

सम भाव भावना का अवसर, हर प्राणी को मिल जाता है।
वह धन कुबेर रचना करके, सुंदरता बहुत बढ़ाता है।
अष्टम भूमि श्री मंडप है, जिसमें जिनवर जी राज रहे।
आव्हानन करते हम उनका, जो समोशरण में साज रहे।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

तर्ज : चौबीसी पूजा

जल वाह्य मलो को धोय, अन्तर मैला है।
जल से हम पूज रचायें, जिन उजियाला है।
श्री मंडप छाया बैठ, भक्ति नित्य करें ।
जिन ज्ञान किरण मिल जाये, सारे कर्म हरे।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ गंध सुगंध समान, चंदन प्रभु जी हैं ।
करें शीतल ताप नशाय, नंदन प्रभु जी हैं ।
श्री मंडप छाया बैठ.......

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह खंड-खंड संसार, हमको ना भाया ।
शुभ शालि अखंडित पुंज, चरणों में लाया ।
श्री मंडप छाया बैठ.......

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

आकुल व्याकुल परिणाम, इन्द्रिय सुख चाहे ।
पुष्पों से पूज रचाऊं, सत्पथ की राहें ।
श्री मंडप छाया बैठ, भक्ति नित्य करें ।
जिन ज्ञान किरण मिल जाये, सारे कर्म हरे।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान मनोहर नित्य, निश दिन हम खाते ।
नैवेद्य चढ़ाऊं नाथ, यह तन नश जावे ।।
श्री मंडप छाया बैठ.......

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तम छाया है चहुंओर, पथ में भटके हम ।
दो ज्ञान दीप परकाश, सत्पथ पावे हम ।।
श्री मंडप छाया बैठ.......

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का है संसार, कुछ ना कर्म बिना ।
कर्मों की धूप चढ़ायें, कुछ ना धर्म बिना ।।
श्री मंडप छाया बैठ.......

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अमृत फल है निज ध्यान, स्वाद नहीं लीना ।
फल पाने फल ले आये, चरणों रस भीना ।।
श्री मंडप छाया बैठ.......

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यों की थाली भर लाये, शुभ भावों से तुम्हें चढ़ाये,
शिव सुख के वासी बन जायें, तुम चरणन अर्घ चढ़ायें ।
श्री मंडप की छाया पाई, झर आतम शुद्धी हो जाई ।
ज्ञान किरण मिल जाये हमें, बार-बार हम चरण नमें ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

स्वपर भेद विज्ञान से, देखा निज का रूप ।
चौबीसों जिनराज जी सिद्ध शिला के भूप ।।

दोहा

बारह योजन का बना, बारह कोठे जान ।
श्री मंडप के कोठे में, बैठे सकल समाज ।।
आदिनाथ जिनदेव जी, अंतस् ज्ञान प्रकाश ।
ज्ञान ज्योति मन भी जगे, ले आया ये आश ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

विजय वरण करके प्रभु, दिया दिव्य उपदेश ।
साढ़े ग्यारह योजन में, फैला जन-जन वेश ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

रत्नोमय खंभे लगे, सुंदरता की खान ।
पर निज रूप के सामने, नहि किसी का ध्यान ।।
संभव ने संभव किया, मुक्ति मार्ग अजान ।
पदचिन्हों पर जो चले, मिले मोक्ष स्थान ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

साढ़े दस योजन हुआ, समोशरण का क्षेत्र ।
लख अभिनंदन रूप को, खुले रहे सब नेत्र ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सुंदर माला से सजा, समोशरण जिनराज ।
मुरझाते ये फूल ना, है ये प्रभु का राज ।।
दश योजन विस्तृत कहा, सुमतिनाथ स्थान ।
सुर नर मिलकर पूजते, करते हैं हम ध्यान ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

शोभा लख निज महल की, आकर्षित है भव्य ।

पापी को ना दर्श दो, नाही होय अभव्य ।।
पद्मप्रभू जिनराज की, महिमा अगम अपार ।
तीन गती के जीव आ, करें धर्म से प्यार ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अमृतवर्षा हो रही, भव्य करें रसपान ।
श्री मंडप की भूमि में, जावे जीव महान ।।
चित्र बने सुंदर वहां, लख हर्षित है जीव ।
श्री सुपार्श्व के चरण में, पावे सौख्य अतीव ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

गगन बीच चंदा रहे, त्यों श्रीमंडप में देव ।
योजन साढ़े आठ हैं, करूँ चरण की सेव ।।
धन कुबेर रचना करे, संपत्ति स्वर्ग से लाये ।
चन्द्रप्रभु के चरण में, हम सब शीश झुकायें ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अष्ट द्रव्य मंगल सजे, धर्म चक्र मनहार ।
अतिशय कांति के धनी, समोशरण तैयार ।।
पुष्पदंत जिनराज का, अठ योजन का व्यास ।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भाव से, कलमल होवे साफ ।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कोटद्वार गोपुर बने, भवन बुलावे पास ।
कंचन मणिमयी रत्न से, फैल रहा परकाश ।।
शीतल-शीतल वचन से, शीतलता का दान ।
शीतल सारे जीव हों, करें आत्म कल्याण ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

भामंडल के तेज से, फैला दिव्य प्रकाश ।
सूर्य चन्द्र फीके पड़े, ना दिन हो ना रात ।।
श्रेष्ठ अंश नहीं पूर्ण है, श्री श्रेयांश जिन राज ।

श्रेष्ठ हुये हुये जगत में, नमता सकल समाज ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री श्रेयांशनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

ऋद्धि धारी मुनीवरा, प्रभु चरण के भक्त ।
ज्ञान सुधारस पान कर, ना जग में आसक्त ।।
देते सम्यक् दान में, वासुपूज्य भगवान् ।
करूँ दर्श प्रत्यक्ष में, बारंबार प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

शंभू छंद

क्रम से आधा-आधा घटता,
छह योजन समोशरण पाया ।
श्री विमलनाथ निर्मल वाणी,
पाने चरणों में मैं आया ।।
हो अंत समय में भाव विमल,
निर्मल आतम यह हो जावे ।
तैयार रहें हरपल ज्ञानी,
बस अंत समाधि मिल जावे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

हो आप अनंत नाथ स्वामी,
हो सर्व गुणी गुणवान संत ।
महिमा जग में सब गाते हैं,
चरणों में मिलेगा मुक्ति पंथ ।।
योजन था साढ़े पांच प्रभु,
पर यशगाथा चहुँ ओर हुई ।
श्री अनंत नाथ के दर्शन से,
तम हटा ज्ञान की भोर हुई ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

फहराते हैं ध्वज चहुँदिश में,

मानो जिन का गुणगान करे ।
लहराते हैं वे इसीलिये
भव्यों के सारे कर्म उड़े ।।
श्री धर्मनाथ ने धर्म दिया,
धारण करके सब जीव तरे ।
चरणों में अर्घ्य चढ़ाते हैं,
सारे कर्मों को शीघ्र हरे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जीवों की चाहत एक ही है,
जीवन में शांति छा जावे ।
श्री शान्तिनाथ की छाया में,
माया से मुक्ति पा जावे ।।
इच्छा है शान्ति पाने की,
श्री शान्तिनाथ की सेव करो ।
चरणों में अर्घ्य चढ़ा करके,
काले कर्मों को शीघ्र हरो ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

शुभ समवशरण में बैठ प्रभु,
संदेश धर्म का देते हैं ।
ये भक्त भक्ति में रंग करके,
जीवन नैया को खेते हैं ।।
चउ योजन कुंथुनाथ जी का,
शुभ समवशरण ही प्यारा था ।
वाणी के पुष्प गिराये जिन,
जग में सबसे ही न्यारा था ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

श्री अरहनाथ जी नाश करें,

कर्मों का धुआ उड़ाया है ।
अंदर का वैभव प्रगट करें,
मुक्ती को पास बुलाया है ।।
संसार से तुम ना डरते हो,
नाही संसार रचाते हो ।
जग में रहकर जग से न्यारे,
मुक्ती का पाथ दिखाते हैं ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

आनंदमयी दर्शन तेरा, आनंदमयी ही वाणी है ।
आनंदामृत बरसाते हो, बनजाती वह जिनवाणी है ।।
श्री मंडप पावन वसुन्धरा, सब जीवों में आनंद भरे ।
त्रय योजन का यह समोशरण, अवगुण को सारे शीघ्र हरे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मुनिसुव्रत व्रत धारण करके,
सर्वोत्तम पद को पाया है ।
उत्तम पद के दाता भी हो,
फिर उत्तम सौख्य दिलाया है ।।
संसार सिन्धु है गहरा प्रभु,
किस तरह पार मैं जाऊँगा ।
दो नाथ सहारा मुझको तो,
मैं पास तुम्हारे आऊँगा ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दो योजन का शुभ सवशरण,
जीवों को शरणा देता है ।
शुभ समोशरण के परमाणु,
मन को भी पावन करता है ।।
औदारिक तन पावन पाया,

अन्तिम तन ही यह होता है ।
निर्वाण मिलेगा इसको तज,
संसार बीज ना बोता है ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

छह कोश में फैला समोवशरण,
श्री नेमिनाथ जी जिनवर के ।
यश गाथा सब मिल गाते हैं,
हम भी गुण गाये गुरूवर के ।।
रत्नात्रय ने है पार किया,
मैं भी सम्यग्दर्शन पाऊँ ।
आना-जाना जग से छूटे,
जग में फिर से मैं ना आऊँ ।।
श्री मंडप में राजुल बैठी, उपदेश प्रभु का सुनती है ।
वैराग्य हुआ दीक्षा लीनी, निज आतम में चित्त धरती है ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

बस पांच कोश का समोशरण,
श्री पार्श्वनाथ जिन ने पाया ।
पारस सबको सोना करते,
अब मैं पारस बनने आया ।।
श्री मंडप में है कमठ लाल,
दश भव का बैर समाप्त किया ।।
सम्यग्दर्शन धारण करके,
अपने कर्मों को शुभ्र किया ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

चतु कोश हुआ विस्तार प्रभु,
जिन समवशरण महिमा न्यारी ।
अंतिम तीर्थंकर श्री महावीर,

चदन बाला तुमने तारी ।।
संग मुनिवर गणधर मोक्ष गये,
औ सबको पाथ दिखाया है ।
भावों से अर्घ्य चढ़ाने को,
यह भक्त चरण में आया है ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा

चौबीसों जिनराज जी, श्री मंडप स्थान ।
चरण शरण आ पूजता, शीघ्र करो कल्याण ।।

परिपुष्पांजलि....इत्याशीर्वाद

जयमाला

त्रिभंगी छंद

प्रभु समवशरण है, त्याग वरण है, महिमा तेरी गायेंगे ।
निज आतम दृष्टि, अमृत वृष्टि, पाकर के हर्षायेंगे।
भूमि श्री मंडप, कर्म का खंडन, सुन वाणी को करते हैं।
भर पुण्य की झोली, मीठी बोली, कर्म निर्जरा करते हैं।

पद्धरि छंद

जय ऋषभ देव है महासंत, भव्यों को दिखाया मुक्ति पंथ।
शुभ समवशरण में राज रहे, प्रभु कमलासन पर साज रहे।
बारह कोठे सुंदर विशाल, आकर बैठे सब वृद्ध बाल ।
अंतर में भक्ति दीप जले, बाहर का सब अभिमान गले ।
उपदेश सभा सुंदर सुरूप, आते है श्रावक और भूप ।
चहुंदिश में चतुमुख दिखता है, यह सभा देव ही रचता है।
मुनिराज प्रथम में राज रहे, ध्वनि सुन कर सुख को पाय रहे।
दूजे में कल्प देवी बैठी, फिर आर्यिका श्राविका हैं देखी ।
ज्योतिष व्यंरतनी भवनवासी, सुरज्योतिष व्यंतर करे आश ।

क्रम-क्रम से बैठे आप आय, फिर देव स्वर्ग के हैं बताय ।
ग्यारह में चक्रवर्ती बैठे, बारह में पशुओं को देखे ।
पशुओं का बैर विरोध मिटे, आपस में मिलते प्रेम दिखे ।
संख्या ना देवी देवों की, संख्या ना नर पशु सेवों की ।
आकुलता तन से दूर रहे, व्याकुलता मन से दूर रहे।
ना भूख लगे ना प्यास लगे, ना राग जगे ना मोह जगे ।
शुभ भाव औ समता है पालन, संयम औ गुप्ती का लालन ।
भामंडल आभा फेंक रहा, शुभ-शुभ परमाणु बांट रहा ।
ना क्रोध आये ना लोभ आये, जिनवर प्रभुवर में मन रमाये ।
ना चोरी है ना डाका है, जिनवर चरणों ही जाना है ।
आतंकित आतम नाही रहा, सशंकित आतम ना झांका ।
अमृत वृष्टि हर क्षण होती, अमृत की नदिया भी बहती ।
जो जायेगा रस पान करे, तन मन का भी संताप हरे ।
त्रिबार ध्वनि भी नित्य खिरे, भव्यों ने सिन्धु पार करे ।
मैं भी चरणों तरने आया, पूजन करके मैं हर्षाया ।
हे नाथ कृपा की दृष्टि करो, हे नाथ दया की वृष्टि करो ।
अब और कहीं ना जाऊंगा, दर्शन पाने नित आऊंगा ।
यह तन मन आज समर्पित है, चरणों में जीवन अर्पित है।
चरणों से दूर नहीं करना, 'स्वस्ति' को भव सिन्धू तरना ।

दोहा- बारह कोठे में चलो, दर्शन प्रभु का पाये ।
परम पिता परमेश को, शत्-शत् शीश झुकाये ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशतिजिन पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु प्रत्यक्ष में दर्श, धन्य होय यह जीव ।
आंखें पावन होयेगी, मिलता सौख्य अतीव ।

।इत्याशीर्वादं पुष्पांजलिं क्षिपेत।

श्री मंडप वर्णन प्रारंभ

चौपाई

चौथा कोट वज्रमय जानो, हीरा जैसी कांती मानो ।
जिन तनु से चौगुना है ऊंचा, एक भाग मोटाई जैसा ।।

ॐ ह्रीं जिन तनुतः चर्तुगुणोत्तुन्गकभागायत वज्रमय श्वेत वर्ण चतुर्थ प्राकार संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।1।

कोटों से किरणें हैं निकले, जग मग जग मग ज्योति दमके ।
रात दिना का भेद न होता, पंच वर्ण रत्नों का गोता ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थप्राकारप्रबद्धकान्तिसंयुक्त समवसरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।2।

कंगूरा ध्वज महल सहित है, रागद्वेष मद मोह रहित है ।
सभी जगह सोपान लगे है, स्वर्णमयी कलशा ही जड़े है ।।

ॐ ह्रीं चतुर्थप्राकारबुरज कंगूरा ध्वजासुशोभित विष्ठरविशिष्ट सप्तम-सोपानसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।3।

चढ़े सोपान चौक में जावे, मणिमयी चौक भी शोभा पावे ।
चौक छोड़ के कोट वज्र है, द्वार खड़े हैं हमें सब्र है ।।

ॐ ह्रीं द्वारयुक्तचतुर्थ प्राकारसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।4।

द्वार पै तोरण शोभा पाये, दर्शन को सब देव ही आये ।
पन्ना रत्न के हार बने हैं, झलके चित्र सुसौम्य सने हैं ।।

ॐ ह्रीं अनेकरचनायुक्तद्वारसहित चतुर्थप्राकारसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।5।

द्वारपाल द्वारे पर बैठे, गदा हाथ ले सबको देखे ।
सुंदर लख हम सब हर्षाये, पूजा को प्रभु भक्त हैं आये ।।

ॐ ह्रीं द्वारपालसहितद्वारयुक्त चतुर्थप्राकारसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।6।

कान में कुंडल हार हृदय में, कड़ा हाथ मुंदरी अंगुली में ।
द्वारपाल शिर मुकुट चढ़ाये, पद्मराग मणि कांती बढ़ाये ।।

ॐ ह्रीं द्वारपालयुक्तद्वारसहित पंचमवेदिकायुक्तचतुर्थप्राकार संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।7।

नये वस्त्र धारण है कीना, अलग शोभता रत्न नगीना ।
पांचवीं वेदी बनी है सुंदर, प्रभुवर बैठे जिसके अन्दर ।।

ॐ ह्रीं वज्रप्राकारपंचमवेदिकाया: अष्टमगल्या: भूमौ उभयपार्श्व भूमे: चतुरन्तराल संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।8।

पंचम कोटी वज्र कोट है, भूमी आठवीं बनी ओट है ।
गली भूमी बाईं में जाओ, भूमी में चतु अंतर पायो ।।
द्वादश शाल प्रकोष्ठ की रचना, ध्यान लगा आतम सुख चखना ।
घंटा कलशा ध्वजा भी शोभे, दूर से ही सबका मन मोहे ।।

ॐ ह्रीं अष्टमभूमौ विविधरचनायुक्तद्वादशशालप्रकोष्ठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।9।

दिश आग्नेय में कोठे राजे, मुनिवर जिसमें शोभा पावे ।
कल्पवासिनी देवी बैठी, नारी भी इसमें है देखी ।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि कोष्ठत्रये दि० मुनिकल्पवासिनी मनुष्यनी संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।10।

नैर्ऋत्व्य दिश में कोठे राजे, ज्योतिषी व्यंतर शोभा पावे ।
भवन वासी भी आये यहां पर, दर्शन होवे हैं श्री जिनवर ।।

ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यदिशि कोष्ठत्रये ज्योतिष्काव्यन्तरणीभवनवासिनी संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।11।

तीन कोठे वायव्य बखाने, व्यंतर भवनवासी सब आने ।
ज्योतिष देव सुने जिनवाणी, जिनवर की वाणी कल्याणी ।।

ॐ ह्रीं वायव्यदिशि कोष्ठत्रये ज्योतिष्कभावनव्यन्तरसुरवास संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।12।

कोठे तीन दिशा ईशान, कल्पवासी सुरनर सब आये ।
बारह में तिर्यंच बताये, सब मिलकर के शीश झुकाये ।।

ॐ ह्रीं ईशानदिशि कोष्ठत्रये कल्पोपपत्रदेवनर तिर्यंचसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।13।

चौथा कोट वज्र का जानो, अड़तालीस वो भाग प्रमानो ।
अष्टम भूमी सभा लगी है, वेदी पांचवीं ज्ञान मयी है ।।

ॐ ह्रीं वज्रशालाष्टचत्वारिंशद्भागे वज्रमयचतुर्थसालतः चतुर्विंशति भागवेदिका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।14।

वलय व्यास दो तरफ बताया, भाग चौबिसवां है घटवाया ।
हम जिनेन्द्र पूजन में आये, श्रद्धा सुमन साथ में लाये ।।

ॐ ह्रीं अष्टचापोच्चसूचीयुक्त-चतुःसहस्रचायप्रथमपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।15।

सोलह पैड़ी प्रथम पीठ में, आठ धनुष ऊंची है उसमें ।
रत्नमयी है शोभा पाये, पुण्य उदय में पाठ रचाये ।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशि वसुमंगलद्रव्यधर्मचक्रसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।16।

यक्ष देव रक्षा ही करते, प्रथम पीठ पर ठाड़े रहते ।
यद्यपि खतरा वहां न कोई, जिनवर की महिमा है भाई ।।

ॐ ह्रीं बद्धकर-मस्तककस्थधर्मचक्र-यक्षयुक्त प्रथमपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।17।

धर्मचक्र मस्तक पर धरते, प्रभु आज्ञा को सिर पर वरते ।
ऐसे भक्त प्रभु के जानो, आज्ञा पा दीक्षा को मानो ।।

ॐ ह्रीं विचित्रधर्मचक्रसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।18।

दोहा

आरा एक हजार है, धर्म चक्र के बीच ।
सुंदर पहियाकार है, तुम्हें झुकाऊं शीश ।।

ॐ ह्रीं प्रथमपीठे जिनपूजांकृत्वा निजकोष्ठस्थितिसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।19।

धर्म चक्र के पास मे, मंगल आठ दिखाय ।
तीर्थंकर के महल में, जीव सभी है आय ।।

ॐ ह्रीं द्वितीयपीठे इन्द्रगत्यभावातिशयव्यवस्थासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।20।

जिनवर पूजा हम करें, इन्द्रदेव गुणवान ।
अपने कोठे बैठके, भक्ती करी महान ।।

ॐ ह्रीं सुवर्णमयोच्चद्वितीयसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।21।

दूजे पीठ न जावता, जिनवाणी को जान ।
अतिशय पुण्यों के धनी, शत् शत् करूं प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं विचित्रविविधरचनायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।22।

आठ सीढ़ी पच्चीस धनुष, पीठ दूसरा जान ।
स्वर्णो मय है शोभती, तीर्थंकर भगवान ।।

ॐ ह्रीं स्तम्भशिखरामरगोलायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।23।

चित्रों की रचना हुई, खम्भ बताये नेक ।
सुंदर सरस सुधार कर, माथा अपना टेक ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तश्रीमण्डपसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।24।

कंचन मय खंबा खड़े, पंच वर्ण के रत्न ।
शिखर सहित है शोभते, दर्श करन का यत्न ।।

ॐ ह्रीं जिनतनुतः द्वादशगुणोच्चाशोकवृक्षसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।25।

कलशा तुंग ध्वजा चढ़ी, मोती झालर जान ।
श्री मंडप शोभा बढ़े, बारंबार प्रणाम ।।
बारह गुण ऊंचा हुआ, जिन वपु से अशोक ।
चार दिशा के चार हैं, हरता सब का शोक ।।

ॐ ह्रीं श्रीमण्डपोपरि विविधरचनायुक्त अशोकवृक्षशोभासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।26।

वृक्ष अनोखा है महा, नाशे सबका शोक ।
जड़ हीरा शाखा कनक, दर्श से भागे रोग ।।

ॐ ह्रीं एकसहस्त्रधनुरायत-चतुर्धनुरूच्च-तृतीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।27।

पत्र बने पन्ना रतन, फूल लाल मय जान ।
सुंदर फल ही पावते, करता जो परणाम ।।

ॐ ह्रीं महाशोभायुक्ततृतीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।28।

मंगलमय मंगल करे, मंगल द्रव्य महान ।
वसु मंगल है शोभते, मंगल मय भगवान ।।

ॐ ह्रीं पीठत्रयोपरि समचतुष्कोणगन्धकुटीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।29।

एक सहस धनु पीठ है, तीजा नयन निहार ।
चार धनुष ऊंची भई, सीढ़ी सुंदर सार ।।

ॐ ह्रीं गन्धकुटीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।30।

आठ सीढ़ी रत्नों जड़ी, तृतीय पीठ की जान ।
इन्द्रों ने रचना करी, करते रहे प्रणाम ।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशति जिनेन्द्राणां क्रमहीनविस्तारापन्नगन्धकुटीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।31।

तीन पीठ ऊपर विषें, गन्धकुटी मनहार ।
सम चतुष्क के कोण में, होती है तैयार ।।

ॐ ह्रीं वचनागोचर गन्धकुटीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।32।

गंध कुटी सिंहासन प्यारा, सुंदर-सुंदर दिखे नजारा।
आभामय सुर रत्न जड़े हैं, हाथ जोड़कर सभी खड़े हैं ।।

ॐ ह्रीं सुवर्णमयोच्चद्वितीयसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय

अर्घ्यं नि. ।33।

सहस पत्र का स्वर्ण कमल है, भाव प्रभु का विमल-विमल है ।
सिंहासन के ऊपर रहता, अमृत का झरना भी बहता ।।

ॐ ह्रीं विचित्रविविधरचनायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।34।

अन्तरिक्ष में आप विराजे, देव बजाते सब बाजे ।
निराधारा आधार नहीं है, मेरे प्रभु की बात सही है ।।

ॐ ह्रीं स्तम्भशिखरामरगोलायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।35।

भामंडल मंडल में शोभित, भक्त सभी होते हैं मोहित ।
तीर्थंकर रूप अनोखा, दर्शन का मिल जाये मौका ।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तश्रीमण्डपसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।36।

सर्व जिनों की घटे ऊंचाई, आतम में कोई कमी न आई ।
वैभव शक्ति पार पाये, हम चरणों में शीश झुकायें ।।

ॐ ह्रीं जिनतनुतः द्वादशगुणोच्चाशोकवृक्षसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।37।

वेदी कोट सुमंदिर सौहे, दूर से ही सबका मन मोहे ।
नृत्यशाला और वृक्ष बने हैं, सुंदर मंदिन वहां खड़े हैं ।।

ॐ ह्रीं श्रीमण्डपोपरि विविधरचनायुक्त शोकवृक्षशोभासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।38।

चक्रवती बलभद्र नारायण कामदेव आदि अनेक राजाओं द्वारा

समवशरण में क्रियमाण पूजा

दोहा

चक्रवर्ती बलभद्रजी, समवशरण में आये ।
महापुरूष भी आय के, चरणन शीश झुकाये ।।
भावों की शुद्धी करूं, पूजा करके आज ।
तीर्थंकर भगवान को, नमता सकल समाज ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वानन, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

गीता-छंद

नीर है जग में बहु पर, रतनत्रय निर्मल कहा ।
मैं क्षीर सा ही नीर लाया, भाव शुद्धी हो महा ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल, जिनदेव की पूजा करें ।
शुभ भाव से चरणों में आये, कर्म सारे परि हरे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हो शांत शिव सुंदर प्रभो, न ताप संताप है ।
ले चंदनादि पूजता, मेटो सकल भवताप है ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल........

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पग-पग पे जाके पद बदलना, आप इससे दूर हैं
अक्षयपुरी के हो निवासी, सौख्य भी भरपूर हैं ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल........

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रति छोड़ अविरति पाने को, प्रभु पुष्प सुंदर लाये हैं ।
मम आत्मा रक्षित करो, यह भावना ही भाये है ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल, जिनदेव की पूजा करें ।
शुभ भाव से चरणों में आये, कर्म सारे परि हरे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कामना से दूर तुम हो, साधना अतिशय धनी ।
तुम वैद्य हो, नैवेद्य के, प्रभु आज तुमसे ही बनी ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल........

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्यात्व का तम है घना, सम्यक उजाला चाहिये ।
यह दीप रत्नोंमय चढ़ाऊं, ज्ञान केवल चाहिये ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल........

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अवगुण हैं रहते दूर तुमसे, गुण के प्रभु भंडार हैं ।
दोषों की धूप चढ़ाऊं भगवन, मिले मुक्ति द्वार है ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल........

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सद्बुद्धि श्रावक मुक्ति पथपर, आगे को बढ़ता चले ।
फल को चढ़ाऊं, फल न चाहूं, साधना दीपक जले ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल........

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों कषायों का शमन कर, भावना शुभ भाऊंगा ।
यह अर्घ्य ज्योति साथ लाया, निज में ही रम जाऊंगा ।।
बलभद्र चक्री भूप मिल, जिनदेव की पूजा करें ।
शुभ भाव से चरणों में आये, कर्म सारे परि हरे ।।

ॐ ह्रां समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

त्रिभंगी

निजफूल खिलाकर, हर्ष बढ़ाकर, राजा पूजन को आये ।
भवताप मिटाये, पुष्प चढ़ाये, श्रद्धा भर आतम लाये ।।
प्रभु रोशन करते, दोष को हरते, दीक्षा को सबने पाया ।
कर्मों का झरना, पाप को हरना, आतम आनंद है आया ।।

चौपाई

चारों घाती कर्म नशाये, चार चतुष्टय प्रभु ने पाये ।
चार ध्यान को ध्याया प्रभु ने, आतम आनंद लिया था निज में ।।
राक्षस क्रोध भी दूर है भागा, क्षमा भाव का धर्म है जागा ।
क्रोधी आकर क्रोध नशाये, मन में अतिशय शांति पाये ।।
क्रोध करें जीवों की हिंसा, क्रोध करे भावों की हिंसा ।
क्रोध पाप को पास बुलाता, क्रोध जगत में है भटकाता ।।
दुखी क्रोध से जनता सारी, फिर भी क्रोध न छूटे भारी ।
मित्र क्रोध ने शत्रु बनाया, अपना ही तब हुआ पराया ।।
अपना सपना ही हो जावे, जब राक्षस यह क्रोध है आवे ।
समता औ सद्गुण हटजावे, जीवों को जग में भटकावे ।।
मोह क्रोध का जनक बताया, मिथ्या इसने ज्ञान बनाया ।
स्वयं फले सबको फलवाये, मोही मोह में धर्म न पाये ।।
समता सुधा ज्ञान भंडारी, समवशरण की महिमा न्यारी ।
स्वयं तिरे सबको तिरवावे, जो भी तेरी शरण में आवे ।।
आप क्रोध को दूर हटाया, क्षमा भाव निज में प्रगटाया ।
निज में निज का ध्यान लगाया, दुष्ट कर्म को आप भगाया ।।
अनन्त चतुष्टय के तुम धारी, केवल ज्ञान हो भंडारी ।
समवशरण रचना हुई सुंदर, हर्षे इन्द्र भी मन में अंदर ।।

देव देवियां स्वर्ग से आईं, प्रभु दर्शन कर वे हर्षाईं ।
चक्रवर्ती बलदेव भी आये, चरणों में वह शीश झुकाये ।
कामदेव नारायण आया, महा पूजा का पाठ कराया ।।
द्रव्यों के बहु थाल भराये, गंगा सम वह नीर चढ़ाये ।।
चंदन पर भौरे गुंजाये, धूप चढ़े तो मेघ बनाये ।
अर्घों का पर्वत बन जाये, महा पूजा महापुरूष कराये ।।
राजा मंडलीक मंडल भी, महा पूजा मंगलमय होती ।
समवशरण का अतिशय भारी, सम अवसर पाये नरनारी ।।
चौबीस जिन को शीश झुकायें, चरणों में हम पूज रचायें ।
जिनवर सबको मिलती, सम्यग्ज्ञान की कलियां खिलतीं ।।
नर तिर्यंच भी भक्ती गावें, गाकर अतिशय पुण्य कमावें ।
जिनवर अमृत ज्ञान में बांटे, फूल ही फूल नहीं हैं कांटे ।।
हो दर्शन कब समवशरण के, हो स्पर्शन प्रभु चरण के ।
'स्वस्ति' भी यह आश लगाये, कब आकर प्रभु दर्श दिखायें ।।

दोहा

समवशरण जिनदेव का, तारे मोक्ष मझार ।
अवसर मुझ को भी मिले, हम भी हैं तैयार ।।
महापुरूष सम पूजा कर, महाभाव प्रगटाय ।
महा मोक्ष पदवी मिले, शत्-शत् शीश नवाय ।।

ॐ ह्रीं समोवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रभ्य: पूर्णार्घ्यं नि. स्वाहा।

समुच्चय पूजा प्रारम्भ

स्थापना

(गीता छंद)

त्रैलोक्य में जिन चैत्य हैं, मिल हम सभी पूजा करें ।
संसार सागर पार होने, आराधना हम नित करें ।
भगवान की भक्ति सभी को, शान्ति सुख समृद्धि दे ।
मनहर प्रभु की मूर्ति ही, सब ऋद्धि दे सब सिद्धि दे।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति जिन अत्र, अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

परिपुष्पांजलि क्षिपेत्

शंभु छंद

जल का स्वभाव तो निर्मल है, तन मन को शुची बनाता है ।
निज आत्म शुद्धि की प्राप्ति करे, जिससे मम हिय हर्षाता है ।।
संसार में हमने जिनवर जी, कर्मों के सारे कष्ट सहे ।
चौबीसों जिन पूजन करते, स्वर्गापवर्ग का मार्ग लहे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार ताप संताप प्रभो, क्षण-क्षण में दु:ख बढ़ाता है ।
मन चिंता-चिंता करता है, वह चैन कहीं ना पाता है ।।
संसार में हमने जिनवर जी, कर्मों के सारे कष्ट सहे ।
चौबीसों जिन पूजन करते, स्वर्गापवर्ग का मार्ग लहे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय क्षय विक्षत होता है, प्रतिपल पर्याय बदलती है ।
अक्षय पद मुझको मिल जाये, ऐसी प्रभु मेरी विनती है ।।
संसार में हमने जिनवर जी......

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों की गंध तो नश्वर है, खुशबू निज आतम की फैले ।
चरणों में पुष्प मैं लाया हूं, संयम से आतम में रह ले ।।
संसार में हमने जिनवर जी, कर्मों के सारे कष्ट सहे ।
चौबीसों जिन पूजन करते, स्वर्गापवर्ग का मार्ग लहे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंजन नित नये बना खाये, पर तृप्त नहीं यह मन होता ।
व्यंजन की थाली ले आया, जो क्षुधा रोग को नश देता ।।
संसार में हमने जिनवर जी......

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंधियारा मोह महातम है, निज याथायथ्य न दिख पाया ।
मालायें दीपक की लेकर, जिनवर पूजन को मैं आया ।।
संसार में हमने जिनवर जी......

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु कर्मों का ही जोर चले, पुरूषार्थ हीन हो जाता हूं ।
कर्मों का धुआं उड़ाने को, मैं धूप चरण में लाता हूं ।।
संसार में हमने जिनवर जी, कर्मों के सारे कष्ट सहे ।
चौबीसों जिन पूजन करते, स्वर्गापवर्ग का मार्ग लहे ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

तेरी पूजन से हे प्रभुवर, मैं मुक्ती फल की चाह करूं ।
पर सुःख नहीं है इस जग में, फल अर्पण कर शिवनारी वरूं ।।
संसार में हमने जिनवर जी......

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ये अर्घ्य करे उपसर्ग दूर, फिर मैं अनर्घ्य पद पाऊंगा ।
चरणों में अर्घ्य चढ़ा करके, मैं तो मुक्ती को जाऊंगा ।।
संसार में हमने जिनवर जी......

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।। जयमाला ।।

(त्रिभंगी छंद)

चौबीस जिन स्वामी, अंतर्यामी, कष्ट हटाये सुखकारी ।
त्रिभुवन के दाता, जग विख्याता, मिलेगी साता हे स्वामी ।।

(पद्धड़ी छंद)

जय ॠषभ देव अंतर्यामी, हे अजितनाथ सबके स्वामी ।
जय संभव भव का करें नाश, अभिनन्दन जग करते प्रकाश ।

जय सुमति-सुमति दायक दयाल, जय पद्म प्रभु हर्षे है ताल ।
जय-जय सुपार्श्व है मुक्ति वास, चंदा प्रभु करते हैं उजाश ।
पुष्पों से सुंदर पुष्पदंत, चंदन से शीतल मुक्ति कंत ।
श्रेयांस नाथ हैं श्रेष्ठ धनी, जय वासुपूज्य तुम मुक्ति सनी ।
निर्मल-निर्मल हैं विमलनाथ, जय प्रभु अनन्त भक्तों के साथ ।
जय धर्म-धर्म को करें दान, जय शान्ति-शान्ति दाता महान ।
जय कुंथुनाथ चक्री विशेष, अर जिन के संग न कर्म लेश ।
जय मल्लिनाथ शिव शांति वरें, मुनिसुव्रत पीड़ा दूर करें ।
जय नमिनाथ निज ध्यान किया, नेमी भव बंधन तोड़ दिया ।
पारस सब चिंता दूर करें, श्री महावीर का ध्यान धरें ।
कर्मों के हम तो हैं सताये, चौबिस जिन की पूजा रचायें ।
मन वच तन से हम करें भक्ति, संसार चक्र से होय मुक्ति ।

समुच्चय अर्घ्य

दोहा : चौबीसों के चरण पद, जो पूजें सुखकार ।
"स्वस्ति" मोक्ष पदवी मिले, आतम आनन्दकार ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय पूणार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हवन विधि

हवन के लिये किसी काफी लम्बे-चौड़े स्थान मे तीन कुण्ड बनावें। वे कुंड इस प्रकार हों- प्रथम तीर्थंकर कुंड एक अरत्नि (मुष्टि बंधे हाथ को अरत्नि कहते हैं) लंबा इतना ही चौड़ा चौकोर हो और इतना ही गहरा हो इसकी तीन कटनी हों पहली 5 अंगुल की ऊंची, चौड़ी, दूसरी 4 अंगुल की, तीसरी 3 अंगुल की हो। इस कुंड के दक्षिण की ओर त्रिकोण कुंड उसी प्रमाण से लंबा चौड़ा गहरा हो तथा उत्तर की ओर गोल कुंड उतनी ही लम्बाई, चौड़ाई और गहराई वाला हो। प्रत्येक कुंड का एक-दूसरे से अन्तर चार-चार अंगुल का होना चाहिये। इन कुण्डों के चारों ओर कटनियों पर ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं लिखना चाहिये।

ये कुंड कच्ची ईंटों से एक दिन पहले तैयार करा लेने चाहियें और इन्हें अच्छे सुन्दर रंगों से रंग देना चाहिये। भीतर का भाग पीली या सफेद मिट्टी से पोत देना चाहिये-कुंडों की तीनों कटनियों पर चार 2 पतली खूंटी गाढ़ें या छोटे-छोटे गिलास रखें जिनमें कलावा लपेटा जा सके। कलावा लपेटते समय यह मन्त्र बोलना चाहिये।

ॐ ह्रीं अर्हं पंचवर्णसूत्रेण त्रीन् वरान् वेष्टयामि।

इस प्रकार एक खूंटी से दूसरी खूंटी और दूसरी से तीसरी चौथी खूंटी तक कलावा लपेटें।

कुण्डों के पास दक्षिण या पश्चिम में एक वेदी लगावें जैसे पाठ के मांडले के पास लगाई थी उसमें सिद्धयंत्र विराजमान करें। वेदी के पास एक चौकी रखें जिस पर मंगल कलश रखा जाये तथा एक बड़ी संदली पर एक बड़ा और कुछ छोटे कलश (गिलास) जल से भरे रखकर मंत्र द्वारा जल शुद्ध करें।

जल शुद्धि मन्त्र

(हाथ में चंदन लेकर कलशों पर छिड़कें)

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः ऽर्हते भगवते पद्ममहापद्मतिगिञ्छ

केसरिपुण्डरीकमहापुण्डरीकगंगासिन्धुरोहिद्रोहितास्या हरिद्धरि-कान्तासीतासीतोदानारी नरकान्तासुवर्णरूप्यकूलारक्तारक्तो दापयोधिशुद्ध जलसुवर्णघट प्रक्षालित नवरत्नगंधाक्षतपष्पा-चिंतमामोदकं पवित्रं कुरू कुरू झं झं झ्रौं झ्रौं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं सः स्वाहा।

इस मन्त्र से जल शुद्धि करें।

वेदी के पास जो चौकी है उस पर अक्षत बिछाकर बड़ा मंगल कलश स्थापन करें तब यह श्लोक और मंत्र पढ़ें।

वेद्या मूले पंचरत्नोंपशोभं, कंठे लंबान् माल्यमादर्शयुक्तं ।
माणिक्याभं कांचनं पूगदर्भस्त्रक्वासोभं सद्घटं स्थापयेद् वै ।।

ॐ ह्रीं अर्हं मंगलकलशस्थापनं करोमि स्वाहा।

अब चार छोटे कलश कुंडों पर स्थापना करें तब यह मन्त्र पढ़ें।

ॐ ह्रीं स्वस्तये चतुःकलशान् संस्थापयामि स्वाहा।

फिर कुंडों पर चार-चार दीपक जलाकर धरें तब यह मन्त्र पढ़ें।

ॐ ह्रीं अज्ञानतिमिरहरं दीपकं संस्थापयामि

फिर पूजा की सामग्री तथा हवन सामग्री शुद्ध करें तब यह मन्त्र पढ़ें।

ॐ ह्रीं पवित्रतरजलेन शुद्धिं करोमि स्वाहा।

फिर डाभ के पूले से हवन की भूमि को झाड़ें तब यह मन्त्र पढ़ें।

ॐ ह्रीं वायुकुमाराय सर्वविघ्नविनाशाय मही पूतां कुरू कुरू हूं फट् स्वाहा।

फिर डाभ का पूला जल में भिगोकर पृथ्वी पर छिड़कें तब यह मंत्र पढ़ें।

ॐ ह्रीं मेघकुमाराय धरां प्रक्षालय प्रक्षालय अं हं तं पं स्वं झं झं यं क्षः फट् स्वाहा।

फिर यन्त्र का प्रक्षाल करें तब यह मन्त्र पढ़ें।

ॐ भूर्भुवः स्वरिह एतद्विघ्नौघवारकं यन्त्रमहं परिषिंचयामि।

फिर यन्त्र की पूजा करे। इसके बाद अग्निकुंड में सांथिये बनावे या ॐ लिखें। पीछे कुण्ड में कपूर और डाभ के पूले से अग्नि

स्थापित करे तब यह मन्त्र पढ़े।

ॐ ॐ ॐ ॐ रं रं रं रं अग्नि संस्थापयामि स्वाहा।

फिर कुण्डों में एक-एक अर्घ दें। प्रथम चतुष्कोण की पूजा।

श्रीतीर्थनाथपरिनिर्वृतिपूज्यकाले, आगत्य वह्निसुरपा मुकुटोल्लसद्भि:।
वह्निव्रजैर्जिनपदेऽहमुदारभक्त्या, देहुस्तदग्निमहमर्चयितुं दधामि।।

ॐ ह्रीं चतुरेस्त्रतीर्थंकरकुण्डे गार्हपत्याग्नयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणाधिपानां शिवयातिकालेऽ, ग्नीन्द्रोमांगस्फुरदग्निरेष:।
संस्थाप्य पूज्य: स महाह्वनीयो, विधानशान्तौ विधिना हुताश:।।

ॐ ह्रीं द्वितीयेवृत्ते गणधरकुण्डे आह्वनीयाग्नयेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री दक्षिणाग्नि: परकेवलिस्व-, शरीरनिर्वाणनुताग्निदेव-।
किरीटसंस्फुर्यदसौ मयापि, संस्थाप्य पूज्यो हि विधानशान्त्यै।।

ॐ ह्रीं त्रिकोणे सामान्यकेवलिकुण्डे दक्षिणाग्नयेऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

इसके पश्चात् निम्नलिखित मंत्रों की आहुति देनी चाहिये।

पीठिका मन्त्र

ॐ सत्यजाताय नम: ।।1।। ॐ अर्हज्जाताय नम: ।।2।। ॐ परमजाताय नम: ।।।। ॐ अनुपमजाताय नम: ।।4।। ॐ स्व प्रधानाय नम: ।।5।। ॐ अचलाय नम: ।।6।। ॐ अक्षयाय नम: ।।7।। ॐ अव्याबाधाय नम: ।।8।। ॐ अनन्तज्ञानाय नम: ।।9।। ॐ अनन्तदर्शनाय नम: ।।10।। ॐ अनन्तवीर्याय नम: ।।11।। ॐ अनन्तसुखाय नम: ।।12।। ॐ नीरजसे नम: ।।13।। ॐ निर्मलाय नम: ।।14।। ॐ अछेद्याय नम: ।।15।। ॐ अभेद्याय नम: ।।16।। ॐ अजराय नम: ।।17।। ॐ अमराय नम: ।।18।। ॐ अप्रमेयाय नम: ।।19।। ॐ अगर्भवासाय नम: ।।20।। ॐ अक्षोभाय नम: ।।21।। ॐ अविलीनाय नम: ।।22।। ॐ परम धनाय नम: ।।23।। ॐ परमकाष्ठायोगरूपाय नम: ।।24।। ॐ

लोकाग्रवासिने नमो नम: ।।25।। ॐ परमसिद्धेभ्यो नमोनम: ।।26।। ॐ अर्हत्सिद्धेभ्यो नमोनम: ।।27।। ॐ केवलिसिद्धेभ्यो नमोनम: ।।28।। ॐ अनंतकृत्सिद्धेभ्यो नमोनम: ।।29।। ॐ परम्परा-सिद्धेभ्यो नमोनम: ।।30।। ॐ अनादिपरम्परासिद्धेभ्यो नमोनम: ।।31।। ॐ अनाद्यनुपमसिद्धेभ्यो नमोनम: ।।32।। ॐ सम्यग्दृष्टे आसन्नभव्य निर्वाणपूजार्ह अग्नींद्राय स्वाहा ।।33।।

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधिमरणं भवतु स्वाहा।

जाति मन्त्र

ॐ सत्यजन्मन: शरणं प्रपद्ये ।।1।। ॐ अर्हज्जन्मत: शरणं प्रपद्ये ।।2।। ॐ अर्हन्मातु: शरणं प्रपद्ये ।।3।। ॐ अर्हत्सुतस्य शरणं प्रपद्ये ।।4।। ॐ अनादिगमनस्यशरणं प्रपद्ये ।।5।। ॐ अनुपमजन्मन: शरणं प्रपद्ये ।।6।। ॐ रत्नत्रयस्य प्रपद्ये ।।7।। ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे ज्ञानमूर्ते ज्ञानमूर्ते सरस्वति सरस्वति स्वाहा। ।।8।।

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधि मरणं भवतु स्वाहा।

निस्तारक मन्त्र

ॐ सत्यजाताय स्वाहा ।।1।। ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ।।2।। ॐ षट्कर्मणे स्वाहा ।।3।। ॐ ग्रामपतये स्वाहा ।।4।। ॐ अनादि श्रोत्रियाय स्वाहा ।।4।। ॐ स्नातकाय स्वाहा ।।5।। ॐ श्रावकाय स्वाहा ।।6।। ॐ देवब्राह्मणाय स्वाहा ।।7।। ॐ सुब्राह्मणाय स्वाहा ।।8।। ॐ अनुपमाय स्वाहा ।।9।। ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे निधि पते निधिपते वैश्रवण वैश्रवण स्वाहा ।।10।।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधि मरणं भवतु स्वाहा।

ऋषिमन्त्र

ॐ सत्यजाताय नम: ।।1।। ॐ अर्हज्जाताय नम: ।।2।। ॐ निर्ग्रन्थाय नम: ।।3।। ॐ वीतरागाय नम: ।।4।। ॐ महाव्रताय नम: ।।5।। ॐ त्रिगुप्ताय नम: ।।6।। ॐ महायोगाय नम: ।।7।।

ॐ विविधयोगाय नमः ।।8।। ॐ विविधर्द्धये नमः ।।9।। ॐ अंगधराय नमः ।।10।। ॐ पूर्वधराय नमः ।।11।। ॐ गणधराय नमः ।।12।। ॐ परमऋषिभ्यो नमो नमः ।।13।। ॐ अनुपम जाताय नमः ।।14।। ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे भूपते भूपते नगरपते नगरपते कालश्रमण कालश्रमण स्वाहा ।।15।।

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधि मरणं भवतु स्वाहा।

सुरेन्द्र मन्त्र

ॐ सत्यजाताय स्वाहा ।।1।। ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ।।2।। ॐ दिव्यजाताय स्वाहा ।।3।। ॐ दिव्यार्चिजाताय स्वाहा ।।4।। ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ।।5।। ॐ सौधर्माय स्वाहा ।।6।। ॐ कल्पाधिपये स्वाहा ।।7।। ॐ अनुचराय स्वाहा ।।8।। ॐ परमरेन्द्राय स्वाहा ।।9।। ॐ अर्हमिन्द्राय स्वाहा ।।10।। ॐ परमार्हताय स्वाहा ।।11।। ॐ अनुपमाय स्वाहा ।।12।। ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे कल्पपते कल्पपते दिव्यमूर्ते दिव्यमूर्ते वज्रनामन् वज्रनामन् स्वाहा ।।13।।

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधि मरणं भवतु स्वाहा।

परमराजादि मन्त्र

ॐ सत्यजाताय स्वाहा ।।1।। ॐ अर्हज्जाताय स्वाहा ।।2।। ॐ अनुपमेन्द्राय स्वाहा ।।3।। ॐ विजयार्च्यजाताय स्वाहा ।।4।। ॐ नेमिनाथाय स्वाहा ।।5।। ॐ परमजाताय स्वाहा ।।6।। ॐ परमार्हताय स्वाहा ।।7।। ॐ अनुपमाय स्वाहा ।।8।। ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे उग्रतेजः उग्रतेजः दिशांजन दिशांजन नेमिविजय नेमिविजय स्वाहा ।।9।।

सेवाफलं षट् परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधि मरणं भवतु स्वाहा।

परमेष्ठि मन्त्र

ॐ सत्यजाताय नमः ।।1।। ॐ अर्हज्जाताय नमः ।।2।। ॐ परमजाताय नमः ।।3।। ॐ परमार्हताय नमः ।।4।। ॐ परमरूपाय

नमः ।।5।। ॐ परमतेजसे नमः ।।6।। ॐ परमगुणाय नमः ।।7।। ॐ परमस्थानाय नमः ।।8।। ॐ परमयोगिने नमः ।।9।। ॐ परमभाग्याय नमः ।।10।। ॐ परमर्द्धये नमः ।।11।। ॐ परम प्रसादाय नमः ।।12।। ॐ परमकांक्षिताय नमः ।।13।। ॐ परम विजयाय नमः ।।14।। ॐ परमविज्ञानाय नमः ।।15।। ॐ परम दर्शनाय नमः ।।16।। ॐ परमवीर्याय नमः ।।17।। ॐ परमसुखाय नमः ।।18।। ॐ परमसर्वज्ञाय नमः ।।19।। ॐ अर्हते नमः ।।20।। ॐ परमेष्ठिने नमः ।।21।। ॐ परमनेत्रे नमो नमः ।।22।। ॐ सम्यग्दृष्टे सम्यग्दृष्टे त्रैलोक्यविजय त्रैलोक्यविजय धर्ममूर्ते धर्म मूर्ते धर्मनेमे धर्मनेमे स्वाहा ।।23।।

सेवाफलं षट्परमस्थानं भवतु, अपमृत्युविनाशनं भवतु समाधि मरणं भवतु स्वाहा।

धूपे सन्धूपितानेक-कर्मभिर्धूपदायिनः अर्चयामि जिनाधीश-सदा गमगुरून् गुरून् ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीमज्जिनश्रुतगुरूभ्यो नमः धूपम् ।

सुरभीकृतदिग्व्रातै धूपेधूमैर्जगतप्रियैः । यजामि जिनसिद्धेश-सूर्य्यू पाध्यायसद्गुरून ।।2।।

ॐ ह्रीं पंचपरमेष्ठिभ्यो नमः धूपम् ।

मृद्वग्निसंगमसमुज्वलितोरूधूमैः कृष्णागुरूप्रभृतिसुन्दरवस्तुधूपैः ।

प्रीत्या नटद्भिरिव ताण्डवनृत्यमुच्चैः कर्मारिदारूदहनं जिनमर्चयामि ।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हत्परमेष्ठिने नमः धूपम् ।

गोत्रक्षयसंभवसततसंभव-सद्गुरूलघुतारूपपरम् ।

सर्गमसर्गमपीतमनुक्षण-मुज्झितसर्गासर्गभरम् ।।

कृष्णागुरूधूपैः सुरभितभूपैर्धूमैः स्पष्टहरिद् पै-र्यायज्मः सिद्धं सर्वविशुद्धं बुद्धमरूद्धं गुणरूद्धम् ।।4।।

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिने नमः धूपम् ।

हुत्वास्वमप्यगुरूभिः सुरभीकृताशै-रग्नौ समुच्छलितसंभृतवृन्दधूपैः।

संधूपयामि चरणं शरणं शरण्यं, पुण्यं भवभ्रमहरं गणिनां मुनीनाम् ।।5।।

ॐ ह्रीं आचार्यपरमेष्ठिने नमः धूपम् ।

सधूपिताखिलदिशो धनशकयेह, वहिव्रज स्वनटनादिव नयंयद्भि:।
मृद्वग्निसंगतितताग‍ुरूधूपधूमै:, श्रीपाठकं क्रमयुगं वयमाह्वयाम: ।।6।।
ॐ ह्रीं उपाध्याय परमेष्ठिने नम: धूपम् ।
स्वमग्नौ विनिक्षिप्य दौर्गंध्यबंधम्, दशाशास्यमुच्चै: करोति त्रिसंध्यम्।
तदुद्दामकृष्णागुरूद्रव्यधूपै:, यजे साधुसंघं नटद्व्यक्तरूपै: ।।7।।
ॐ ह्रीं साधुपरमेष्ठिने नम: धूपम् ।
धूपै: संधूपितानेककर्मभिर्धूपदायिन:।
वृषभादिजिनाधीशान्, वर्द्धमानान्तकान्यजे ।।8।।
ॐ ह्रीं वृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनेभ्यो नम: धूपम् ।

इसके पश्चात् जिस मन्त्र की जितनी जाप की है, उसके दशमांश उस मन्त्र की आहुति देनी चाहिये।

शान्तिधारा

आचार्य हाथ में कलश लेकर जल की धारा देता हुआ नीचे लिखा पुण्याहवाचन पढ़ें।

ॐ पुण्याहं पुण्याहं। लोकोद्योतनकरा अतीतकालसंजाता निर्वाण सागर महासाधुविमलप्रभशुद्धामश्रीधरसुदत्तामलप्रमोद्धगग्निसन्मति शिव कुसुमांजलि शिवगणोत्साहज्ञानेश्वरपरमेश्वरविमलेश्वर यशोधर कृष्णमतिज्ञानमतिशुद्धमतिश्रीभद्रकांता श्चेति चतुर्विंशतिभूतपरम-देवाश्च व: प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।।धारा।।1।।

ॐ संप्रतिकालश्रेयस्करस्वर्गावतरणजन्माभिषेकपरिनिष्क्रमण-केवलज्ञाननिर्वाणकल्याणविभूषितमहाभ्युदया: श्रीवृषभाजितशंभवा-भनंद नसुमतिपद्मप्रभसुपार्श्वचन्द्रप्रभपुष्पदंतशीतलश्रेयोवासुपूज्य विमला नंतधर्मशांतिकुंथ्वरमल्लिमुनिसुव्रतनमिनेमपार्श्ववर्द्धमानाश्चेति वर्तमान चतुर्विंशतिपरदेवाश्च व: प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।। धारा ।।2।।

ॐ भविष्यत्कालाभ्युदयप्रभवा: महापद्मसुरदेवसुप्रभस्वयंप्रभ सर्वायुधजयदेवोदयदेवप्रभादेवोदंदेव प्रश्नकीर्तिजयकीर्तिपूर्णबुद्धनि: कषायविमलप्रभवहलनिर्मलचित्रगुप्त समाधिगुप्तस्वयंभूकंदर्पजयनाथ विमलनाथदिव्यवागनंतवीर्याश्चेति चतुर्विंशतिभविष्यत्परमदेवाश्च व: प्रीयंतां प्रीयन्ताम् ।। धारा ।।3।।

ॐ त्रिकालवतिपरमधर्माभ्युदया: सीमंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहुसंजा-तकस्वयंप्रभऋषभेश्वरानंतवीर्यसूरप्रभविशालकीर्तिवज्रधर चंद्राननचंद्र

बाहुभुजगेश्वरनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रजयदेवाजितवीयोश्चेति पचविदेह क्षेत्रविहरमाणा विंशतिपरमदेवाश्च चः प्रीयन्तां प्रीयंताम् ।।धारा।।4।।

ॐ वृषभसेनादिगणधरदेवाः वः प्रीयंतां प्रीयन्ताम् ।।धारा।। 5।।

ॐ कोष्ठबीजपादानुसारिबुद्धिर्सभिन्नश्रोतृप्रज्ञाश्रवणाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।।धारा।। 6।।

ॐ आमर्पच्वेडजल्लाविड्डुत्सर्गसर्वोषधिऋद्धयश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।।धारा।। 7।।

ॐ जलफलजंघातन्तुपुष्पश्रेणिपत्राग्निशिखाकाशचारणाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।।धारा।। 8।।

ॐ आहाररसवदक्षीणमहानसालयाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।।धारा।। 9।।

ॐ उग्रदीप्ततप्तमहाघोरानुपमतपसश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।।धारा।। 10।।

ॐ मनोवाक्कायबलिनश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।।धारा।।11।।

ॐ क्रियाविक्रियाधारिणश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।।ध
ारा।।12।।

ॐ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानिनश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।।धारा।।13।।

ॐ अंगांगबाह्यज्ञानदिवाकराः कुन्दकुन्दाद्यनेकदिगंबरदेवाश्च वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम् ।।धारा।।14।।

इह वाऽन्यनगरग्रामदेवतामनुजाः सर्वे गुरूभक्ताः जिनधर्मपरायणा भवंतु ।।धारा ।।15।।

दानतपोवीर्यानुष्ठानं नित्यमेवास्तु ।।धारा ।। 16।।

मातृपितृभ्रातृपुत्रपौत्रकलत्रसुहृत्स्वजनसंबंधिसहितस्य अमुकस्य. ते धनधान्यैश्वर्यबलद्यु तिशयःप्रमोदोत्सवाः........... प्रबर्द्धताम् ।।धारा।। 17।।

तुष्टिरस्तु। पुष्टिरस्तु। वृद्धिरस्तु। कल्याणमस्तु। अविघ्नमस्तु। आयुष्यमस्तु। आरोग्यमस्तु। कर्मसिद्धिरस्तु। इष्टसंपत्तिरस्तु। काम मांगल्योत्सवाःसन्तु। पापानि शाम्यंतु। घोराणि शाम्यंतु। पुण्यं वर्द्धतां। ध
र्मो वर्द्धतां। श्रीर्वर्द्धतां। कुलंगोत्रं चाभिवर्धेतां। स्वस्ति भद्रं चास्तु झ्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा। श्रीमज्जिनेन्द्रचरणारविंदेष्वानन्द भक्तिः सदास्तु।

।। इति हवन विधान समाप्त ।।

"गंध कुटी पूजा"

दोहा

गंध कुटी के मध्य में, राजे देव महान्
द्रव्य थाल ले हाथ में, शत्-शत् करूं प्रणाम
छत्र फिरे वंदन लगे, शोभा हर्ष अपार
अतिशय प्रगटे देव के, दिखे धर्म का सार ॥१॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटी समूह। अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटी समूह अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटी समूह। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

(नीरगंध.....)

हे जगत के देव मेरी, प्रार्थना सुनीजिये।
ले के जल मैं आ गया, ध्यान मुझपे दीजिए।
गंधकुटी पूजहूँ, जी जिनेश राजते।
दर्श होय एक बार, कर्म सारे भाजते॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतरंग शांत हो, ताप दूर कीजिए।
विभाव से स्वभाव हो, भक्त शर्ण लीजिए॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्यः चंदन......

स्वार्थ औ पदार्थ में, समस्त अर्थ भूलते।
ज्ञान मूर्ति आप हो, नहिं जगत में झूलते॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्यः अक्षतं......

दर्श ज्ञान सौख्य वीर्य, निजात्म के ही संग में
परन्तु कर्म ढांकते, रंगे उसी के रंग में

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्य: पुष्पं.......

भूख भौज्य मांगता, ना आत्म ध्यान ध्यावता,
भूख नष्ट हो मेरी तो, मैं चरण में आवता।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्य: नैवेद्यं..........

ज्ञान रश्मि का प्रकाश, भौतिकी से तेज है,
पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो, धर्म की ये सेज है।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्य: दीपं..........

सर्वव्यापी धर्म है, किंतु धर्म दूर है,
धूप कर्म की उड़े, औ ज्ञान आवे पूर है।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्य: धूपं........

कर्म देव सौख्य दु:ख, शोक हर्ष में करूँ,
चाहूँ फल मैं मुक्ति का, नित चरण में फल धरूँ।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्य: फलं........

अष्ट द्रव्य अर्घ्य ले, पूजने को आ गया,
तेरा ही स्वरूप मुझे, हे जिनेन्द्र भा गया।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित गंध कुटीभ्य: अर्घ्यं........

"अथ प्रत्येक अर्घ्यं"

दोहा

आत्मज्ञान प्रतिबिम्ब है, ज्ञान का तेज अपार,
ज्ञानी मेरे देव है, देवे सौख्य अपार।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलि ....

"चाल"

रत्नोमय पीठ बने हैं, किरणों के पुंज घने हैं,
श्री आदिनाथ जिनदेवा, मैं करूँ चरण की सेवा।

यह गंध कुटी शुभ प्यारी, जिनवर की शोभा न्यारी,
भावों से अर्घ्य चढ़ायें, हम समवशरण में जायें।।

ॐ ह्रीं वृषभदेवसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंध कुट्यै अर्घ्यं निर्वपामीति..

निष्काम योग को धारा, कर्मों का रेला हारा,
जिन अजित जगत को जीते, सारे कर्मों से रीते।। यह गंध।।

ॐ ह्रीं अजितनाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं.........

पी आत्मानंद का प्याला, तोड़ा कर्मों का जाला,
संभव भव संभव करते, सारे कर्मों को हरते। यह गंध...

ॐ ह्रीं संभवनाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं.......

सौभाग्य जगा नंदन का, मेला छूटा बंधन का,
अभिनंदन आनंद पाये, ज्ञानामृत भी बरसाये। यह गंध...

ॐ ह्रीं अभिनंदननाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं.....

अंतस का सूर्य उगाया, फिर ज्ञान किरण फैलाया,
सुमति का धन बढ़ जाये, पाने चरणों में आये। यह गंध...

ॐ ह्रीं सुमतिनाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं........

सिंहासन रत्न जड़े हैं, द्वारों पर देव खड़े हैं,
निज धर्म फूल खिल जाये, पदमा की शरणा आये। यह गंध....

ॐ ह्रीं पद्मप्रभुनाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं.........

गंगा सम स्वच्छ बनाये, आतम में ध्यान लगाये,
दिव्यामृत जिनवर देते, संकट सारे हर लेते। यह गंध....

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं........

आराध्य हमारे चंदा, आराधक आया बंदा,
उजियारा प्रभु फैलाओ, चरणों के पास बुलाओ। यह गंध....

ॐ ह्रीं चंद्रप्रभजिनसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं........

सारे थे शुभ ही लक्षण, पाया था रूप विलक्षण,
हे पुष्पदंत जी भगवन, आया हूँ तेरे चरणान। यह गंध....

ॐ ह्रीं पुष्पदंतजिनसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं.......

तप से शीतलता पाई, शीतल शुभ गंध उड़ाई,
शीतल-शीतल के देवा, नित करूँ आपकी सेवा। यह गंध....

ॐ ह्रीं शीतलनाथजिनसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं....

नीति-रीति अपनाई, तप सौख्य संपदा पाई,
श्रेयांस श्रेष्ठ पद पाया, चरणों में भाव जगाया। यह गंध....

ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथजिनसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं....

तज राग द्वेष का मेला, हो वीतरागी जिन बेला,
वसुधा पर जिनवर आये, घर द्वार छोड़ हम आये। यह गंध....

ॐ ह्रीं वासुपूज्यजिन समवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं....

भक्तों का हृदय खिलाया, सम्यक् दर्शन दिलवाया,
जय विमलनाथजिन स्वामी, दुख मेटो अंतर्यामी। यह गंध....

ॐ ह्रीं विमलनाथजिन समवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं..

स्वर्णिम इतिहास बनाया, आदर्शमयी पथ पाया,
कर्मों का अंत है कीना, शाश्वत सुख को पा लीना। यह गंध....

ॐ ह्रीं अनंतनाथजिन समवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं...

निर्लिप्त निरंजन हो तुम, पापों के भंजन हो तुम,
जिनधरम धरम को बांटें, सबके पापों को छांटें। यह गंध...

ॐ ह्रीं धर्मनाथजिनसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं.......

भक्तों को शक्ति देते, कर्मों को सब हर लेते,
श्री शान्तिनाथजी देवा, मैं करूं आपकी सेवा। यह गंध....

ॐ ह्रीं शान्तिनाथजिनसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं........

शुभ समवसरण रचवाया, भक्तों को पास बुलाया,
संदेश धर्म का देते, काले कलमश हर लेते। यह गंध....

ॐ ह्रीं कुंथुनाथजिनसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं.......

आतम पर शासन कीना, आतम से आतम लीना,
अर अरि कर्म विनशाऐं, मुक्ति में जा बस जायें। यह गंध....

ॐ ह्रीं अरनाथजिनसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं......

सतयुग में सत की सत्ता, प्रगटाई थी भगवत्ता,
निज कर्मों का मल धोया, ना पाप बीज का बोया। यह गंध....

ॐ ह्रीं मल्लिनाथजिनसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं....

केवल की किरणे फैली, गणधर ने वाणी झेली,
मुनिसुव्रत व्रत को देते, आतम की शुद्धि करते। यह गंध....

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतनाथजिनसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं....

घनघोर तपस्या कीनी, निज में निज दृष्टि दीनी,
जिन भेद ज्ञान प्रगटाया, मैं समोशरण में आया। यह गंध....

ॐ ह्रीं नमिनाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं..........

जग में हो करूणा नंदन, हम करते तुमको वंदन,
राजुल से मुख को मोड़ा, मुक्ति से नाता जोड़ा। यह गंध....

ॐ ह्रीं नेमिनाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं...........

पारस अमृत बरसाते, भक्ति से भक्त नहाते,
मैं अमृत पाने आया, चरणों में अर्घ्य चढ़ाया। यह गंध....

ॐ ह्रीं पार्श्वनाथसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं.........

अंतिम तीर्थंकर वीरा, जैसे रत्नों में हीरा,
सुर नर पूजा को आये, आकर के अर्घ्य चढ़ाये। यह गंध....

ॐ ह्रीं महावीरसमवसरण स्थित तृतीय पीठोपरि गंधकुट्यै अर्घ्यं.........

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

मंत्रजाप्य-ॐ ह्रीं समवसरणमपद्मसूर्यवृषभादिवर्द्धमानान्तेभ्यो नमः।

"दोहा"

अष्ट द्रव्य मंगल सहित, गंधकुटी शुभ जान,
वास करें जिनदेव जी, शत्-शत् करूँ प्रणाम।

जयमाला

"चौपाई"

तीर्थंकर को नमस्कार हो,
जिनवर जी को नमस्कार हो
गंधकुटी शुभ शोभा पाये,
करने दर्शन भक्त भी आये
सम्पत्ति स्वर्गों से आयी
समवसरण रचना करवायी
हाथ जोड़कर इंद्र भी बैठे
रूप निहारे जिनवर देखे
चहुँ दिश में सजती मालायें
नृत्य करे संग में बालायें

कनक कांति सम रूप सम्हारे, भक्त एकटक तुम्हें निहारे
ध्वज की पंक्ति शोभ बढ़ायें, केशरिया सम गगन दिखाये
रत्न जड़ित सिंहासन प्यारा, दूर-दूर से दिखे नजारा
मंगल द्रव्य है मंगलकारी, द्रव्य आठ लगते सुखकारी
दिव्य ध्वनि उपदेश की वाणी, गणधर समझाते बन ज्ञानी
महिमा प्रभु गणधर भी गायें, तो भी ना पूरी कर पायें
झूम-झूम कर इंद्र भी नाचे, धर्म कथा को नित ही वाचे

मंद वृष्टि अरु, शीतल वायु,
घटती ना है कुछ भी आयु।
वृक्ष अशोक जिनके पीछे,
प्रभुवर बैठे आंखें मीचे।
शुभ तीन छत्र सिर पर फिरते,
सब फूल पंक्तियों में गिरते।
हिंसा होती है वहां नहीं,
चोरी का कोई धाम नहीं।

आंसू का कोई काम नहीं
दुख का होवे विश्राम नहीं।
आगम ने गम को है मारा,
सुख ने सारे दुख को तारा।
शास्त्रों ने शस्त्र को दूर किया,
अम्बर ने वस्त्र को दूर किया।
तम गम नम होकर के जाते,
छल कपट वहाँ न रूक पाते।
चरणों की धूलि सिर धारूं,
फिर नहिं किसी से मैं हारूं।
श्रद्धा भी है विश्वास भी है,
भक्ति करती हूँ आश भी है।
आतम दर्शन मम करवाना,
निज आतम रूप संवर जाना।
डाली से टूटे फूल तभी,
जब होय समाधि मेरी सही
चेतन औ तन को पहचानूं
दोनों को भिन्न-भिन्न जानूं
मिट्टी की मूर्ति बन जाये,
भक्ति से आत्म निखर जाये
मैं नहीं कभी लाचार बनूं।
दुखियों के आंसू पोंछ सकूं,
दुखियों के दुःख को दूर करूं।
किसकी दुनियां किसका नाता,
स्वारथ के साथी सब भ्राता।
जब मोह नष्ट हो जायेगा,
यह जनम मरण नश जायेगा।

तुम मोह से नाता तोड़ लिया,
आतम से नाता जोड़ दिया।
तुम सत्य सूर्य प्रगटाया है,
भक्तों को ज्ञान सिखाया है।
हम गंध कुटी के दर्श करें,
दर्शन करके हम हर्ष धरें।
समकित रत्नों को पाऊँ मैं,
मुक्ति में जा बस जाऊँ मैं।
''स्वस्ति'' को चरणों में रखना,
शुभ गंधकुटी का रस चखना।

''दोहा''

गंध कुटी शुभ तीर्थ है, करूँ नित्य स्नान।
मिले आसरा प्रभु चरण, बारम्बार प्रणाम्।

ॐह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवसरण स्थित तृतीय पीठोपरिचतुर्विंशति गंधकुटीभ्य: जयमाला पूर्णार्घ्यं.....।

धरूँ आशिका शीश पर, शुभाशीष दे देव।
भव सागर से तर सकूं, करूँ आपकी सेव।

तीर्थंकर गुण पूजा

त्रिभंगी छंद

स्वर्ग से आकर, जनम को लेकर, तीर्थंकर पदवी पाई।
वैराग्य बढाया, ध्यान लगाया, ज्ञान सूर्य प्रगटा भाई॥
छयालीस मूलगुण, हैं अनंत गुण, जग में ही विख्यात हुए।
आह्वान जिनवर, मूरत मनहर, तेरे चरण को जाय छुऐं॥१॥

ॐ ह्रीं षट्त्वारिंशद् गुणमंडित चर्तुविंशति तीर्थंकर समूह! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित चर्तुविंशति तीर्थंकर समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं।

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित चर्तुविंशति तीर्थंकर समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(तर्ज : हे दीनबन्धू ....)

जल ले के आया, चरणों में चढ़ाऊँगा प्रभो।
ये आत्मा धुलेगी, भाव भाऊँगा विभो।
अरिहंत ने, सभी को मुक्ति पंथ दिखाया
भगवान की पूजा करें, मैं भाव ये भाया॥१॥

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव ताप का संताप, मुझे कष्ट दिलाता।
चंदन से करुं पूजा, जो भव ताप नशाता।
अरिहंत ने सभी को, मुक्ति पंथ दिखाया
भगवान की पूजा करें, मैं भाव ये भाया॥२॥

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ अक्षतों का थाल प्रभु, भाव से लाया।
अक्षयपुरी के वासी बने, सुनके मैं आया।
अरिहंत ने, सभी को मुक्ति पंथ दिखाया
भगवान की पूजा करें, मैं भाव ये भाया॥३॥

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

तेला करें, बेला करें, संयम में ध्यान है।
पुष्पों से पूजते तुम्हें, आतम का ज्ञान है।
अरिहंत ने, सभी को मुक्ति पंथ दिखाया
भगवान की पूजा करें, मैं भाव ये भाया॥४॥

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ये इंद्रियों का भूत कभी, शान्त ना होवे।
नैवेद्य से पूजा करुं, ये भूख को खोवे।

अरिहंत ने, सभी को मुक्ति पंथ दिखाया
भगवान की पूजा करें, मैं भाव ये भाया॥५॥

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आराधना आराध्य की, शिव द्वार दिखाए।
आधार है प्रभु आपका, शिव पथ पे चलाए।
अरिहंत ने, सभी को मुक्ति पंथ दिखाया
भगवान की पूजा करें, मैं भाव ये भाया॥६॥

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्मा को कष्ट दिया, तन सुखी रखा।
मन को किया न वश में, ना ही धर्म को चखा।
अरिहंत ने, सभी को मुक्ति पंथ दिखाया
भगवान की पूजा करें, मैं भाव ये भाया॥७॥

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का बन्ध करने में, हंसता सदा रहा।
फल भोगता हूं रो के, दुखों में फंसा रहा।
अरिहंत ने, सभी को मुक्ति पंथ दिखाया
भगवान की पूजा करें, मैं भाव ये भाया॥८॥

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जो ध्यान करे मुक्ति उसे, स्वयं बुलाती है।
जो भक्ति करे उसको भी, वो पास बिठाती है।
अरिहंत ने, सभी को मुक्ति पंथ दिखाया
भगवान की पूजा करें, मैं भाव ये भाया॥९॥

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद् गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

ध्या करके परमात्मा, दिव्य रूप सद्ज्ञान,
जिनवर की छवि मोहिनी, बारम्बार प्रणाम।

विश्व देश में शान्ति हो, शांति करो भगवान,
पुष्पांजलि कर, पूजते, बारम्बार प्रणाम।

इति आशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षपेत्

प्रत्येक अर्घ्य

जन्म के १० अतिशय

जिनवर तेज विशाल है, देखत नहिं अघाए।
ऐसी सुन्दर आत्मा, शत्-शत् शीश नवाए।

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षपेत्।

शंभू छंद

तीर्थंकर तनु अतिशय कारी, जन्मत ही दस अतिशय होते।
तन से न स्वेद जरा निकले, गुण के भण्डार भरे होते॥
दिव्यात्मा है ये दिव्य पुरुष, अतिशय तन से बरसाते हैं।
तीर्थंकर के गुण गा करके, चरणों में शीश झुकाते हैं॥१॥

ॐ ह्रीं निः स्वेदत्वसहजातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

औदारिक देह को पाया है, फिर भी मलमूत्र नहीं होता।
अतिशय पुण्योदय प्रभु का है, सामान्य जीव में ना होता॥
दिव्यात्मा है ये दिव्य पुरुष, अतिशय तन से बरसाते हैं।
तीर्थंकर के गुण गा करके, चरणों में शीश झुकाते हैं॥२॥

ॐ ह्रीं निर्मलता सहजातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन में बहता है श्वेत रुधिर, वात्सल्य भाव का द्योतक है।
सब जीवों में सम प्रेमभाव, करुणारस का ही रूपक है॥
दिव्यात्मा है ये दिव्य पुरुष, अतिशय तन से बरसाते हैं।
तीर्थंकर के गुण गा करके, चरणों में शीश झुकाते हैं॥३॥

ॐ ह्रीं क्षीरधवलसम रुधिरत्व सहजातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री वज्र वृषभ नाराच शक्ति, कोई भी कष्ट न दे सकता।
इस शक्ती से तप त्याग करे, तो मुक्ती में जाकर बसता॥
दिव्यात्मा हैं ये दिव्य पुरुष, अतिशय तन से बरसाते हैं।
तीर्थंकर के गुण गा करके, चरणों में शीश झुकाते हैं॥४॥

ॐ ह्रीं वज्रऋषभनाराच संहन सहजातिशय गुणमंडितचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर सुडोल सी काया थी, अवयव थे सारे नपे तुले।
सम चतुरस्त्र संस्थान महा, लगता है जैसे फूल खिले॥
दिव्यात्मा है ये दिव्य पुरुष, अतिशय तन से बरसाते हैं।
तीर्थंकर के गुण गा करके, चरणों में शीश झुकाते हैं॥५॥

ॐ ह्रीं सम चतुरस्त्रसंस्थान सहजाातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सारी उपमायें हार गयीं, दुनियां में सबसे सुन्दर थे।
था अहंकार का नाम नहीं, सुन्दरता रूप समुन्दर थे॥
दिव्यात्मा हैं ये दिव्य पुरुष, अतिशय तन से बरसाते हैं।
तीर्थंकर के गुण गा करके, चरणों में शीश झुकाते हैं॥६॥

ॐ ह्रीं अनुपम रूप सहजातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फूलों की खुशबू सम महके, ना कोई इत्र लगाया था।
पिछले भव में संयम धरकर, निज आतम बाग खिलाया था॥
दिव्यात्मा हैं ये दिव्य पुरुष, अतिशय तन से बरसाते हैं।
तीर्थंकर के गुण गा करके, चरणों में शीश झुकाते हैं॥७॥

ॐ ह्रीं सौगंध्य सहजातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक सहस आठ लक्षण तन में, भाग्योदय को बतलाते हैं।
प्रभु तीन जगत में उत्तम हैं, सुर नर मिल शीश झुकाते हैं॥

दिव्यात्मा हैं ये दिव्य पुरुष, अतिशय तन से बरसाते हैं।
तीर्थंकर के गुण गा करके, चरणों में शीश झुकाते हैं॥८॥

ॐ ह्रीं अष्टोत्तर सहस्त्र शुभ लक्षण सहजातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काया में शक्ती है अनन्त, जन्मत ही है अतिशय होता।
जो बड़े-बड़े कलशों का न्हवन, काया में सहज ही सह लेता॥
दिव्यात्मा हैं ये दिव्य पुरुष, अतिशय तन से बरसाते हैं।
तीर्थंकर के गुण गा करके, चरणों में शीश झुकाते हैं॥९॥

ॐ ह्रीं अनन्त बलवीर्य सहजातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हित-मित प्रिय वाणी जिनवर की, कानों में अमृत बरसाती।
सब जीवों को हितकर है ये, सारी सृष्टी सुनने आती॥
दिव्यात्मा है ये दिव्य पुरुष, अतिशय तन से बरसाते हैं।
तीर्थंकर के गुण गा करके, चरणों में शीश झुकाते हैं॥१०॥

ॐ ह्रीं प्रियहितमधुर वचन सहजातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केवल ज्ञान के अतिशय

(चौपाई)

केवल ज्ञान की ज्योति प्रगटाई, दस अतिशय होते हैं भाई
चारों दिशा सुभिक्ष है होता, जीवों में आनन्द भर देता॥
सच्चे प्रभुवर अच्छे प्रभुवर, केवल ज्ञानी ध्यानी प्रभुवर।
भावों से भक्ती को गायें, चरणों में हम शीश झुकायें॥११॥

ॐ ह्रीं गव्यूतिशत चर्तुषट्यसुभिक्षता केवलज्ञान अतिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कमलों की रचना है प्यारी, उस पर चले प्रभु अधिकारी।
पृथ्वी से ऊपर ही चलते, दर्शत दुष्ट पाप ही गलते॥

सच्चे प्रभुवर अच्छे प्रभुवर, केवल ज्ञानी ध्यानी प्रभुवर।
भावों से भक्ती को गायें, चरणों में हम शीश झुकायें॥१२॥

ॐ ह्रीं गगनगमनत्व केवलज्ञानातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गमनागमन अवध है रहता, सब प्राणी को दया के दाता।
करुणा सागर अभय है देते, सब जीवों को निर्भय करते॥
सच्चे प्रभुवर अच्छे प्रभुवर, केवल ज्ञानी ध्यानी प्रभुवर।
भावों से भक्ती को गायें, चरणों में हम शीश झुकायें॥१३॥

ॐ ह्रीं प्राणीवधाभाव केवलज्ञानातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक कोटि है पूरब केवल, बिन आहार रहेगा तन बल।
ज्ञानामृत भोजन कर लेते, भक्तों को अमृत हैं देते॥
सच्चे प्रभुवर अच्छे प्रभुवर, केवल ज्ञानी ध्यानी प्रभुवर।
भावों से भक्ती को गायें, चरणों में हम शीश झुकायें॥१४॥

ॐ ह्रीं कवलाहाराभाव केवलज्ञानातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव मनुज तिर्यंच न क्रोधी, निकट आए आतम के बोधी।
साता कर्म फलित है होता, नहिं उपसर्ग प्रभू पर होता॥
सच्चे प्रभुवर अच्छे प्रभुवर, केवल ज्ञानी ध्यानी प्रभुवर।
भावों से भक्ती को गायें, चरणों में हम शीश झुकायें॥१५॥

ॐ ह्रीं उपसर्गाभाव केवलज्ञानातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों दिश में प्रभु मुख दिखता, लेकिन एक दिशा में रहता।
चतुर्मुखी ब्रह्मा कहलाये, दिव्य रूप अपने प्रगटाये॥
सच्चे प्रभुवर अच्छे प्रभुवर, केवल ज्ञानी ध्यानी प्रभुवर।
भावों से भक्ती को गायें, चरणों में हम शीश झुकायें॥१६॥

ॐ ह्रीं चतुर्मुखत्व केवलज्ञानातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कांच समान प्रभु तन पाया, पड़े नहीं है उसमें छाया।
सूर्य कांति सम रूप तुम्हारा, छाया पाए भक्त तुम्हारा।।
सच्चे प्रभुवर अच्छे प्रभुवर, केवल ज्ञानी ध्यानी प्रभुवर।
भावों से भक्ती को गायें, चरणों में हम शीश झुकायें।।१७।।

ॐ ह्रीं छायारहित केवलज्ञान अतिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्पंदन पलके नहिं करती, निर्निमेष दृष्टि है रहती।
कृपा दृष्टि प्रभु हम पर रखना, चरणों से तुम दूर न करना।।
सच्चे प्रभुवर अच्छे प्रभुवर, केवल ज्ञानी ध्यानी प्रभुवर।
भावों से भक्ती को गायें, चरणों में हम शीश झुकायें।।१८।।

ॐ ह्रीं पक्ष्मस्पंदरहित केवलज्ञान अतिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्याएं सब ईश्वर मानें, विद्येश्वर इससे ही जानें।
विद्याओं का दान भी देना, अपने चरणों में रख लेना।।
सच्चे प्रभुवर अच्छे प्रभुवर, केवल ज्ञानी ध्यानी प्रभुवर।
भावों से भक्ती को गायें, चरणों में हम शीश झुकायें।।१९।।

ॐ ह्रीं सर्वविद्येश्वर केवलज्ञान अतिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

केश और नख नहीं बड़े हैं, अपने पांवों स्वयं खड़े हैं
परम् औदारिक पुद्गल पाया, पृथ्वी का सौभाग्य भी आया।।
सच्चे प्रभुवर अच्छे प्रभुवर, केवल ज्ञानी ध्यानी प्रभुवर।
भावों से भक्ती को गायें, चरणों में हम शीश झुकायें।।२०।।

ॐ ह्रीं समान नख केशत्व केवलज्ञान अतिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य ध्वनि त्रिबार खिरे हैं, भव्यात्मा सुन पार हुए हैं।
गणधर दिव्य ध्वनि को झेलें, आकर हम सब ज्ञान को लेलें।।

दिव्य देह को धारा तुमने, दिव्य ज्ञान से तारा तुमने।
भावों से भक्ती को गायें, चरणों में हम शीश झुकायें॥२१॥

ह्रीं अनरक्षरात्मक सर्वभाषामय दिव्य ध्वनि केवलज्ञान अतिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवकृत अतिशय

(चाल छंद)

जिनदेव जहां भी जावें, सब ऋतुओं के फल आवें।
इक कोस में उपवन रहता, तीर्थंकर दर्शन होता॥
सेवा हो देवों द्वारा, तव समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥२२॥

ह्रीं सर्वर्तुफलादिशोभित तरुपरिणाम देवोपनीतातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुखदायी वायु बहती, कंटक धूली सब हटती।
भूमि को स्वच्छ बनाया, आने का फल बतलाया॥
सेवा हो देवों द्वारा, तव समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥२३॥

ह्रीं वायुकुमारोपपशमित धूलि कंटकादि देवोपनीत अतिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब पूर्व बैर को छोड़े, आपस में प्रीती जोड़े।
निंदा कलेश सब टलते, शान्ती से सब ही मिलते॥
सेवा हो देवों द्वारा, प्रभु समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥२४॥

ह्रीं सर्वजन मैत्री भाव देवोपनीतातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है यह रत्नमयी जिन प्रतिमा, दर्शन से जगती प्रतिभा।
दर्शन सौभाग्य जगाये, हम चरण शरण में आये॥

सेवा हो देवों द्वारा, प्रभु समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥२५॥

ॐ ह्रीं आदर्श तल प्रतिमा रत्नमयी मही देवोपुनीतातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल गंधोदक वृष्टि, जल कण से होती शुद्धि।
शीतल भावों से आया, तीर्थंकर दर्शन पाया॥
सेवा हो देवों द्वारा, तुम समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥२६॥

ॐ ह्रीं मेघकुमार कृत गंधोदक वृष्टि देवोपुनीतातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शाली से धान्य भरे हैं, फल भार से वृक्ष झुके हैं।
हरियाली चहुं दिशि छाई, प्रभु की महिमा सुखदाई॥
सेवा हो देवों द्वारा, तुम समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥२७॥

ॐ ह्रीं फलभार नम्रशालि देवोपुनीतातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जहं-जहं भगवान है जावें, प्राणी मन मोद मनावें।
निज आतम ज्ञान कराया, मुक्ती का द्वार दिखाया॥
सेवा हो देवों द्वारा, तुम समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥२८॥

ॐ ह्रीं सर्वजन परमानन्दत्व देवोपुनीतातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वायु कुमार भी आते, सुख शीतल पवन चलाते।
सब आधि-व्याधि नश जाए, दर्शन करने हम आए॥
सेवा हो देवों द्वारा, तुम समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥२९॥

ॐ ह्रीं विहरण मनुगत वायुत्व देवोपुनीतातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब कुऐं सरोवर वापी, निर्मल जल से भर जाती।
इस चमत्कार को देखा, तीर्थंकर अतिशय लेखा॥
सेवा हो देवों द्वारा, तुम समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥३०॥

ॐ ह्रीं निर्मल जल पूर्ण कूप सरोवरादि देवोपुनीतातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकाश स्वच्छ हो जावे, निर्मलता उसमें आवे।
भविजन मन निर्मल होता, औ बीज मुक्ति का बोता॥
सेवा हो देवों द्वारा, तुम समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥३१॥

ॐ ह्रीं शरत्कालवन्निर्मलाकाश देवोपुनीतातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब रोग उपद्रव टलते, सब शोक विघ्न भी नशते।
सब दूर उपद्रव होवे, जो समवशरण में जावे॥
सेवा हो देवों द्वारा, तुम समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥३२॥

ॐ ह्रीं सर्वजन रोग शोक बाधा रहितत्व देवोपुनीतातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यक्षेंद्र खड़े हैं न्यारे, ले धर्म चक्र को ठाड़े।
उसमें हजार थे आरे, किरणों से लगते प्यारे॥
सेवा हो देवों द्वारा, तुम समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥३३॥

ॐ ह्रीं यक्षेंद्रशीशोपरिस्थितधर्मचक्रचतुष्टयदेवोपुनीतातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णों के कमल रचाये, देवों ने फूल खिलाये।
प्रभु चरण जहां पर धरते, आ इन्द्र अतिशय करते॥

सेवा हो देवों द्वारा, तुम समवशरण है न्यारा।
अतिशय को नित बरसायें, चरणों में शीश झुकायें॥३४॥

ॐ ह्रीं जिन चरणकमल तल स्वर्णकमल रचना देवोपुनीतातिशय गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट प्रतिहार्य
(त्रिभंगी छन्द)

यह वृक्ष अशोका, करे विशोका, सुन्दर शोभा पावत हैं।
मणियां सब चमके, सूर्य भी दमके, जिन का मान बढ़ावत है॥
तीर्थंकर शोभा, प्रभु की आभा, प्रातिहार्य बतलाते हैं।
शुभ समवशरण में, प्रभु चरणन में, आकर शीश झुकाते हैं॥३५॥

ॐ ह्रीं अशोक वृक्ष महाप्रातिहार्य गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु के सिर ऊपर, छत्र है तापर, तीन लोक के नाथ बने।
जग महिमा गाए, कष्ट हटाए, करुणा सागर आप बने॥
तीर्थंकर शोभा, प्रभु की आभा, प्रातिहार्य बतलाते हैं।
शुभ समवशरण में, प्रभु चरणन में, आकर शीश झुकाते हैं॥३६॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रय महाप्रातिहार्य गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नों की ज्योति, ज्ञान के मोती, सिंहासन में शोभ रहे।
तुम अधर विराजे, शोभा साजे, आतम का नित बोध रहे॥
तीर्थंकर शोभा, प्रभु की आभा, प्रातिहार्य बतलाते हैं।
शुभ समवशरण में, प्रभु चरणन में, आकर शीश झुकाते हैं॥३७॥

ॐ ह्रीं सिंहासन महाप्रातिहार्य गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्वनि दिव्य सुनाए, मार्ग बताए, तत्वों का उपदेश दिया।
सबकी निज भाषा, ज्ञान की आशा, कथन आपने पूर्ण किया॥

तीर्थंकर शोभा, प्रभु की आभा, प्रातिहार्य बतलाते हैं।
शुभ समवशरण में, प्रभु चरणन में, आकर शीश झुकाते हैं॥३८॥

ॐ ह्रीं द्वादशगण परिवेष्टित महाप्रातिहार्य गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ये दुन्दुभि बाजे, जय-जय काजे, प्रभु संदेश सुनावत हैं।
कहे आपकी महिमा, आपकी गरिमा, भव्यों को बतलावत हैं॥
तीर्थंकर शोभा, प्रभु की आभा, प्रातिहार्य बतलाते हैं।
शुभ समवशरण में, प्रभु चरणन में, आकर शीश झुकाते हैं॥३९॥

ॐ ह्रीं देव दुन्दुभि महाप्रातिहार्य गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ सुमन भी बरसे, पापी तरसे, ऐसी थी शोभा न्यारी।
तुम सुयश सु गाया, मन को भाया, शोभा पाए त्रिपुरारी॥
तीर्थंकर शोभा, प्रभु की आभा, प्रातिहार्य बतलाते हैं।
शुभ समवशरण में, प्रभु चरणन में, आकर शीश झुकाते हैं॥४०॥

ॐ ह्रीं सुरपुष्पवृष्टि महाप्रातिहार्य गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है कोटि भास्कर, और निशाकर, भामण्डल से हार गया।
निज दर्श दिखाए, भव बतलाए, अष्ट कर्म का भार गया॥
तीर्थंकर शोभा, प्रभु की आभा, प्रातिहार्य बतलाते हैं॥
शुभ समवशरण में, प्रभु चरणन में, आकर शीश झुकाते हैं॥४१॥

ॐ ह्रीं भामण्डल महाप्रातिहार्य गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर चमर ढुराए, शोभा पाए, चन्दा जैसे चमक रहे।
प्रभु की शुभ कांति, तोड़े भ्रान्ति, सूरज सम प्रभु दमक रहे॥
तीर्थंकर शोभा, प्रभु की आभा, प्रातिहार्य बतलाते हैं।
शुभ समवशरण में, प्रभु चरणन में, आकर शीश झुकाते हैं॥४२॥

ॐ ह्रीं चतु:षष्टि चामर महाप्रातिहार्य गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंत चतुष्टय अर्घ्य

नाराच छन्द–नीर गंध........

तुम त्रिलोक तुम त्रिकाल, वस्तुओं को जानते।
एक साथ एक बार, में ही सब बखानते॥
अनन्त दर्श युक्त होय, इन्द्र जिनको, अर्चते।
दर्शनों की सिद्धि हेतु, चर्ण को भी चर्चते॥४३॥

ॐ ह्रीं अनन्त ज्ञान गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोक व अलोक को, एक साथ देखते।
ना बचा था कोई भी, एक साथ लेखते॥
अनन्त ज्ञान, युक्त होय, इन्द्र जिनको, अर्चते।
दर्श की सिद्धि हेतु, चरण को चर्चते॥४४॥

ॐ ह्रीं अनन्त दर्शन गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लीन होके सौख्य में, विघ्न कोई ना पड़े।
अनन्तकाल दुख नहीं, जग में आप हो बड़े॥
दुष्ट कर्म नाशते, अनन्त सौख्य पावते।
अर्चते अनन्त सौख्य, और सौख्य गावते॥४५॥

ॐ ह्रीं अनन्त सौख्य गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पायके अनन्त शक्ति, अन्तराय को हने।
नष्ट हों अनन्त दुष्ट, देह कर्म अनमने॥
अनन्त वीर्यवान को, विधान मान पूजते।
वीर्य मन्त्र अर्चते, धरा-गगन में गूंजते॥४६॥

ॐ ह्रीं अनन्त वीर्य गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य
(शम्भू छन्द)

लेकर गरभ से जन्म तक, अतिशय घने होते रहे।
जब पाया केवलज्ञान तो, अतिशय के रस में आ बहे॥
सुर नर सभी भक्ती से आके, दर्श प्रभु का पावते।
''स्वस्ति'' जनम ना हो दुबारा, भाव शुभ ये भावते॥४७॥

ॐ ह्रीं षट्चत्वारिंशद गुणमंडित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: जयमाला पूर्ण अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्तये शान्ति धारा। दिव्य परिपुष्पांजलि इति आर्शीवाद:

अठारह दोष रहित जिनेन्द्र भगवान के अर्घ्य
दोहा:

दोष रहित जिन देव जी, हो निर्दोषी आप।
दोष रहित हम भी बनें, करके तेरा जाप॥१॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत।

भुजंग प्रयात (नरेन्द्रं फणीन्द्रं)

क्षुधा है कठिन ये, सभी को सताये।
प्रभो आपके पास, में नाहीं आये॥
तुम्हारे चरण मैं तो, पूजूं सदा ही।
हरे वेदना पाउंगा मैं, मुदा ही॥१॥

ॐ ह्रीं क्षुधा महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभो इंद्रियों की, तृषा है सताती।
पिया तुमने अमृत, नहीं पास आती॥
तुम्हारे चरण मैं तो, पूजूं सदा ही।
हरे वेदना पाउंगा मैं, मुदा ही॥२॥

ॐ ह्रीं तृषा महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भय ने सभी को है, भयभीत कीना।
भय को अभय करके, तुम सौख्य लीना।।
सातों भयों के मैं, नाशन के हेतू।
तुमको बनाऊँ मैं, भव सिंधु सेतू।।३।।

ॐ ह्रीं भय महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधी सदा, दूसरों को सताये।
किया क्रोध वश में, नहीं पास आये।।
क्रोधी की दुनियां, सदा नष्ट होती।
मेरा क्रोध छूटे, यही बीज बोती।।४।।

ॐ ह्रीं क्रोध महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चिता में जले तन, ये चिंता जलाये।
नहि सौख्य पाया, तेरे पास आये।।
चिंता को चिंतन, बना आप डाला।
पाया घना सौख्य, मुक्ती की माला।।५।।

ॐ ह्रीं चिंता महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आयें बुढ़ापे में, विपदायें सारी।
कमी होती शक्ती, औ ठोकर भी मारी।।
प्रभो आपको ना, बुढ़ापा सताये।
बचूं मैं भी इससे, शरण तेरी आये।।६।।

ॐ ह्रीं जरा महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सदा राग अग्नि सा, तन को जलाये।
रागों से कर्मों के, परमाणु आये।।
प्रभो आपने, राग का त्याग कीना।
करूं भक्ति तेरी, अशुभ त्याग दीना।।७।।

ॐ ह्रीं राग महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोही जगत में, सदा दु:ख पाये।
कर्मों का राजा, सभी को सताये।।

मोही नहीं, मोह का नाश करता।
निर्मोही चरणों में, आकर के तरता॥८॥

ॐ ह्रीं मोह महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सभी जीव वैद्यों की, औषध हैं खाते।
फिर भी नये रोग, उनको सताते॥
प्रभो आपने, मोह का नाश कीना।
इसी से तुम्हें रोग, देखे कभी ना॥९॥

ॐ ह्रीं रोग महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवन को पाकर के, मृत्यु ना पाये।
तथापि ये मृत्यू तो, निश्चित ही आये॥
मृत्यू को निर्वाण, तुमने बनाया।
मृत्युंजयी बनने, चरणों में आया॥१०॥

ॐ ह्रीं मृत्यु महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जनम् से पसीना, कभी भी ना आये।
निर्मल हुए मल, कभी भी ना आये॥
बने वीतरागी, अशुभ राग नाशा।
शरण तेरी आऊँ, है मुक्ती की आशा॥११॥

ॐ ह्रीं स्वेद महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नहीं खेद तुमको, किसी पर भी आये।
किया नाहिं कारज, न श्रम ही सताये॥
यही खेद प्राणी को, चिंता भी देता।
शरण तेरी जो है, वही सौख्य लेता॥१२॥

ॐ ह्रीं विषाद महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिमान आये, पता नाहिं चलता।
जरा से सुखी हो तो, अभिमान पलता॥

त्रैलोक्य सम्पत्ति है आप पाई।
अभिमान से नाहीं, प्रीति लगायी॥१३॥

ॐ ह्रीं मद महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रति दोष दूजे में, मन को भ्रमाये।
जगत के सभी जन, स्वयं को भुलाये॥
प्रभो आप प्रीती, निजातम से करते।
इसी से सभी जन, शरण तेरी वरते॥१४॥

ॐ ह्रीं रति महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीनों जगत को है, तुमने निहारा।
विस्मय न कोई, जो देखा नजारा॥
करम का सभी फल, है आश्चर्य देता।
करूं भक्ती तेरी, बनूं आप जैसा॥१५॥

ॐ ह्रीं विस्मय महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निद्रा सभी को है, बेहोश करती।
निजातम दरश नाहिं, ना होश देती॥
ना निद्रा को लेते, ना बेहोश होते।
प्रभो आप मुक्ती, रमा बीज बोते॥१६॥

ॐ ह्रीं निद्रा महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लेता जनम तो, महा कष्ट होता।
जनम् नाश का कोई, कारज न करता॥
बने हो तीर्थंकर, जनम नाश कीना।
जनम नाश हित मैं, शरण तेरी लीना॥१७॥

ॐ ह्रीं जन्म महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरति ये जगत में, न प्रीती लगाये।
ये चिंता बढ़ाये, नहिं सौख्य पाये॥

अरति दोष नाशा, है मुक्ती में वासा।
ये पूजूं चरण है, शरण आके दासा॥१८॥

ॐ ह्रीं अरति महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

दोष अठारह जीव को, दुख देते दिन रैन।
बचा ना इनसे कोई भी, नाहिं किसी को चैन॥
जिनवर हो जिन देव तुम, दोष है तुमसे दूर।
त्रिभुवन जीता आपने, सुख पाया भरपूर॥१९॥

ॐ ह्रीं अष्टादश महादोष रहित चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य ॐ ह्रीं समवसरणपद्मसूर्यवृषभादिवर्द्धमानान्तेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा:

चौबिस तीर्थंकर प्रभो, महापुण्य महावान।
चरणों में आऊँ, विभो बारम्बार प्रणाम।

शंभू छंद

रवि केवलज्ञान का प्रगट हुआ, निज आतम आनंद पाया है।
अद्‌भुत शांती अद्‌भुत अतिशय, निज ज्ञान दीप प्रजलाया है॥
व्यंतर ज्योतिष औ कल्पवासी, सब देव यहां पर आयेंगे।
कर समवशरण की रचना को, जिनवर का महल बनायेंगे॥१॥

पांचों कल्याणक से संयुक्त, तीर्थंकर जीवन होता है।
प्रत्येक पलों से शिक्षा ले, कर्मों के पर्वत खोता है॥
ऐरावत को सौभाग्य मिला, जिनवर की सेवा करता है।
अगले भव में वह कर्म नाश, मुक्ती का मारग वरता है॥२॥

देखो तो एक लाख योजन, अठ दांतों से मुख शोभ रहा।
प्रत्येक दांत में सरवर है, स्वर्णिम कमलों मय बीच रहा।।
पत्तों पर देवी नृत्य करें, भक्ती मय आकर डोल रहा।
पुष्पों की माला को पहने, भक्ती में आकर बोल रहा।।३।।
सौधर्म इन्द्र शचि चढ़ आयें, प्रभु जी को लेकर के बैठे।
हर्षित ऐरावत नृत्य करे, आतम बगिया को वो सींचे।।
बाहर का वैभव मिला तभी, जब अंदर का वैभव पाया।
बिन आतम दर्शन जीव यहां, कर्मों ने उसको भटकाया।।४।।

भौतिकता के पीछे-पीछे, सारा जग अंधा दौड़ रहा।
अध्यात्म क्षेत्र को छोड़-छोड़, कर्मों से रिश्ता जोड़ रहा।।
जग का इक कण ना साथ जाय, इस बात को जाने बैठे हैं।
पर तृष्णा ने भटकाया है, आतम को छोड़े बैठे हैं।।५।।

आतम विशुद्ध अविनाशी है, पुद्गल की सत्ता नाशवान।
पुद्गल ना आतम हो सकता, आतम है जग में ज्ञानवान।।
अध्यात्मवाद की चर्चा ना, साधन से साध्य को पाती है।
मद मोह विकार रहित होवे, अध्यात्मिकता आती है।।६।।

अज्ञानी ज्ञान को पाकर के, आतम ध्या भगवन बनता है।
सुख शांति औ संतोष पाय, कर्मों के पर्वत हनता है।।
आचार विचार है बिम्ब रूप, गन्तव्य पाथ को दर्शाते।
जीवन विकास करने को प्रभु, भक्ती करने तेरी आते।।७।।

माधुर्य भोज है भक्तिमयी, शुभ ध्यान का अमृत डाला है।
शुभ ज्ञान ध्यान की उज्जवलता, पहनूं मुक्ती की माला है।।
ये धर्म क्षेत्र औं कर्म क्षेत्र, द्वय ज्ञान समन्वय जब होगा।
जीवन पथ पर दौड़ेंगे फिर, मंगलमय यह जीवन होगा।।८।।

चलने की शक्ती पास नहीं, शक्ती मैं तुमसे मांगूंगा।
जीवन मुक्ति पथ चला गया, तो शक्ती तेरी मानूंगा।।
मुक्ती का मारग ना देखा, मुक्ती पथ से मैं अनजाना।
तुम मुक्ती पथ राही विशेष, रस्ता मुझको भी बतलाना।।९।।
अतएव प्रभो विश्वास करो, भक्ती के कारण आया हूं।
ना जानूं मैं मुक्ती पथ को, पथ पाने चरणों आया हूं।।
विश्वास करो ठुकराओं ना, अब और कहां हम जायेगे।
'स्वस्ति को शरणा में ले लो, मुक्ति जाकर दिखलायेगे।।१०।।

दोहा

दिव्यात्मा अध्यात्म का, सागर रहा समाय।
कुछ बूंदे मुझको मिले, शत्-शत् शीश नवाय।।

ॐह्रीं षट्चत्वारिंशद गुण मंडित अष्टादश दोष विखंडित। चुतर्विंशतितीर्थकरेभ्य: जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

दोहा

मंजिल मुझको कब मिले, बोलो हे परमेश।
चरण शरण में हूँ पड़ा, तारण तरण जिनेश।

इत्याशीर्वाद परिपुष्पांजलि।

"दिव्यध्वनिपूजा"

स्थापना (त्रिभंगीछंद)

तीर्थंकर वाणी, जग कल्याणी, दिव्य धवनि की भाषा है।
वहाँ बारह कोठे, भक्त है बैठें, भक्तो का ही वासा॥
गणधर जी झेले, भक्त भी ले-ले, द्वादश अंग बनाये है।
आह्वानन करतें, ज्ञान को वरतें, ज्ञानी ज्ञान समाये हैं॥१॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसर्वभाषामयदिव्यध्वनिवाणीसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसर्वभाषामयदिव्यध्वनिवाणीसमूह! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसर्वभाषामयदिव्यध्वनिवाणीसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अथ-अष्टक

भुजंगप्रयात छंद-नरेन्द्र फणीन्द्र-

वपुषा को तज कर, नही आत्म जाये।
औ अज्ञानी कर्मों का रेला बढ़ायें॥
मैं भावो से जिनवाणी पूजा को करता।
सम्यक्त्व भावों से, आतम को वरता॥१॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसर्वभाषामयदिव्यध्वनिभ्य: जलं निर्वपामीति स्वाहा।

करके पुरुषार्थ, शीतलता पाऊँ।
अज्ञानता में, जगत न बढ़ाऊँ॥
मैं भावो से जिनवाणी, पूजा को करता।
सम्यक्त्व भावों से, आतम को वरता॥२॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसर्वभाषामयदिव्यध्वनिभ्य: चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

परिपूर्ण आतम का, संसार छोटा।
उत्थान पाने, छुटे भाव खोटा॥
मैं भावो से जिनवाणी पूजा को करता।
सम्यक्त्व भावों से आतम को वरता॥३॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसर्वभाषामयदिव्यध्वनिभ्य: अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णों के पुष्पों से पूजा रचाऊँ।
मलिनता के भावों को निज से भगाऊँ॥
मैं भावो से जिनवाणी, पूजा को करता।
सम्यक्त्व भावों से आतम को वरता॥४॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसर्वभाषामयदिव्यध्वनिभ्य: पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

इंन्द्रिय की इच्छाओं ने दीन कीना।
शरण आपकी सौख्य पाया नवीना॥
मैं भावो से जिनवाणी, पूजा को करता।
सम्यक्त्व भावों से आतम को वरता॥५॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसर्वभाषामयदिव्यध्वनिभ्य: नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं ज्ञान का दीपक, सजा करके लाऊँ।
ज्ञानी के चरणों में, आकर चढाऊँ॥
मैं भावो से जिनवाणी, पूजा को करता॥
सम्यक्त्व भावों से, आतम को वरता॥६॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसर्वभाषामयदिव्यध्वनिभ्य: दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार की माया, है धूप छाया।
कर्मो के चक्कर ने, हमको फंसाया॥
मैं भावो से जिनवाणी, पूजा को करता।
सम्यक्त्व भावों से, आतम को वरता॥७॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसर्वभाषामयदिव्यध्वनिभ्य: धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

दु:खों के भय से, प्रभु भक्ति करता।
याकि मैं फल चाहूँ, फल को चढ़ाता।।
मैं भावो से जिनवाणी, पूजा को करता।
सम्यक्त्व भावों से, आतम को वरता।।८।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसर्वभाषामयदिव्यध्वनिभ्य: फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक्त्व का दर्श, ज्ञानी बनाये।
इसी आश से अर्घ्य, चरणों में लायें।।
मैं भावो से जिनवाणी, पूजा को करता।
सम्यक्त्व भावों से, आतम को वरता।।९।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसर्वभाषामयदिव्यध्वनिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

आतम नहि कमजोर हैं, अनंत शक्ति की खान।
दिव्य वाणी में ही सुना, बारम्बार प्रणाम।।

परिपुष्पांजलि:।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

बारह अंग सुहावने, भाष अठारह भेद।
अर्घ्यो से वंदन करूँ, करूँ कर्म का छेद।।१।।

इति मडंलस्योपरि पुष्पांजलि क्षिपेत्।

चाल छंद

तीर्थंकर मुख से बोले, सब प्राणी हर्ष से डोले।
नर सुर पशु सब ही आये, चरणो में शीश झुकाये॥
करे 'दिव्य ध्वनि' की पूजा, औ काम नही है दूजा।
प्रभु वाणी जो सुन लेता, वह मुक्ति को पा लेता॥१॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गत अष्टादश महाभाषा सप्तशतक क्षुल्लकभाषामय दिव्य ध्वनिभ्य अर्घ्य....

मुनिजन आचार बताये, इनमें व्याख्यान समायें।
सब सावधान हो करना, इससे ही मुक्ति वरना॥
पद अठरह सहज बताये, आचार अंग में गाये।
पथ में न रूकावट आये, सीधे मुक्ति को जाये॥२॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतआचारांगाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

स्व पर समयो में रहता, स्त्री लक्षण को कहता।
यह ''सूत्र कृतांग'' बताया, हमने हैं शीश झुकाया॥
पद छत्तीस सहस है गाया, दूजे अंगो में पाया।
मम ज्ञान मार्ग खुल जायें, सीधे मुक्ति को जायें॥३॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसूत्रकृतांगाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ चेतन भेद बतायें, भली भांति सब समझायें।
इस ''स्थानांग'' को पूजूं, स्वयमेव आत्मा खोजूं॥
पद छयालिस सहज मैं ध्याऊँ, निज में निज ज्योति जगाऊँ।
प्रतिभा निज ज्ञान की पाऊँ, निज आतम में रम जाऊँ॥४॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतस्थानांगाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यों की अपेक्षा बताई, सब ही सम होते भाई।
'समवाय' अंग का ध्यान, अरू क्षेत्र काल परमान॥
इक लाख औ चौंसठ गाया, संगत में सहज लगाया।
ज्ञानी ही सुख को पावें, मुक्ति मारग में जावें॥५॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसमवायांगाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

प्रश्नों के उत्तर देते, सब समाधान पा लेते।
'व्याख्या प्रज्ञप्ति' बताया, प्रभु ने जब को समझाया।।
शुभ समवशरण में जाना, औ प्रभु का दर्शन पाना।
सुनते जिनवर की वाणी, वाणी है जग जगकल्याणी।।६।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतव्याख्याप्रज्ञप्तिअंगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर धर्म कथादि, यह होता सब ही आदि।
शुभ कथा से समझायें, मुक्ति का मार्ग दिखायें।।
त्रिवार ध्वनि खिरती हैं, पापों को वो हरती हैं।
आतम विशुद्ध हो जायें, मुक्ति में जा बस जायें।।७।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतनाथधर्मकथांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावक के भेद बतायें, उनके आचार सिखायें।
''उपासकाध्ययन'' सारा, है ज्ञान का ही भण्डारा।।
ग्यारह लख सत्तर जानों, संगत में सहस भी मानो।
भावों से करता पालन, बनूं जिनवाणी लालन।।८।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतउपासकाध्ययनांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब प्रति तीर्थंकर काल, उपसर्ग जयी मुनि भाल।
मुनि दश संख्या बतलाई, निर्वाण हुआ सुखदाईं।
अंतः कृत दश यह नाम, मुक्ति में पा विश्राम।
यह साधन साध्य को पावें, जिनवाणी अर्घ्य चढ़ावे।।९।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतअन्तः कृतदशांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दश मुनि ने उपसर्ग सहे हैं, अनुत्तर में उतरे हैं।
चौबीस तीर्थंकर काल, पाऊँ मुक्ति की माल।।
तन मोह मुग्ध न होवे, आतम अनुभूति पावें।
समता धारी बन जाऊँ, चरणों में शीश झुकाऊँ।।१०।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतअनुत्तरौपपादिकशांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आक्षेपण औ निक्षेपण, संवेदन औ निर्वेदन।
चिन्ता प्रश्नो को बताया, वर्णन कर उसको गाया।।
तिरानवें लाख औ सोला, संगम हजार अमोला।

यह प्रश्नव्याकरण अंग, रह जाऊँ इसके संग॥११॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतप्रश्नव्याकरणांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शुभ अशुभ कर्म फल पाते, उसका ''विपाक'' बतलातें।
द्रव्यों संग क्षेत्र अरू काल, शुभ भाव बनाऊँ माल॥
इक कोटि लाख चौरासी, पद की संख्या है भासी।
मैं अचल साधना साधू, सब छोडूँ वाद विवादू॥१२॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतविपाकसूत्रांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
मत तीन सौ त्रेसठ गाये, उनका वर्णन करवायें।
यह नाना भेद को जाने, दृष्टि का वाद बखाने॥
परिवर्तन दृष्टि में आवें, तब ही मन आतम ध्यावे।
बदले दृष्टि से सृष्टि, फिर ज्ञान की होवें वृष्टि॥१३॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतदृष्टिवादांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

दृष्टिवाद पच भेद बताये, 'परिकर्म' औ 'सूत्र' भी गायें।
'प्रथमानुयोग' पूरब समझाया, सही 'चूलिका' भेद बताया॥
प्रथम ''परिकर्म'' पांच भेद हैं, 'शशि प्रज्ञप्ति' हरे खेद है।
चंदा का सब ज्ञान कराये, भक्त चरण में अर्घ्यं चढ़ाय॥१४॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतचंद्रप्रज्ञप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
'सूर्य प्रज्ञप्ति' ज्ञान कराये, संबंधी भास्कर को गायें।
गमन अयन दिन रात विधि हैं, आयु औ परिवार सभी है॥
हम सूरज को देखे माने, पर नाही उसको पहचाने।
तीर्थंकर वाणी जिनवाणी, जग में जीव बनाये ज्ञानी॥१५॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसूर्यप्रज्ञप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
मेरू कुलाचल क्षेत्र वापिका, भू जिन मंदिर भवन सभी का।
सारी रचना का वर्णन हैं, 'जंबु प्रज्ञप्ति' में दर्शन हैं॥
तीन लाख पच्चीस हज्जार, सुनना पढ़ना दोनो सार।

जिनवर भक्ति में रम जाऊँ, लौट कभी फिर जग ना आऊँ॥१६॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतजम्बूद्वीपप्रज्ञप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मध्यलोक में 'द्वीप' औ 'सागर', हैं असंख्य भर जायें गागर।
व्यंतर के आवास बने हैं, औ कुभोग भूमि जन्में हैं॥
बावन लख छत्तीस हजार, ग्रंथों में सब कुछ तैयार।
फलितार्थ शुभ ज्ञान भी आया, चरणों में आ अर्घ्य चढ़ाया॥१७॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतद्वीपसागरप्रज्ञप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीव अजीव द्रव्य का वर्णन, 'व्याख्या प्रज्ञप्ति' में हैं दर्शन।
भव्य अभव्य सभी बतलायें, व्याख्या के नित ज्ञान को पाय॥
जरा झांक कर देखो अन्दर, लहराये निज शांति समन्दर।
ज्ञान की महिमा है बड़ी न्यारी, मुक्ति की करता तैयारी॥१८॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतव्याख्याप्रज्ञप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीव अबंधक अवलेपक हैं, कर्म बंध में यह क्षेपक हैं।
''दृष्टिवाद'' का भेद है जानों, नाम सूत्र इसको पहिचानो॥
क्रिया अक्रिया गणित बतायें, भवतरने को ज्ञान करायें।
ज्ञान ही भोजन ज्ञान ही पानी, ज्ञान मयी मां जिनवाणी॥१९॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतदृष्टिवादभेदसूत्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महापुरुष त्रेसठ सब ज्ञानी, नारायण बलभद्र बखानी।
तीर्थंकर चक्री का वर्णन, सब 'प्रथमानुयोग' में दर्शन॥
विद्याधर ऋद्धीधर मुनिवर, इनका जीवन होता तरूवर।
सारे ग्रथों को पढ़ डालूं, अपने आतम को ही पालूं॥२०॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतदृष्टिवादभेदप्रथमानुयोगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौदह पूर्व के अर्घ्य

चौपाई

''पूरबगत के भेद है जानो, चौदह भेदों से पहचानो।
''उत्पाद पूर्व'' पहला बतलाया, द्रव्योत्पति नाश बता॥
द्रव्यों की पर्याय जाने, इससे द्रव्यों को पहचाने।

ज्ञानी ही विज्ञान बना है, ज्ञानी ने सब जान लिया है॥२१॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतउत्पादपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

''अग्रायणीय'' पूरब है दूजा, श्रेष्ठ सभी में है ये दूजा।
दुर्नय और सुनय पहचाने, षट् द्रव्यों को भी है जानें॥
द्वितीय पूर्व का अंश आज है, षट्खंडागम बना ताज है।
ग्रंथों को तो नित ही पढ़ना, मुक्ति मारग में फिर बढ़ना॥२२॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतअग्रायणीयपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप की शक्ति, संयम शक्ति, इंद्रिय शक्ति है परशक्ति।
शक्ति वीर्यानुवाद बतलाये, हम पाने को शरण में आये॥
भक्ति भी शक्ति को देती, शक्ति मुक्ति भी वर लेती।
ज्ञान पूर्ण कर तप का तपना, आतम में आतम को जपना॥२३॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतवीर्यनुप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वा का द्रव्य क्षेत्र क्या अपना, वस्तु का अस्तित्व न सपना।
''अस्ति नास्ति'' का ज्ञान कराये, द्रव्यादिक को हमें बताये॥
साठ लाख पद को हम पूजे, राह बताओ राह न सूझे।
जिनवाणी के लाल कहाओ ''स्वस्ति'' को सत्पाथ बताओ॥२४॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतअस्तिनास्तिप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मतिश्रुत अवधि ज्ञान के धारी, मनपर्यय की महिमा न्यारी।
केवल ने सब बल प्रगटाया, तीन लोक का नाथ कहाया॥
''ज्ञान प्रवाद'' वाद नहीं करता, सच्चा ध्यान हृदय में धरता।
भेद प्रभेद सहित वर्णन है, पांच ज्ञान का ही दर्शन॥२५॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतज्ञानप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

''सत्य प्रवाद'' सत्य बतलाये, सत्य धर्म का ज्ञान कराये।
सप्त भंग की व्याख्या सुंदर, सत्य धर्म का भरा समंदर॥
झूठ कपट दुर्भाषा नशती, मुख पर जिनवाणी आ बसती।
दिव्यध्वनि का सार ही जानो, अर्घ्य चढ़ाये निज पहचानो॥२६॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसत्यप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निश्चय से शुद्धात्मा जानो, पर व्यवहार की बात भी मानो।
जग में जीव अशुद्ध विकारी, कर्मों का कर्ता संसारी॥
''आत्म प्रवाद'' आत्म को ध्याये, नय के द्वारा इसे बताये।
चर्म चक्षु से यह ना दीखे, आतम ध्यानी इसको सीखे॥२७॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतआत्मप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
कर्मों ने जग को भरमाया, कर्मों ने जग को भटकाया।
कर्म हंसाये कर्म रूलाये, कर्मों के मारे हम आये॥
''करम प्रवाद'' कर्म को कहता, कृती कर्म में भी यह रहता।
कर्मों की लीला है न्यारी, आप कर्म से रहित बिहारी॥२८॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतकर्मप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
त्याग करो यह नियम बताये, त्याग विधि भी यही सिखाये।
है निर्दोष सदोष को जाने, नियम अनियम काल को मानें॥
द्रव्य क्षेत्र अरु काल समझकर, शुभ भावों से सभी त्यागकर।
तप करना यह ही बतलाया, ''प्रत्याख्यान पूर्व'' में गाया॥२९॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतप्रत्याख्यानपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
पांच शतक महाविद्या होती, सप्त शतक लघु पाये मोती।
साधन साध्य औ विधि बताये, एक कोटि लाखो में पायें॥
'विद्या पूर्व' बड़ी भारी है, इसकी शक्ति भी न्यारी।
कुछ च्युत होते साधु यहाँ पर, ज्ञान करो सब ध्यान संभलकर॥३०॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतविद्यानुप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
इन्द्र, सूर्य का गमन क्षेत्र क्या, चक्रवर्ती का वैभव है क्या।
तीर्थंकर कल्याणक जाने, महा निमित अष्टांग बखाने॥
है ''कल्याण पूर्व'' कल्याणी, जिनवर की भी यही है वाणी।
निज कल्याण को प्रभु को ध्याना, ध्यान में अपना ज्ञान लगाना॥३१॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतकल्याणप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
इंन्द्रिय बल आयु बतलाये, श्वांसोच्छावास का ज्ञान कराये।
कदली घात आयु बंधादि, आयु अपकर्षण का है वादी॥
आयुर्वेद के अष्ट अंग भी, अति विस्तृत वर्णन है संग भी।

स्वास्थ्य लाभ पढ़कर मिल जाये, ''प्राणावाय'' को शीश झुकाये॥३२॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतप्राणावायप्रवादपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुषादि लक्षण बतलाये, छंद व्याकरण नृत्य सिखाये।
और संगीत शास्त्र का ज्ञाता, नव कोटि पद में ये भाता॥
'क्रिया विशाल' रूचि से पढ़ना, शास्त्रों का यदि ज्ञान है करना।
ज्ञाता-ज्ञान को एक ही मानो, ज्ञानी के लक्षण पहचानो॥३३॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतक्रियाविशालपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'लोकबिंदु' लोकहि दर्शाये, लोक का सारा ज्ञान कराये।
रज्जु राशि वर्ग गुणाकर, बीज गणित से ज्ञान बताकर॥
गणित में सारा धर्म बताया, गणित ज्ञान विज्ञानी बनाया।
गणित ध्यान देकर के करना, आत्म गणित यदि हल है करना॥३४॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतलोकबिंदुसारपूर्वाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'दृष्टिवाद' की भेद चूलिका, सब विषयो की बनी तालिका।
जल में भू सम चलना सिखाये, और 'जलगता' भेद कहाये॥
जल स्तभ्भन मंत्र तंत्र जप, ध्यान लगाया करते है तप।
अग्नि-भक्षण है बतलाये, चरणो में हम शीश झुकाये॥३५॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतजलगताचूलिकायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गमन आगमन निश दिन करते, मेरू कुल पर्वत पर चलते।
गमनादिक के मंत्र तंत्र जप, करते निशदिन इसका वे जप॥
'स्थल गता' हमको समझाये, धरती पर चलना सिखलाये।
सभी क्षेत्र का ज्ञान है जिनको, करते नमन उन्ही जिनवर को॥३६॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतस्थलगताचूलिकायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मायाजाल का खेल दिखायें, इन्द्रजाल फंसना बतलायें।
क्रीड़ा से मनोरंजन करते, या कारज वे पूरे करतें॥
कुशल हुये माया हरने में, कुशल हुये भव से तरने में।
ज्ञानी को हम शीश झुकायें, भक्ति करने चरण में आयें॥३७॥
ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतमायागताचूलिकायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घोड़ा गज सिंह रूप बनायें, मानुष रूप सभी बन जायें।
रूपों के विद्या मंत्रो को, सिद्ध किया है सब मंत्रो को।।
आत्म रूप सबसे अच्छा है, आत्म रूप सबसे सच्चा हैं।
आतम का निज रूप बनाना, पर रूपों में फंस मत जाना।।३८।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतरूपगताचूलिकायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंत्रों से आकाश में चाले, विद्या पा मन में हर्षाले।
बहुविध मंत्र-तंत्र से पायी, साधन की यह विधि बताई।।
'आकाशगता' यह नाम बताया, जिनवर शक्ति को बतलाया।
आत्म ज्ञान की यह गहराई, जिनवर को लख समझ में आई।।३९।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतआकाशगताचूलिकायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सामायिक स्तव वंदन कर, तीर्थंकर को अभिनंदन कर।
चौदह प्रकीर्णक को बतलाया, अंगबाह्य का विषय सिखाया।।
''अंगबाह्य'' की पूजा करते, कर्म हमारे सारे हरते।
सम्यक दर्शन महिमा न्यारी, दर्शन की गुरूता है भारी।।४०।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतसामायिकादिचतुर्दशप्रकीर्णकस्वरूपअंगबाह्येभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं

शंभू छंद

जिनवर की दिव्य ध्वनि मुखरित, शुभ समवशरण में होती है।
श्रुतज्ञान के द्वारा फिर हमको, मिल जाते ज्ञान के मोती है।।
यह द्वादशांग अरू अंगबाह्य, की भावों से पूजा करते।
भावो का अर्घ्य बना लायें, चरणों में मस्तक को धरते।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरमुखकमलविनिर्गतगणधरदेवग्रथितद्वादशांगअंगबाह्यस्वरूपदिव्यध्वनिभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

जाप्य- ॐ ह्रीं समवसरणपद्मसूर्यवृषभादिवर्द्धमानान्तेभ्यो नमः।

जयमाला

दिव्यज्ञान को पा लिया, हमको दो अब ज्ञान।
श्रुतज्ञानी बन जाऊँ तो, पाऊँ केवल ज्ञान॥

शंभू छंद

केवल ज्ञानी आतम ध्यानी, तीर्थंकर जग में है महान।
उस आतम ध्यान की मुद्रा को, शत्-शत् होवे मेरा प्रणाम॥
शुभ समवशरण भी प्यारा है, सबको शरणा दे देता है।
जो भी चरणो में आता, कष्टों को सब हर लेता है॥

बंधन विमुक्त हो करके प्रभु, अपवर्ग में जाकर बैंठेगें।
आनंद से हो परिपूरित वे, त्रिलोक वही से देखेगें॥
है शांतिमयी मूरत तेरी, वैराग्य के झरने झरते है।
शुभ दिव्य ध्वनि जब खिरती है, आतम भव्यों के खिलते हैं॥

षट् द्रव्य तत्व संग अस्तिकाय, आगम का ज्ञान सिखाते है।
लेश्या संग भावो को कहते, कर्मों के भेद बताते है॥
सिद्धांत ज्ञान अध्यात्म ज्ञान, व्यवहार ज्ञान भी दीना है।
है द्रव्य शुद्ध निश्चयनय से, आतम स्वरूप रस भीना है॥

वस्तु-स्वभाव है धर्ममयी, प्रकृति जैसा ही बतलाया।
स्याद्वाद मयी शुभ वाणी से, यह सप्तभंगी को सिखलाया॥
जब कथन करेंगे वस्तु का, वह अर्पित और अनर्पित है।
इस मुख्य गौण के होने पर, जीवन यह आज समर्पित है॥

जब अनेकांत से बात करे, ना झगड़ा और लड़ाई है।
स्याद्वाद मयी शैली बोले, तब होती खूब बड़ाई है॥

एकांत रूप के वचन सभी, मिथ्या बुद्धि के कहलाते।
अज्ञान भरा है रग-रग में, इससे ही जीव हैं भरमाते।।
है दिव्य ज्योति अति सुखकारी, जीवन उजियारा करती है।
है बीजपदो में शक्ति लीन, अज्ञान दशा को हरती है।।
सब ज्ञान ध्यान अभ्यास करे, यह ही तप की रक्षा करता।
स्वाध्याय करें जिन शास्त्रों का, मुक्ति का पथ जाग्रत करता।।

आतम के प्रबल शत्रु बैठे, रागी द्वेषी बन लूट रहे।
अन्यायी नित्य कषायी बन, दुर्गतियों में ही रौल रहें।।
जो राग द्वेष मिथ्यात्व रहित, होकर के भाव बनाता है।
वह दिव्य ध्वनि धारण करने, शुभ समवशरण में जाता है।।

जब ज्ञानादित्य उदित होता, इंद्रिय दिश निर्मल होती है।
मुक्ति का मारग ना भूलो, जग अटवी पार ही होती है।।
जिनवर तो ज्ञान के सागर है, हम आकर तट पर बैठे है।
कुछ बूंद सुधारस की पायें, अमृत वाणी को तरसे है।।

शब्दादि विषय से बंधित है, पर ज्ञान शक्ति का पार नही।
शब्दादि विषय कम हो सकते, पर आतम ज्ञान की हार नही।।
श्रद्धा दर्शन है श्रुत विवेक, किरिया चारित्र से होती है।
तीनो मिल रत्नत्रय बनते, प्रतिबिम्बित आतम होती है।।

ज्ञानी तो जग में बहुत पड़े, अध्यात्म ज्ञान का भाव नही।
भौतिकता में ही मस्त रहे, औ सम्यकज्ञान का नाम नही।।

साधन से साध्य मिलेगा ही, यह निश्चित मन मे ठाना है।
मुक्ति पथ राही बन करके, मुक्ति में निश्चित जाना है।।

निश्चय से भेद मिटा करके, व्यवहार ज्ञान से दूर रहें।
'स्वस्ति' आतम में रम करके, चरणो में आकर ध्यान करें।

दोहा

ज्ञान-ज्ञान में नित रमें, आतम ज्ञानी होय।
संपत्ति निज ज्ञान की, अष्ट करम को खोय॥

ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकर मुखकमल विनिर्गत सर्वभाषामय दिव्य ध्वनिभ्य: जयमाला पूर्णार्घ्यं।

शातये शांतिधारा दिव्य पुष्पांजलि:।.......

दोहा

मति श्रुत अवधि मन: से, बड़ा है केवलज्ञान।
चार नही इक चाहियें, शत्-शत् बार प्रणाम॥

इत्याशीर्वाद:।

गणधर पूजा

शंभू छंद

हे दयावान करूणा निधान, ईश्वर तुम ही परमेश्वर हो,
हो सिद्ध शिला के वासी तुम, हे देव तुम्हीं देवेश्वर हो।
भरत क्षेत्र में चौबीस जिनवर, ऋद्धि-सिद्धि के स्वामी हैं,
गणधर मुनिवर के चरणों में, बारंबार नमामि है॥

ॐ ह्रीं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकर चतु:षष्टि ऋद्धिधारक जिन गणधर सर्वमुनीश्वर: परम देव अत्र-अत्र, अवतर-अवतर संवौषट् आव्हानन। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सान्निधिकरणं।

शंभू छंद

जल जग को निर्मलता देता, निर्मल निज के मैं भाव करूं,
हूँ जनम-जनम का अपराधी, अब तो मैं समता भाव धरूँ।
चौबीस जिनवर गणधर मुनि की, जल से पूजा हम है करते,
ये कष्ट निवारक ऋद्धि देव, संकट सब भक्तों के हरते॥

ॐ ह्रीं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकर चतु:षष्टि ऋद्धिधारक जिन गणधर सर्वऋषिश्वरेभ्यो: परम देवाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संयोग अग्नि का पा करके, ज्यों पानी गर्म हो जाता है,
त्यों क्रोध कषायों के कारण, संतापित आतम होता है।
चौबीस जिनवर गणधर मुनि की, चंदन से पूजा हैं करते,
ये कष्ट निवारक ऋद्धि देव, संकट सब भक्तों के हरते॥

ॐ ह्रीं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकर चतु:षष्टि ऋद्धिधारक जिन गणधर सर्वऋषिश्वरेभ्यो: परम देवाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत उज्जवल धोकर लाया, मोती सम सुन्दर रूप हुआ,
चरणों में अर्पित करता हूँ, अक्षय पद का है भाव हुआ।
चौबीस जिनवर गणधर मुनि की, अक्षत से पूजा हैं करते,
ये कष्ट निवारक ऋद्धि देव, संकट सब भक्तों के हरते॥

ॐ ह्रीं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकर चतु:षष्टि ऋद्धिधारक जिन गणधर सर्वऋषिश्वरेभ्यो: परम देवाय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

इंद्रिय व्याकुलता उपजाती, जग इसके पीछे है दौड़ा,
भोगों में निश दिन लीन रहे, इसने निज घर को छोड़ा।
चौबीस जिनवर गणधर मुनि की, पुष्पों से पूजा हैं करते,
ये कष्ट निवारक ऋद्धि देव, संकट सब भक्तों के हरते॥

ॐ ह्रीं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकर चतु:षष्टि ऋद्धिधारक जिन गणधर सर्वऋषिश्वरेभ्यो: परम देवाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंजन का अंजन लगा दिया, व्यंजन रस का ही स्वाद लिया,
नैवेद्य समर्पित करता हूँ, इस भोजन से बच जाये जिया।
चौबीस जिनवर गणधर मुनि की, नैवेद्य से पूजा हैं करते,
ये कष्ट निवारक ऋद्धि देव, संकट सब भक्तों के हरते॥

ॐ ह्रीं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकर चतु:षष्ठि ऋद्धिधारक जिन गणधर सर्वमुनिश्वरेभ्यो परम देवाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊपर होकर दीपक की लौ, संदेश ये सबको देती है,
आलोक ज्ञान का होने पर, अज्ञान तिमिर हर लेती है।

चौबीस जिनवर गणधर मुनि की, दीपक से पूजा हैं करते,
ये कष्ट निवारक ऋद्धि देव, संकट सब भक्तों के हरते॥

ॐ ह्रीं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकर चतुःषष्ठि ऋद्धिधारक जिन गणधर सर्वमुनिश्वरेभ्यो परम देवाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का फल सुख-दुख होता, ये कर्म ही नाच नचाते हैं,
कर्मों की इसी श्रृंखला को, प्रभु तोड़ नहीं हम पाते हैं।
चौबीस जिनवर गणधर मुनि की, हम धूप से पूजा हैं करते,
ये कष्ट निवारक ऋद्धि देव, संकट सब भक्तों को हरते॥

ॐ ह्रीं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकर चतुःषष्ठि ऋद्धिधारक जिन गणधर सर्वमुनिश्वरेभ्यो परम देवाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हर ऋतुओं के फल आ करके, मेरा मन ललचाते रहते,
मुक्ति फल की न चाह हुई, जग में भूले भटके फिरते।
चौबीस जिनवर गणधर मुनि की, फल से पूजा हैं करते,
ये कष्ट निवारक ऋद्धि देव, संकट सब भक्तों के हरते॥

ॐ ह्रीं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकर चतुःषष्ठि ऋद्धिधारक जिन गणधर सर्वमुनिश्वरेभ्यो परम देवाय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम भूमि को गये आप, हम गतियों के चक्कर खाते,
मैं सिद्ध शिला में जा बैठूं, अर्जी ले चरणों में आते।
चौबीस जिनवर गणधर मुनि की, हम अर्घ्य से पूजा हैं करते,
ये कष्ट निवारक ऋद्धि देव, संकट सब भक्तों के हरते॥

ॐ ह्रीं वृषभादि चतुर्विंशति तीर्थंकर चतुःषष्ठि ऋद्धिधारक जिन गणधर सर्वमुनिश्वरेभ्यो परम देवाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ्य

नरेन्द्र छन्द

समवरण श्री ''वृषभनाथ'' का, यति मुनि ऋषिगण शोभे,
संकट हारी सब सुखकारी, मंगलमय सब होवे।

संकट हारी सुख के दाता, वंदन करने आये,
अष्ट द्रव्य का थाल सजाकर, पूजन करने आये।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथस्य वृषभसेनादि चौरासी गणधर एवं चौरासी हजार मुनिवरेश्भ्यो अर्घ्यं।

''अजित'' नाथ उपदेश सुनावें, गणधर ज्ञान को धारें,
संघ के नायक कहलाते हैं, भव्यों को नित तारें। संकट..

ॐ ह्रीं श्री अजितजिनस्य सिंहसेनादि नब्बे गणधर एवं एक लाख सर्व मुनिवरभ्यो अर्घ्यं।

''संभव'' भव से पार कराके, सिद्ध शिला में भेजे,
गुण गण धारी बलधारी गुरु, नैया मेरी खेवे। संकट..

ॐ ह्रीं संभवनस्य चामरादि एक सौ सोलह गणधर एवं तीन लाख बीस हजार सर्व मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

नयन कमल से लख अभिनन्दन, हृदय कमल खिल जावे,
जिसने रखा हृदय में प्रभु को, सच्चा सुख मिल जावे। संकट..

ॐ ह्रीं अभिनन्दन जिनस्य वज्रचामरादि एक सौ दस गणधर एवं तीन लाख तीस हजार मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

नयन कमल से लख सुमति को, हृदय कमल खिल जावे,
जिसने रखा हृदय में प्रभु को, सच्चा सुख मिल जावे। संकट..

ॐ ह्रीं सुमतिनाथस्य वज्रप्रमुखषोडसोत्तरएकशतगणधरचरणेभ्य:अर्घ्यं।

नयन कमल से लख पद्मप्रभ, हृदय कमल खिल जावे,
जिसने रखा हृदय में प्रभु को, सच्चा सुख मिल जावे। संकट..

ॐ ह्रीं पद्मप्रभजिनस्य चामरादि एक सौ दस गणधर एवं तीन लाख तीस हजार मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

सौ-सौ नमन त्रिकाल हमारी, श्री ''सुपार्श्व'' भगवान,
गणधर मुनिवर श्रावक ऋषिजन, करते तुम्हें प्रणाम। संकट..

ॐ ह्रीं सुपार्श्वजिनस्य चमरबल आदि पिच्चानवे गणधर एवं तीन लाख सर्वमुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

"चंद्रप्रभु" जी चंदन बनकर, जीवन को महकाते,
सब ही भव्यों को अपने संग, मोक्षपुरी ले जाते।
संकट हारी सुख के दाता, वंदन करने आये,
अष्ट द्रव्य का थाल सजाकर, पूजन करने आये॥

ॐ ह्रीं चंद्रप्रभजिनस्य दत्तादि तिरानवे गणधर एवं अढ़ाईलाख सर्वमुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

"पुष्पों" की सुन्दरता फीकी, आपके रूप के आगे,
प्रमुदित मन से दर्शन करके, आपकी पीछे भागे। संकट..

ॐ ह्रीं पुष्पदन्तजिनस्य विदर्भादि अठासी गणधर एवं दो लाख सर्वमुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

"शीतल" प्रभु के वचन हैं शीतल, सब संताप निवारें,
देकर चंदन सी शीतलता, पाप ताप निरवारे। संकट..

ॐ ह्रीं शीतलनाथस्य अनगार आदि इक्यासी गणधर एवं एक लाख मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

यह पराधीन संसार प्रभो, स्वाधीन सरस बन जाना,
श्री "श्रेयांस" जी श्रेष्ठ प्रभु हैं, राज्य वहां का पाना। संकट..

ॐ ह्रीं श्रेयांसजिनस्य कुंथ्वादि सतत्तर गणधर एवं चौरासी हजार सर्वमुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

अक्षय सुख के शांति विधायक, "वासुपूज्य" भगवान हैं,
समोवशरण में स्थित मुनिवर, लेते प्रभु से ज्ञान हैं। संकट..

ॐ ह्रीं वासुपूज्यजिनस्य सुधर्मादि छियासठ गणधर एवं बहत्तर हजार सर्वमुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

"विमलनाथ" प्रभु ने तप करके, मल-मल कर मल धोया,
उज्जवल आतम को कर लीना, कर्म कलंकी खोया। संकट..

ॐ ह्रीं विमलनाथजिनस्य नन्दरार्यादि पचपन गणधर एवं अड़सठ हजार सर्वमुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

सौख्य अनंतों पाया प्रभु ने, कर्म देह विनशायी,
इंद्र देव आ पूजा कीनी, आत्मिक शांति पायी। संकट..

ॐ ह्रीं अनन्तनाथजिनस्य जयादि पचास गणधर एवं छियासठ हजार सर्वमुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

पूर्ण ''धर्म'' का पालन कीना, धर्म ध्वजा फहरायी,
राज्य छोड़ मुक्ती पद पाया, जगती सब हर्षाई।
संकट हारी सुख के दाता, वंदन करने आये
अष्ट द्रव्य का थाल सजाकर, पूजन करने आये॥

ॐ ह्रीं धर्मनाथजिनस्य अरिष्टादि तिरालीस गणधर एवं चौसठ हजार मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

कामदेव चक्री तीर्थंकर, त्यागा सब संसारा,
रत्नत्रय की निधि को पाकर, मिला धर्म का सारा। संकट..

ॐ ह्रीं शांतिनाथजिनस्य चक्रायुधादि छत्तीसगणधर एवं बासठ हजार मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

कृपा दृष्टि ''कुंथु'' ने कीनी, किया भव्य कल्याण,
मुक्ति पथ का राही बनूँ मैं, बारम्बार प्रणाम। संकट..

ॐ ह्रीं कुन्थुनाथजिनस्य स्वयंभ्वादि पैंतीसगणधर एवं साठ हजार मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

इंद्र देव गण आरति करते, दीप रतनमय तेरी,
अरह नाथ अरि नष्ट किये हैं, सुन लो अर्जी मेरी। संकट..

ॐ ह्रीं अरनाथ जिनस्य कुंथ्वादि तीस गणधर एवं पचास हजार सर्व मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

मल-मल धोया कर्मों का मल, स्वच्छ आत्मा कीनी,
''मल्लिनाथ'' सम्मेद शिखर जा, मुक्ति सुन्दरी लीनी। संकट..

ॐ ह्रीं मल्लिनाथजिनस्य विशाखादि अठाइसगणधर एवं चालीस हजार सर्व मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

मुनि गण के तुम ईश बने थे, श्री ''मुनिसुव्रत'' नाथ,
उन्हें मुक्ति ले जाकर छोड़ा, मैं भी झुकाऊँ माथ। संकट..

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतजिनस्य मल्लयादि अठारह गणधर एवं तीस हजार सर्वमुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

नमस्कार में चमत्कार है, भाव सहित जो करते,
क्रोध कुटिलता तज करके वे, पाप कर्म को हरते। संकट..

ॐ ह्रीं नमिनाथजिनस्य सोमादि सत्रह गणधर एवं बीस हजार सर्वमुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

दया धर्म करूणा के सागर, दया की शिक्षा दीनी,
राजुल मन वैराग्य जगाकर, मुक्ति सुंदरी लीनी। संकट..

ॐ ह्रीं नेमिनाथजिनस्य वरत्तादि ग्यारह एवं अठारह हजार सर्व मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

पत्थर पानी ओला शोला, क्षमा धर्म को धारा,
''पारस'' सबको प्यारे लगते, हमने तन मन वारा।
संकट हारी सुख के दाता, वंदन करने आये,
अष्ट द्रव्य का थाल सजाकर, पूजन करने आये।।

ॐ ह्रीं पार्श्वजिनस्य स्वयंभु प्रमुख दश गणधर एवं षोडश सहस्त्र सर्वमुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

हुआ प्रत्यक्ष आत्म का दर्शन, हो गया केवलज्ञान,
कर्मों की तोड़ी जंजीरें, ''महावीर'' भगवान। संकट..

ॐ ह्रीं महावीर जिनस्य गौतमादि ग्यारह गणधर एवं चौदह हजार सर्वमुनिवरेभ्यो अर्घ्यं।

जयमाला

दोहा

तीर्थंकर चौबीस को, सदा नमाऊँ माथ।
गणधर ऋद्धि सिद्धि दो, पकड़ो मेरा हाथ।।

।पद्धरि छन्द।।

जय ऋषभदेव अंतर्यामी, जय अजितनाथ सबके स्वामी।
जय संभव भव के हैं हर्ता, जय अभिनंदन आनंद कर्त्ता।।
जय सुमति ज्ञान का दीप जला, जय पद्म सरोवर ज्ञान भरा।
जय-जय सुपार्श्व से हमें आश, जय चंद्र प्रभु करें कर्म नाश।।

जय पुष्पदंत हैं महासंत, जय शीतल देते मुक्ति कंत।
जय-जय श्रेयांस हैं श्रेष्ठ अंश, जय वासुपूज्य का चला वंश।।
जय विमल-विमल उपदेश करें, जय-जय अनन्त निज धर्म धरें।
जय धर्मनाथ का हमें साथ, जय शांति दिखावें धर्म पाथ।।

जय कुंथु जीव रक्षा करते, जय अरह नाथ संकट हरते।
जय मल्लिनाथ अघ मल धोया, जय मुनिसुव्रत व्रत को बोया।।
जय नमिनाथ जग में जहाज, जय नेमि चरण वंदन है आज।
जय पार्श्वनाथ जग के जिनेश, जय महावीरा जी हैं विशेष।।
चौंसठ ऋद्धि स्वयंमेव आये, चौबीसों जिन को शीश नायें।

चौपाई

जय वृषभसेना आदि गणधर, समोवशरण में श्रेष्ठी वर।
विक्रिया ऋद्धि के हैं धारी, महिमा गाते सब नर नारी।
विपुल मति शुभ पाये संता, कर्मों को हन बने अरिहंता।
वे धर्म ध्वजा को फहरावें, अवधि की महिमा को गावें।
वे वाद विवाद कुशल होते, कर्मों का खंडन नित करते।
लाखों श्रावक दर्शन करते, पुण्यों से वे झोली भरते।

चौपाई छंद

लाखों श्राविका साध्वी बनती, आत्माराधन वे नित करती।
यति जन चरणों में तप करते, खपा कर्म वे मुक्ती वरते।
असंख्यात सुर नर भी आते, दिव्य ध्वनि पा वे हर्षाते।
द्वादश मध्य सभा में राजे, सुंदर शोभा आपकी साजे।
धन कुबेर लक्ष्मी ले आये, प्रभु का समवशरण रचवाये।
दर्शन ज्ञान है सौख्य अनंता, चारित से पाया है पंथा।
मूलगुण छ्यालीस के धारी, इनसे शोभा बढ़े तुम्हारी।
दोष अठारह रहित जिनेश्वर, ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर।
चरण आपके गुणों में चंदन, शत्-शत् नित प्रति मेरा वंदन।

त्रिभंगी छन्द

चौबीस जिन स्वामी, अंतर्यामी, तेरी महिमा हम गायें।
संकट हर लेवा, हो सुख देवा, दर्श तेरा पाने आये।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकराणां एक हजार चार सौ बावन गणधर एवं सप्त प्रकारीय अठाईस लाख अड़तालीस हजार समस्त मुनिवरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

करें भक्त जन भक्ति से, शुभ कल्प द्रुम पाठ।
आत्म अतुल संपत्ति वरे, होवे सारे ठाठ
चक्रवर्ति पद पाय फिर, तपधर वन को जाये।
ऋद्धियां सिद्धियां पायकर, अघ समूह नशवाये॥

परि पुष्पांजलि क्षिपेत्

चौंसठ ऋद्धि पूजा

स्थापना (गीता छन्द)

देह में रह देह गत है, सु:ख दुख परमार्थ से,
केवल प्रभु के चरण तुम न, पूजना कभी स्वार्थ से।
शुद्ध भक्ति शुद्ध भावना, औ हृदय भी शुद्ध है,
आओ प्रभो ओ विराजो, मम हुआ मन बुद्ध है॥

ॐ ह्रीं श्री चौसठ ऋद्धिधारी मुनिश्वर: अत्र-अत्र अवतर अवतर संवौषट् आव्हाननं। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

तर्ज- नीर गंध अक्षतान......

नीर शुची लायके, धार जल की करूं,
जन्म जरा नाश हो, मन में भाव ये धरूं।
ऋद्धिधर नाथ को, भाव से पूजहूं,
ऋद्धि सिद्धि प्राप्त हो, चरण मैं नित नमूं॥

ॐ ह्रीं श्री चौसठ ऋद्धिधारी मुनिश्वरेभ्य: जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुगंध चंद लावते, सुगंध जन्म पावते।
क्रोध पाप दूर हो, निजात्म में रमावते॥
ऋद्धिधर नाथ को, भाव से पूजहूं,
ऋद्धिसिद्धि प्राप्त हो, चरण मैं नित नमूं॥

ॐ ह्रीं श्री चौसठ ऋद्धिधारी मुनिश्वरेभ्य: चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

श्वेत-श्वेत है अखंड, लेके शालि आये हम,
चरणों की पूजा करें तो, मोक्ष पद पाये हम।
ऋद्धिधर नाथ को, भाव से पूजहूं,
ऋद्धिसिद्धि प्राप्त हो, चरण मैं नित नमूं॥

ॐ ह्रीं श्री चौंसठ ऋद्धिधारी मुनिश्वरेभ्य: अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

काम भोग पीड़ा दे, पुष्प से पूजिये,
आत्म सिद्धियां बढ़े, कर्म को हनीजिये।
ऋद्धिधर नाथ को, भाव से पूजहूं,
ऋद्धिसिद्धि प्राप्त हो, चरण मैं नित नमूं॥

ॐ ह्रीं श्री चौंसठ ऋद्धिधारी मुनिश्वरेभ्य: पुष्प निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंजनों का थाल ले, चर्ण में चढ़ावते,
हो दयाल हो कृपाल, भूख को मिटावते।
ऋद्धिधर नाथ को, भाव से पूजहूं,
ऋद्धिसिद्धि प्राप्त हो, चरण मैं नित नमूं॥

ॐ ह्रीं श्री चौंसठ ऋद्धिधारी मुनिश्वरेभ्य: नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भौतिकी दीप हो, बाह्य को प्रकाशता,
ज्ञान दीप जब जले, मोह कर्म नाशता।
ऋद्धिधर नाथ को, भाव से पूजहूं,
ऋद्धिसिद्धि प्राप्त हो, चरण मैं नित नमूं॥

ॐ ह्रीं श्री चौंसठ ऋद्धिधारी मुनिश्वरेभ्य: दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदनादि धूप ले के, भाव मैं ये भावता,
अष्ट कर्म नाश हो, कर्म ये सतावता।
ऋद्धिधर नाथ को, भाव से पूजहूं,
ऋद्धिसिद्धि प्राप्त हो, चरण मैं नित नमूं॥

ॐ ह्रीं श्री चौंसठ ऋद्धिधारी मुनिश्वरेभ्य: धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मिष्ट-मिष्ट फल मिले, लेके फल मैं आवता,
मुक्ति फल की आश है, चर्ण में चढ़ावता।

ऋद्धिधर नाथ को, भाव से पूजहूं,
ऋद्धिसिद्धि प्राप्त हो, चरण मैं नित नमूं॥
ॐ ह्रीं श्री चौंसठ ऋद्धिधारी मुनिश्वरेभ्य: फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट ऋद्धि पूजने को, अष्ट द्रव्य लाइये,
अष्ट भूमि प्राप्त हो, सौख्य को बढ़ाइये।
ऋद्धिधर नाथ को, भाव से पूजहूं,
ऋद्धिसिद्धि प्राप्त हो, चरण मैं नित नमूं॥
ॐ ह्रीं श्री चौंसठ ऋद्धिधारी मुनिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ्यं

शम्भू छंद

बारह तप को मुनिवर तपते, ऋद्धि अनेक उन्हें होती है।
षट् भेद सहित अवधिज्ञानी, मिल जाते ज्ञान के मोती है॥
देशावधि सर्वा परमावधि रुपी पदार्थ दिखलाता है।
शुभ त्याग तपस्या करने से, मिल जाये मुझको साता है॥
ॐ ह्रीं अवधि-बुद्धि-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वमामिति स्वाहा॥१॥

मन जैसा चिंतन करता हैं, मन: पर्यय ज्ञान बतायेगा।
टेढ़ा सीधा कैसा विचार, सब उसकी समझ में आयेगा॥
निश्चित यह ज्ञान का अतिशय है, अतिशय कारी यह आतम है।
शुभ त्याग तपस्या करने से, मिल जाता निज का आतम है॥
ॐ ह्रीं मन: पर्यय-बुद्धि ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

हो पूर्ण प्रकाशित ज्ञान तभी, ऋद्धि केवल तब प्रगट हुई।
दर्पण वत लोकालोक दिखे, सम्पूर्ण आत्मा शुद्ध हुई॥
शुभ केवल ज्ञान की ज्योति जगे, भावों से अर्घ्यं चढ़ाते है।
केवल 'कैवल्य की आशा है, चरणों में शीश झुकाते है॥
ॐ ह्रीं केवल-बुद्धि-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३॥

शब्दों की सुन्दर माला से, जब एक शब्द का ज्ञान करे।
सारा आगम प्रतिभाषित हो, सारे श्रुत का आधार बने॥
यह बीज बुद्धि है कल्पवृक्ष, भावों से अर्घ्य चढ़ाते है।
तपत्याग की मूरति ऋषिवर को, हम निशदिन शीश झुकाते हैं

ॐ ह्रीं बीज बुद्धि-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

रखवाया एक ही कोठे में, सब अन्न मगर है अलग-अलग।
मिश्रण बिन बुद्धि में आगम, हो वास सभी का पृथक-पृथक॥
वे श्रेष्ठ धारणा के मुनिवर, उनको हम शीश झुकाते है।
ऋद्धि-सिद्धि उपहार मिले, हम यही भावना भाते हैं॥

ॐ ह्रीं कोष्ठ-बुद्धि ऋद्धिधारक, सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५।।

हर ग्रंथों में पद हो अनेक, गुरु सिर्फ एक पद ज्ञान करे।
पूरा ग्रंथों का ज्ञान होय, ज्ञानी सबका अज्ञान हरे॥
पादानुसारिणी ऋद्धि है, मुनिवर ऋषिवर के पास रहे।
सब ज्ञान के कारण संभव है, उनके संग ज्ञान की धार बहे॥

ॐ ह्रीं पादानुसारिणी-श्रोत-बुद्धि-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामिति स्वहा।।६।।

सुनने का अतिशय है विशेष, समझे नर पशु की वाणी को।
संख्या नौ योजन दूर रहे, समझाते सब अज्ञानी को॥
अनक्षर औ अक्षर वाली, सबकी भाषा है पृथक-पृथक।
ऋषिवर को शीश झुकाये हम, जग में जाये न कहीं अटक॥

ॐ ह्रीं समिन्नश्रोत्र-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

सारी दुनिया दीवानी है, रसना का रस लेती रहती।
निश दिन उपवास है आप करें पर आपसे कुछ भी न कहती॥
यह त्याग तपस्या का फल है, दूरास्वादन ऋद्धि मिलती है।
नाना रस स्वयं ही स्वाद लहे सुख शांति की कलियां खिलती है॥

ॐ ह्रीं दूरास्वादन-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

प्रकृति परिवर्तित होती है, ऋतुए क्रम से ही आती हैं।
स्पर्श करे स्पर्शन को, सुख पा करके हर्षाती हैं॥
संख्या नौ योजन स्पर्श, ऋद्धिधारी को होता है।
पूजा जो इनकी करता है, वह कठिन कर्म को खोता है॥
ॐ ह्रीं दूरस्पर्श-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपमीति स्वाहा॥९॥
जग गंध-सुगंध के पाने को, भंवरे बन पुष्पों पर रहते।
कस्तूरी पाने को मानव, हिंसा करने से ना डरते॥
पर ऋद्धिधारी मुनिवर जी, उत्कृष्ट क्षेत्र की गंध लहे।
सम्यक्त्व प्राप्त ऐसे ऋषि के, चरणों में आ हम नमन करे॥
ॐ ह्रीं दूरगन्ध-ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१०॥
पर्वत ऊपर तप करने को, मुनिवर गिरिवर को जाते हैं।
निज आतम तत्व से प्रीति करें, निज आतम में हर्षाते हैं॥
उत्कृष्ट विषय कर्णेन्द्रिय का, मानुष पशु की वे वाणी सुनें।
मैं पाऊँ दूर श्रवण ऋद्धि, मुनिवर के पावन चरण नमे॥
ॐ ह्रीं दूरश्रवण-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥११॥
उत्कृष्ट क्षेत्र नेत्रेन्द्रिय का, चक्री से भी ज्यादा होता।
इन्द्रिय आँखों से कम देखे, आतम का अवलोकन होता॥
वे अनशन धर उपवास करें, इससे शक्ति बढ़ती जाती।
ऐसे ऋषिवर को नमन करें, चक्षु अभिव्यक्ति बढ़ जाती॥
ॐ ह्रीं दूरदर्श-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१२॥
अविराम निरंतर तप करते, विश्राम जरा न करते है।
प्रज्ञा ही स्वयं विकसित होती, सूक्ष्म आगम को वरते है॥
प्रज्ञा के है धनवान गुरु, वे प्रज्ञा श्रमण कहाते है।
इन महातपो महायोगी को, शत-शत हम शीश झुकाते हैं॥
ॐ ह्रीं प्रज्ञाश्रवण-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१३॥
श्रुत ज्ञान का विषय अनंतो है, सब लोकाकाश को जानता है।
अष्टांग महानिमित्त बल से, शुभ-अशुभ बात बतलाता है॥

अभ्र भौम स्वर व्यंजन आदी, लक्षण जिनके होते हैं।
हो स्वपर भेद विज्ञान हमें, गुरुवंदन हम नित करते हैं।।

ॐ ह्रीं अष्टांग निमित्त-बुद्धि-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।।१४।।

कितना भी ज्ञानी आ जावे, पर कोई जीत नहीं सकता।
वे वाद-विवाद कुशल मुनिवर, आगे कोई न टिक सकता।।
अपनी बुद्धि उपयोग करें, झंडा जिन धर्म का फहरावे।
मैं बारंबार नमूं गुरुवर, मेरी बुद्धि भी खिल जावे।।

ॐ ह्रीं वादित्व-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५।।

नित ध्यान करे, स्वाध्याय करें, आतम प्रकाश बढ़ जाता है।
ग्यारह अंगों का ज्ञान करें, चौदह पूर्वी मन भाता है।।
श्रुत चिंतन कर श्रुत केवलि हों, निज भेद ज्ञान को पूर्ण करें।
पाऊँ ऋद्धि में भी ऋषिवर हम बारंबार प्रणाम करें।।

ॐ ह्रीं चतुदर्श पूर्व-ऋद्धिधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६।।

दशम पूर्व जब पूरा होता, महा विद्यायें आती हैं,
वे कार्य करन आज्ञा मांगे, मुनिवर के मन को भाती है।।
श्रुत चिंतन कर श्रुत केवलि हों, निज भेद ज्ञान को पूर्ण करे।
पाऊँ ऋद्धि मैं भी ऋषिवर, हम बारंबार प्रणाम करें।।

ॐ ह्रीं दसपूर्वीधारक-सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७।।

जड़-चेतन का ही भेद जान, आतम का रुप लखा करते।
वे ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता को जान, वे आतम निजी सखा वरतें।।
प्रत्येक ऋद्धि के धारी मुनि, निज भेद ज्ञान को पूर्ण करे।
पाऊँ ऋद्धि मैं भी ऋषिवर, हम बारम्बार प्रणाम करें।।

ॐ ह्रीं प्रत्येक बुद्धि ऋद्धिधारी-सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८।।

रोला छंद

नभ तल ऋद्धिधारी मुनिवर, नभ में चलकर गमन करे।
चले बैठ के या आसन से, विविध रूप में नमन करे।।

''नभ चारण'' ऋद्धिधारी की, हम पूजा करते भाव से।
दुःख संकट दारिद्र दूर हो, इनकी निर्मल छांव से।।

ॐ ह्रीं नभचारण ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९।।

धर्म अहिंसा पालन करके, ऋद्धि ऐसी पाते है।
जल में चले जन्तु न मारे, नहि जग में भरमाते है।।
''जल चारण ऋद्धिधारी की, हम पूजा करते भाव से।
दुःख संकट दारिद्र दूर हो, इनकी निर्मल छांव से।।

ॐ ह्रीं जलचारण ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०।।

यदि चलते आकाश में वे तो, घुटने कभी न मोड़ते।
चारांगुल पृथ्वी से ऊपर, चले धर्म न छोड़ते।।
जंघाचारण ऋद्धिधर की, हम पूजा करते भाव से।
दुख संकट दारिद्र दूर हो, इनकी निर्मल छांव से।।

ॐ ह्रीं जंघाचारण ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१।।

ऋद्धि के स्वामी होकर के वे, पुष्प फलों पत्ते चलते।
जरा कष्ट न होता उनको, कली फूल बनकर खिलते।।
पुष्प पत्र चारण ऋषिवर की, हम पूजा करते भाव से।
दुःख संकट दारिद्र दूर हो, इनकी निर्मल छाव से।।

ॐ ह्रीं पुष्पपत्रचारण ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२।।

तप अग्नि में इतना तपते, ईंधाग्नि बेकार है।
अग्नी में चारण करके वे, करे ऋद्धि से प्यार है।।
''अग्नि चारण'' ऋद्धिधर की, हम पूजा करते भाव से।
दुख संकट दारिद्र दूर हो, इनकी निर्मल छांव से।।

ॐ ह्रीं अग्निचारण ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३।।

मेघो में बने वे मेघधर, शुद्ध ऋद्धि के नाथ है।
बीच मेघों के चलते हैं, पर हो न जन्तु घात है।।
मेघा चारण ऋद्धिधर की, पूजा करते भाव से।
दुख संकट दारिद्र दूर हो, इनकी निर्मल छांव से।।

ॐ ह्रीं मेघाचारण ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४।।

तंतु कोमल होता है पर, रेशा भी न टूटता।
है अतिशय तन में उनके कुछ, संयम भी न छूटता॥
तन्तु चारण ऋद्धिधर की, पूजा करते भाव से।
दुख संकट दारिद्र दूर हो, इनकी निर्मल छांव से॥

ॐ ह्रीं तन्तुचारण ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२५॥

लोक हुआ ज्योतिर्मय सारा, रवि चन्द्र नक्षत्र से।
काल देखकर गमन वे करते, हो आनन्दित भक्त से॥
''ज्योतिष चारण'' ऋद्धिधर की, हम पूजा करते भाव से।
दुख संकट दारिद्र दूर हो, इनकी निर्मल छाव से॥

ॐ ह्रीं ज्योतिष चारण ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२६॥

वायु पंक्ति गमन हैं करते, चलते हैं आकाश में।
प्रतिक्षण ज्ञानी ध्यानी रहते, रहते न अवकाश में॥
वायु चारण ऋद्धिधर की, हम पूजा करते भाव से।
दुख संकट दारिद्र दूर हों, इनकी निर्मल छाव से॥

ॐ ह्रीं वायु चारण ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२७॥

चाल छंद

अणुरुप बराबर होवे, ऋषि छेद में भी घुस जावे।
अणिमा ऋद्धि के धारी, पूजा है जग हितकारी॥

ॐ ह्रीं अणिमा ऋद्धि धारक एकादशभेद सहित सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२८॥

पर्वत सुमेरु सम होवे, तप बल से देह बढ़ावे।
''महिमा'' ऋद्धि के धारी, पूजा है जग हितकारी॥

ॐ ह्रीं महिमा ऋद्धिधारक एकादशभेद सहित सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥२९॥

होवे वायु सा हल्का, उपयोग करे हर पल का।
''लघिमा'' ऋद्धि के धारी, पूजा है जग हितकारी॥

ॐ ह्रीं लघिमा ऋद्धिधारक एकादशभेद सहित सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥३०॥

करते हैं भारी तन को, नहि होती ये जन-जन को।
''गरिमा'' ऋद्धि के धारी, पूजा है जग हितकारी॥

ॐ ह्रीं गरिमा ऋद्धिधारक एकादशभेद सहित सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१।।

भूमि पर ही रहते हैं, औ सूर्य चन्द्र छूते हैं।
''प्राप्ति'' ऋद्धि के धारी, पूजा है जग हितकारी॥

ॐ ह्रीं प्राप्ति ऋद्धिधारक एकादशभेद सहित सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२।।

जल में ऐसे चलते हैं, जैसे पग भू पर धरते हैं।
''प्राकाम्य'' ऋद्धि के धारी, पूजा है जग हितकारी॥

ॐ ह्रीं प्राकाम्य ऋद्धिधारक एकादशभेद सहित सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३।।

ईश्वर सम है कहलाते, अतिशय कारी बन जाते।
''ईशत्व'' ऋद्धि के धारी, पूजा है जग हितकारी॥

ॐ ह्रीं ईशत्व ऋद्धिधारक एकादशभेद सहित सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४।।

होता वश में जग सारा, बस गुरु ही लगता प्यारा।
वशित्व ऋद्धि के धारी, पूजा है जग हितकारी॥

ॐ ह्रीं वशित्व ऋद्धिधारक एकादशभेद सहित सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५।।

बिन छेद शैल घुस आवे, मन चाहे जगह में जावे।
''अप्रतिघात'' ऋद्धि के धारी पूजा है जग हितकारी॥

ॐ ह्रीं अप्रतिघात ऋद्धिधारक एकादशभेद सहित सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६।।

देखत-देखत-छिप जावे, नहि नजर किसी को आवे।
''अन्तर्ध्यान'' ऋद्धि के धारी, पूजा है जग हितकारी॥

ॐ ह्रीं अन्तर्ध्यान ऋद्धिधारक एकादशभेद सहित सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७।।

मनवांछित रुप बनावे, औ वांछित फल को पावै।
''कामरुपिणी'' ऋद्धि के धारी, पूजा है जग हितकारी॥

ॐ ह्रीं कामरुपिणी ऋद्धिधारक एकादशभेद सहित सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८।।

पद्धरि छन्द

तपसी तप में नित लीन रहे, वह उग्र-उग्र तप रोज करे।
लेकर दीक्षा से मरण काल, वह एक-एक उपवास करे॥
ये दुष्ट कर्म तप से जाये, ज्ञानी ही तप में मन लगाये।
चौंसठ ऋद्धि पूजा रचाये, ऋद्धि सिद्धि मम पास आए।

ॐ ह्रीं उग्र तपोतिशय ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९।।

तप से तप ही बढ़ जाता है, भोजन से मिलती साता है।
आहार करे नीहार न हो, ना मल धातु आश्चर्य अहो॥
मन बल बढ़ता, तन बल बढ़ता तप करने से तप ही बढ़ता।
है तप्त ताप ऋद्धि सुख दे, मुझको भी तप की शक्ति दे॥

ॐ ह्रीं तप्त तपोतिशय ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०।।

ऋद्धि अनेक के है स्वामी, तप से हो गये चारो ज्ञानी।
उत्तम से उत्तम त्याग किया, निज आत्म ध्यान में को ध्याये जिया॥
वे सिंह निष्क्रीड़ित व्रत धारे, ये कर्म शत्रु तुमसे हारे।
ये महाताप ऋद्धि वर दे, मुझको भी तप की शक्ति दे॥

ॐ ह्रीं महातपोतिशय ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१।।

बारह तप करते गुरु विशेष, न रहे कोई भी साथ शेष।
अति जंतु भयंकर रहे जहां, तप करने साधु जायें वहां॥
चहुं ओर घना जंगल छाया, गुरु न डरते रहती माया।
ज्वर आदि कोई आ जावे, आतापन से न घबरावे॥

ॐ ह्रीं घोर तपोतिशय ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२।।

उत्कृष्ट तपस्या लीन रहे, अतिशय ऋद्धि को प्राप्त करे।
वे तीन लोक को जीत सके, सागर का पानी सोख सके॥
यद्यपि यह कार्य नहीं करते, पर शक्ति पूरी है धरते।
यह घोर पराक्रम ऋद्धि दे, मुझको भी ऐसी शक्ति दे॥

ॐ ह्रीं घोर पराक्रम ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४३॥

वे व्रत पंच महाव्रत पाले हैं, समिति गुप्ती रखवाले है।
वे ध्यान साधना करते है, नित आतम में चित धरते है॥
दुर्भिक्ष कलह वध रोग भगे, ऋद्धिधर जहां निवास करे।
ऋद्धि "ब्रह्मचारी" अघोर है, वरदान की मेरी बारी है॥

ॐ ह्रीं अघोर ब्रह्मचर्य तपोतिशय ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४४॥

मुनिघोर तपस्या कर करके, ऋद्धि-सिद्धि को प्राप्त करे।
निज आत्म साधना बढ़-बढ़, गुण-गण का नित भंडार भरे॥
बेला तेला और पक्षमास, उपवास करे सुख पाते है।
शक्ति तप की हम भी पावे, चरणों में शीश झुकाते॥

ॐ ह्रीं उग्र तपोतिशय ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४५॥

चालछंद
चौपाई

"मन बल" ऋद्धि है सुखकारी, मन ही सुखी दुखी करतारी।
श्रुत चिंतन करे दोय घड़ी में, पूजा करते सभी झड़ी में॥
मन को पूरी शक्ति देना, केवल मन ही शुद्ध कर देना
होवे ऐसी कृपा तुम्हारी, हम हैं तेरे सदा आभारी।

ॐ ह्रीं मनोबल ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥४६॥

त्रिभंगी छंद

वचनों की शक्ति, प्रभु की भक्ति, श्रुत उच्चारण करते हैं।
है वचन विशेषा, शक्ति अशेषा, सरस्वती को वरते हैं।।
है मधुरस वाणी, जन कल्याणी कर्म को तृप्ति देती है
ऋद्धि मैं पाऊँ, सिद्धि ध्याऊँ सारा दुख हर लेती है।

ॐ ह्रीं वचनबल ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपायीति स्वाहा।।४७।।

चाल छंद

कायोत्सर्गासन ठाड़े, गर्मी वर्षा या जाड़े।
वे कष्ट न कोई पावे, अतिशय ऋद्धि बतलावे।।
तप करने शक्ति आई, तप ने तप शक्ति बढ़ाई।
हम शक्ति ''काय बल'' पाये, जग में न फिर भरमाये।।

ॐ ह्रीं कायबल ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८।।

तप अग्नि ऐसी जलावे, सब कर्म रोग नश जावें।
आमर्शोषधि को पाया, रोगों का किया सफाया।।
मैं पूजा करने आया, चरणों में शीश झुकाया।
सब रोग शोक मिट जाये, आशीष आपका पाये।

ॐ ह्रीं आमर्शौषधि ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९।।

कफ लार थूक आ जाये, वह रोगों को नशवाये।
''क्ष्वेलौषधि'' ऋद्धि को पाया, रोगों का किया सफाया।।
मैं पूजा करने आया, चरणों में शीश झुकाया।
सब रोग शोक मिट जाये, आशीष आपका पाये।।

ॐ ह्रीं क्ष्वैलौषधि ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०।।

तनु स्वेद जल्ल मल आये, तप से औषध बन जाये।
''जल्लौषधि'' ऋद्धि को पाया, रोगों का किया सफाया।।
मैं पूजा करने आया, चरणों में शीश झुकाया।
सब रोग शोक मिट जाये, आशीष आपका पाये।।

ॐ ह्रीं जल्लौषधि ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१।।

जिव्हा कर्णादि मैल, औषध का बनता तेल।
''मल्लौषधि'' ऋद्धि को पाया, रोगों का किया सफाया॥
मैं पूजा करने आया, चरणों में शीश झुकाया।
सब रोग शोक मिट जाये, आशीष आपका पाये॥

ॐ ह्रीं मल्लौषधि ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५२॥

औषधि मल मूत्र बने है, भक्तों की व्याधि हरे है।
''विप्रोषधि'' ऋद्धि को पाया, रोगों की किया सफाया॥
मैं पूजा करने आया, चरणों में शीश झुकाया।
सब रोग शोक मिट जाये आशीष आपका पाये॥

ॐ ह्रीं विप्रौषधि ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५३॥

मुनि तन जो वायु छुये है, वह वायु रोग हरे है।
''सर्वोषधि'' ऋद्धि को पाया, रोगों का किया सफाया॥
मैं पूजा करने आया, चरणों में शीश झुकाया।
सब रोग शोक मिट जाये, आशीष आपका पाये॥

ॐ ह्रीं सर्वोषधि ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५४॥

अन्नादि में यदि विष हो, मुनि कहते ही निर्विष हो।
नर व्याधि मुक्त हो जाये, ''मुख निर्विष'' ऋद्धि आये॥
मैं पूजा करने आया, चरणों में शीश झुकाया।
सब रोग शोक मिट जाये, आशीष आपका पाये॥

ॐ ह्रीं मुखनिर्विषौषधि ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५५॥

दृष्टि में औषध आया, देखत निर्विष करवाया।
दृष्टि निर्विष हो आये, अमृत सब बरसाये॥
मैं पूजा करने आया, चरणों में शीश झुकाया।
सब रोग शोक मिट जाये, आशीष आपका पाये॥

ॐ ह्रीं दृष्टि निर्विषौषधि ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥५६॥

शेर चाल

तप धारने से ऋद्धियां आती है वे स्वयं
सम्यक्त्व ज्ञान पा लिया, गल जाता है अहम।
मर जा कहे तो शीघ्र ही, मर जायेगा वहीं
पर वे प्रयोग न करें, आशीर्विष कहीं।।

ॐ ह्रीं "आशीर्विष" प्राप्त सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७।।

यदि कभी गलती करे तो क्रोध आयेगा,
औ देख ले जो क्रोध से, मृत्यु को पायेगा।
करूणा के है निधान वे, ऐसा नहीं करते,
"दृष्टि" में रखते विष पर, वरदान ही देते।

ॐ ह्रीं दृष्टिविष प्राप्त सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८।।

हाथों में यदि रूक्ष, आहार आयेगा,
हो जायेगा स्वादिष्ट, क्षीर स्वाद पायेगा।
ये त्याग-त्याग करके आहार करे हैं,
ये ऋद्धि क्षीर स्रवि फिर निज में धरे हैं।।

ॐ ह्रीं क्षीरस्रावी रसऋद्धि प्राप्त सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९।।

हाथों में यदि रूक्ष, आहार आयेगा,
हो जायेगा स्वादिष्ट मधु स्वाद पायेगा।
ये त्याग-त्याग करके आहार करें हैं,
ये ऋद्धि मधु स्त्रावी फिर निज में धरे हैं।।

ॐ ह्रीं मधुस्राव‍ि रसऋद्धि प्राप्त सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपायीवि स्वाहा।।६0।।

हो विष मिला भोजन यदि, अमृत उसे करे,
वाणी में भरा ज्ञान जो अमृत सा नित झरे।
ये ऋद्धियां जन-जन की सभी आपदा हरे,
है ऋद्धि अमृतस्त्रावी पापी सभी तरे।।

ॐ ह्रीं अमृतस्त्रावी प्राप्त सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१।।

हाथों में यदि रूक्ष, आहार आयेगा,
होगा नहीं वो नीरसा, घी का स्वाद पायेगा।
अतिशय है उसके तन में जो स्वस्थ्य रहे है,
ऋद्धि है सर्पिस्रावी जो कष्ट हरे है।।

ॐ ह्रीं सर्पिस्रावी रसऋद्धि प्राप्त सर्वमनुशीवरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२।।

भुजंग प्रयात (नरेंद्र फणीन्द्र)

करे वे तपस्या तो ऋद्धि है आती, आके मुनीवर को शीश झुकाती।
ऐसे मुनि जहां आहार लेते, न हो खतम औ सभी जीम लेते।।
अक्षीण ऋद्धि के धारी मुनीवर, करते नमस्कार हो शांति गुरुवर।
पूजा तेरी चित्त को शांति देती, हरती करम को सभी सौख्य लेते।।

ॐ ह्रीं अक्षीण महानस ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्वपाममीति स्वाहा।।६३।।

भूमि हो थोड़ी बहुत जीव बैठे, जरा न हो कष्ट सभी दर्श लेवे।
कब मैं करूं दर्श ऐसे मुनी का, छू लूं चरण वर मैं पालूं उन्हीं का।।
ऋद्धि महालय के धारी मुनीवर, करते नमस्कार हो शांति गुरुवर।
पूजा तेरी चित्त को शांति देती, हरती करम को सभी सौख्य देती ।।

ॐ ह्रीं अक्षीण महालय ऋद्धिधारक सर्वऋषिश्वरेभ्य: अर्घ्यं निर्विपामीति स्वाहा।।।६४

जयमाला

सोरठा

ऋद्धि उन्हीं के होय, घोर तपस्या जो करे।
बीज मुक्ति का बोय, अतुल्य बल और शक्ति से।।

तर्ज: हे दीन बन्धु.....

जय ऋद्धियों के नाथ तुम्हें नमस्कार है,
तप त्याग के हो नाथ तुम्हें नमस्कार है।।

मुनिराज घोर तप करें तब आये ऋद्धियां,
निज आत्मा के ध्यान से आती हैं सिद्धियां॥१॥
घातिया को घात के अरिहंत बन गये,
आई थी तभी ऋद्धियां, आनंद छा गये।
शुभ बुद्धि के हैं भेद अठारह सभी कहे,
विक्रिया के ग्यारा हैं निज कर्म को दहे॥२॥
ऋद्धि चारणा से वे आकाश में चले,
नौ भेद सहित हैं, कहीं और जीव न मरे।
घोर तपस्या करे तप ऋद्धि प्राप्त हो,
ये सात विध कहीं है फिर बने आप्त वो॥३॥
वच काय मन को ऋद्धियां शक्ति विशेष दे,
निज आत्मा को ध्याते औं शांति विशेष ले।
मन शुद्ध है तन शुद्ध और काय शुद्ध है,
सब कर्म का करके हनन बन जाये बुद्ध है॥४॥
तप औषधि बन ऋद्धियां करती निरोग हे,
सब स्वस्थ होवे जीव भगे रोग शोक है।
अष्ट भेद औषधी ऋद्धि के हैं के,
मुनिराज हमारे हरे सब रोग शोक है॥५॥
हो पाप कर्म भी जहां रस नीरसा होवे,
रस ऋद्धियां है षट विधा, जो पाप को खोवे।
सब कर्म क्षीण करने को अक्षीण ऋद्धि हैं,
भरपूर सभी वस्तु हो ये पाई सिद्धि है॥६॥
अक्षीण ऋद्धि भेद से होती है दो प्रकार,
ऋषियों के चरण पूजते, मिटते सभी विकार।
आत्मा के ध्यान में जो लीन हो सदा,
वे कर्म शत्रुओं को शीघ्र देते हैं भगा॥७॥

करते तपस्या ऋद्धियों का ध्यान न करे,
वे ऋद्धियां आके स्वयं मुनिराज को वरे।
होती है चाह सिर्फ उन्हें सिद्ध शिला की,
शुभ त्याग तपस्या ने उन्हें मुक्ति दिला दी।।८।।
कृत्रिम या अकृत्रिम की करे अभिनंदना,
मुनिराज ऋद्धि पाके करें, तीर्थ वंदना।
वे जायें जहां होते कभी वहां दुख ना,
खुशियाली हो चारों तरफ आनंद हो घना।।९।।
हम करते नमस्कार ऐसे मुनिराज को,
जो पार करते भव से, बनते जहाज वो।
मुनिराज वे आशीष दें, सब दुख को हरें,
सब ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त हो, फिर मुक्ति को वरे।।१०।।

दोहा

अष्ट भेद हैं ऋद्धि के, जो पाले मुनिराज।
तपधर कर्म को काट के, पहना मुक्ति का ताज।।

ॐ ह्रीं श्री चौंसठ ऋद्धिधारी जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

करे भक्तजन भक्ति से, कल्पद्रुम शुभ पाठ
आत्म अतुल संपत्ति वरे, होवे सारे ठाठ
चक्रवर्ति पद पाय फिर, तप धर वन को जाये।
ऋद्धि-सिद्धियां पाये फिर, अघ समूह नशवाये।।

।।परिपुष्पांजलि क्षेपम्।।

सर्व साधु-पूजा

अथ स्थापना

(गीता छंद)

बारह सभा में जीव बैठे, और है मुनिवर वहाँ।
वे सप्त भेदो से सहित, कांति बढ़े जिनवर जहाँ॥
ये सर्वसाधु पूज्य है, संयम नियम को पालते।
पूजक यहाँ पूजा करे, सब कर्म पर्वत टालते॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितसर्वऋषिसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौष्ट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितसर्वऋषिसमूह! अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितसर्वऋषिसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

गीता छंद

मैली हुई है आत्मायें मैल कर्मों का भरा।
अब कर्म मल धोने प्रभु, तेरे चरण में आ गिरा॥
होय उज्जवल आत्मा, हम सर्व साधु पूजते।
औ मेरू सम वे अचल रहते, यह जगत ना घूमते॥१॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितसर्वऋषिभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अल्पज्ञ हूँ कुछ ज्ञान नाही, हर समय संकट घिरे।
यह आत्मा को दाह देते, कर्म सारे सिर फिरे॥
पायेगें शीतल नगर हम, सर्व साधु पूजते।
औ मेरू सम वे अचल रहते, हम कहीं ना घूमते॥२॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितसर्वोषिभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय निधि भंडार अंदर, बन भिखारी घूमता।
साधक बने समता को धारे, तब चरण को चूमता॥

पायेगें अक्षय नगर हम, सर्व साधु पूजते।
औ मेरू सम वे अचल रहते, हम कही ना घूमते॥३॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितसर्वऋषिभ्य: अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

परिज्ञान औ परिबोध पाकर, आत्मा जाग्रत हुई
वासना से दूर होकर, धर्म ज्योति जग गई।
हम पायेगें पुष्पों की नगरी , सर्व साधु पूजते।
औ मेरू सम वे अचल रहते, हम कही ना घूमते॥४॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितसर्वऋषिभ्य: पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

उपलब्धि होती खूब तब, जब आत्मायें तृप्त हों।
पाऊँ प्रतीति आत्मा की, भूख जब मम नष्ट हो॥
नैवेद्य लेकर आ गया मैं, सर्व साधु पूजने।
वे मेरू सम जो अचल रहते, हम कही ना घूमते॥५॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितसर्वऋषिभ्य: नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रद्धान का दीपक जला, मिथ्या तिमिर सब हट गया।
अविनाशी पद की साधना, अज्ञान तम भी घट गया॥
उजियारा हो चारों तरफ, हम सर्व साधु पूजते।
औ मेरू सम वे अचल रहते, हम कहीं ना घूमते॥६॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितसर्वऋषिभ्य: दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

भयभीत है सब लोग ही, बाधायें पथ में डालते।
हम पाने निर्भयता प्रभु जी, धर्म को नित पालते॥
ये कर्मों की जंजीर टूटे, सर्व साधु पूजते।
औ मेरू सम वे अचल रहते, हम कहीं ना घूमते॥७॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितसर्वऋषिभ्य: धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आलोकमय है सिद्ध पदवी, फल तपस्या का मिला।
साधक बना तप त्याग कीना, फूल जीवन में खिला॥
मुक्तिपुरी फल पाऊँ जिनवर, सर्व साधु पूजते।
औ मेरू सम वे अचल रहते, हम कही ना घूमते॥८॥

ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकर समवसरणस्थितसर्वऋषिभ्य: फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पावन परम तेरे चरण मैं, पूजने को आ गया।
पावन परम चरणों को पाकर, मन में मैं हर्षा गया।।
लेकर के अर्घ्यों की ये थाली, सर्व साधु पूजते।
औ मेरू सम वे अचल रहते, हम कही ना घूमते।।९।।

ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितसर्वऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ्य

सत्य ज्ञान धारी गुरू, त्याग तपस्या लीन।
मूल गुण अठ बीस है, धार रत्नत्रय तीन।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलि क्षिपेत्।

चौपाई

समवशरण था ऋषभ जिनेश्वर, बैठे उसमें मुनि पूर्वधर।
ज्ञानी ध्यानी और तपस्वी, आगम ज्ञाता और यशस्वी।।
ऋषभनाथ की छाया पाई, निज आतम की ज्योति जगाई।
अहम बुद्धि बंधन को तोड़ा, निज आतम से नाता जोड़ा।।१।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभनाथतीर्थंकरस्य पंचाशदधिकचतु:सहस्त्रसप्तशतपूर्वधरऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान प्राप्त कर शिक्षा पायें, शिक्षा से शिक्षक बन जायें।
राग द्वेष मद मोह भगाया, जो भी प्रभु की शरणा आया।।
ऋषभनाथ की छाया पाई, निज आतम की ज्योति जगाई।
अहम बुद्धि बंधन को तोड़ा, निज आतम से नाता जोड़ा।।२।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभनाथस्य पंचाशदधिकचतु:सहस्त्रएकशतशिक्षकऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में बंध न होते, अवधी ज्ञानी मुनिवर रहते।
ज्ञान में भूत भविष्य को देखें, इसका भी यह कारण लेखे।।
ऋषभनाथ की छाया पाई, निज आतम की ज्योति जगाई।
अहम बुद्धि बंधन को तोड़ा, निज आतम से नाता जोड़ा।।३।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभनाथस्य नवसहस्त्रअवधिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक आतम में झलके, स्पंदन न करती पलकें।
प्रभु केवल की ज्योति जगाये, जग में भी उजियारा छायें॥
ऋषभनाथ की छाया पाई, निज आतम की ज्योति जगाई।
अह्म बुद्धि बंधन को तोड़ा निज आतम से नाता जोड़ा॥४॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभनाथस्य विंशातिसहस्त्रकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

त्याग वरे विक्रिया हे आई, कर्मों की सेना भग जाई।
दर्शन कर मन तृप्ती पायें, तारण तरण है गुरु हमारे॥
ऋषभनाथ की छाया पाई, निज आतम की ज्योति जगाई।
अह्म बुद्धि बंधन को तोड़ा निज आतम से नाता जोड़ा॥५॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभनाथस्य विंशतिसहस्त्रषट्शतकविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

टेढ़ा-मेढ़ा मन यह सोचे, विपुल मति इसको भी जॉचे।
केवल ज्ञानी संग में जायें, सब अपना अज्ञान मिटाये॥
ऋषभनाथ की छाया पाई, निज आतम की ज्योति जगाई।
अह्म बुद्धि बंधन को तोड़ा निज आतम से नाता जोड़ा॥६॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभनाथस्य पंचाशदधिकद्वादशसहस्त्रसप्तशतविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वाद विवाद मे जीत सके न, त्याग तपस्या करके थके न।
वाद करे अज्ञानी हारे, मिले चरण में उसे सहारे॥
ऋषभनाथ की छाया पाई, निज आतम की ज्योति जगाई।
अह्म बुद्धि बंधन को तोड़ा निज आतम से नाता जोड़ा॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभनाथस्य पंचाशदधिकद्वादशसहस्त्रसप्तशतवादिऋषिभ्य: अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दोहा

ऋषभदेव के संघ में, ऋषिवर रहते साथ।
द्रव्यभाव का अर्घ्य ले, और झुकाऊँ माथ॥

ॐ ह्रीं श्रीऋषभनाथस्य चतुरशीतिसहस्त्रऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

श्री अजितनाथ

चौपाई

दो वरदान प्रभु मैं आया, पूर्वधरों का दर्शन पाया।
निश्चित वे भगवान बनेगें, कर्म भाव में नही फसेंगे।।
अजित नाथ भगवान की भक्ति, करने आया मैं अभिव्यक्ति।
गुरुवर मुझको शरण में लेना, जाने को अब मुझे ना कहना।।८।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथस्य पंचाशदधिकत्रिसहस्त्रसप्तशतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिक्षक मुनि इक्कीस सहस है, करते नाही कोई बहस है।
साम्य भाव पीयुष को पीते, ज्ञानामृत पीकर के जीतें।।
अजितनाथ भगवान की भक्ति, करने आया मै अभिव्यक्ति।
गुरुवर मुझको शरण में लेना, जाने को अब मुझे ना कहना।।९।।

ॐ ह्रीं श्रीअजितनाथस्य एकविंशातिसहस्त्रषट्शतशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अवधिज्ञानी का ज्ञान है ऊँचा, कभी नही वह रहता नीचा।
ज्ञानी ज्ञान की बात को समझें, आत्म ध्यान में निश दिन रमते।।
अजित नाथ भगवान की भक्ति, करने आया मैं अभिव्यक्ति।
गुरुवर मुझको शरण में लेना, जाने को अब मुझे ना कहना।।१०।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथस्य नवसहस्त्रचतु: शतअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घात घातिया केवल पाया, आतम में त्रिलोक समाया।
स्वच्छ हुआ यह आतम सारा, निज आत्म का मिला सहारा।।
अजित नाथ भगवान की भक्ति, करने आया मैं अभिव्यक्ति।
गुरुवर मुझको शरण में लेना, जाने को अब मुझे ना कहना।।११।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथस्य विंशतिसहस्त्रकेवलज्ञानीऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि विक्रिया कर वन जाते, मन्दिर के दर्शन कर आते।
पर उपकार भी करते रहते, स्वार्थ में वे ना ही फँसते।।

अजित नाथ भगवान की भक्ति, करने आया मैं अभिव्यक्ति।
गुरुवर मुझको शरण में लेना, जाने को अब मुझे ना कहना॥१२॥
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथस्य विंशतिसहस्त्रचतुः शतविक्रियाधारिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विपुलमति ने मति सुधारी, अज्ञानी की जड़ता हारी।
आतम रस का पीते प्याला, पायेंगे ये ज्ञान विशाला॥
अजित नाथ भगवान की भक्ति, करने आया मैं अभिव्यक्ति।
गुरुवर मुझको शरण में लेना, जाने को अब मुझे ना कहना॥१३॥
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथस्य पंचाशदधिकद्वादशसहस्त्रचतुः शतविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वाणी का उपयोग किया है, वाद से सबको मोह लिया है।
जीवन क्षेत्र में सबसे आगे, भाग्य आपके निश्चित जागे॥
अजित नाथ भगवान की भक्ति, करने आया मैं अभिव्यक्ति।
गुरुवर मुझको शरण में लेना, जाने को अब मुझे ना कहना॥१४॥
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथस्य द्वादशसहस्त्रचतुः शतवादिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य-दोहा

एक लाख संग में ऋषि, अजितनाथ के साथ।
पाऊँ मैं भी संगति, मुझको है ये आस॥
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथस्य सर्वएकलक्षऋषिभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

चौपाई

संभव जीवो के भव को हरते, पूर्वधरों को पास में रखते।
भौतिक शक्ति काम न आई, त्याग तपस्या मन को भाई।
संभव की शरणा में रहना, समता के भावों से सहना।
सत्य तथ्य और कथ्य यही है, शुभ जीवन का पथ्य यही है॥१५॥
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथस्य पंचाशदधिकद्विसहस्त्रएकशतपूर्वधरऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानी सबको ज्ञान सिखायें, भावो को भी यह पलटायें।
हे पवित्र शुभ ज्ञान की भाषा, ज्ञानी की सुन्दर परिभाषा॥
संभव की शरणा में रहना, समता के भावों से सहना।
सत्य तथ्य और कथ्य यही है, शुभ जीवन का पथ्य यही है॥१६॥
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथस्य एकलक्ष्यकोनत्रिंशत्सहस्त्रयशतशिक्षकऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूत भविष्य का ज्ञान करायें, अवधिज्ञानी मुनि कहायें।
ज्ञान का दीपक हाथ में लेते, सबके पथ उजियारा करते॥
संभव की शरणा में रहना, समता के भावों से सहना।
सत्य तथ्य और कथ्य यही है, शुभ जीवन का पथ्य यही है॥१७॥
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथस्य नवसहस्त्रषट्शतअवधिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपलब्धि केवल की पाई, केवल ज्ञान की ज्योति जगाई
चहुँदिश में उजियारा छाया, केवल पाने मैं भी आया॥
संभव की शरणा में रहना, समता के भावों से सहना।
सत्य तथ्य और कथ्य यही है, शुभ जीवन का पथ्य यही है॥१८॥
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथस्य पंचदशसहस्त्रकेवलिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरे विक्रिया परमारथ को, बढ़े चले वे मुक्ति पथ को।
नित आतम का रूप निहारे, चरणों में मिल जाये सहारे॥
संभव की शरणा में रहना, समता के भावों से सहना।
सत्य तथ्य और कथ्य यही है, शुभ जीवन का पथ्य यही है॥१९॥
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथस्य एकोनविंशतिसहस्त्रअष्टशतविक्रियाधारिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विपुलमति मनपर्यय ज्ञानी, निज आतम के बने थे ध्यानी।
मन में उपजी बात को जाने, अन्दर तक की वो पहचाने॥
संभव की शरणा में रहना, समता के भावों से सहना।
सत्य तथ्य और कथ्य यही है, शुभ जीवन का पथ्य यही है॥२०॥
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथस्य पंचाशदधिकद्वादशसहस्त्रएकशतविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरम भावना मन में धरते, वक्त आये तो वाद वे करते।
मानी का मरदन है कीना, सम्यक दर्शन पाये नवीना।।
संभव की शरणा में रहना, समता के भावों से सहना।
सत्य तथ्य और कथ्य यही है, शुभ जीवन का पथ्य यही है।।२१।।
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथस्य द्वादशसहस्त्रवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

दर्शन ज्ञान चारित्र का, होता जिनमें मेल।
निश्चय से परमात्मा, हरे करम के खेल।।
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथस्य सर्वद्वयलक्षऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

श्री अभिनंदन जी

चौपाई

परिवर्तन दृष्टि में कीना, सत्य दृष्टि पा ज्ञान नवीना।
मुनि पूर्वधर संग अभिनंदन, करते है हम उनका वंदन।।
तत्व प्रधान दृष्टि उपजाए, श्रद्धा निष्ठा मन में आये।
अभिनंदन का मिले सहारा, तो पायेंगें भंवर किनारा।।२२।।
ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथस्य द्विसहस्त्रपंचशतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
भावविभाव मिटे अघहारी, सम्यकज्ञानी दृष्टि प्यारी।
वह विपरीत में कभी न जाते, निज समभाव में निज को पाते।।
तत्वप्रधान दृष्टि उपजाए, श्रद्धा निष्ठा मन में आये।
अभिनंदन का मिले सहारा, तो पाएगें भंवर किनारा।।२३।।
ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथस्य द्विलक्षत्रिंशत्सहस्त्रपंचाशत्शिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।
सारे जाल स्वयं ही तोड़े, ज्ञान ''अवधि'' से नाता जोड़े।
पाप घटा कर पुण्य बढ़ाया, अभिनंदन को ध्यान में ध्याया।।

तत्व प्रधान दृष्टि उपजाए, श्रद्धा निष्ठा मन में आये।
अभिनंदन का मिले सहारा, तो पायेंगें भंवर किनारा॥२४॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथस्य नवसहस्त्रअष्टशत्अवधिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान शुद्धि भावो की शुद्धि, ज्ञान में हो गई "केवल" वृद्धि।
तुमने अन्तिम जन्म ये पाया, भटकाये न अब यह माया॥
तत्व प्रधान दृष्टि उपजाए, श्रद्धा निष्ठा मन में आये।
अभिनंदन का मिले सहारा, तो पायेंगें भंवर किनारा॥२५॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथस्य षोडशसहस्त्रकेवलज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक-एक सौपान चढ़ेंगे, कदम-कदम पर आप बढ़ेंगे।
ऋद्धि-सिद्धि शरण में आये, चरणों में आ शीश झुकाये॥
तत्व प्रधान दृष्टि उपजाए, श्रद्धा निष्ठा मन में आये।
अभिनंदन का मिले सहारा, तो पायेंगें भंवर किनारा॥२६॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथस्य एकोनविंशतिसहस्त्रविक्रियाधारिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जैसा होये विचार तुम्हारा, वैसा हो आचार तुम्हारा।
"विपुलमति" मन पर्यय जाने, जग में होती है सुख खाने॥
तत्व प्रधान दृष्टि उपजाए, श्रद्धा निष्ठा मन में आये।
अभिनंदन का मिले सहारा, तो पायेंगें भंवर किनारा॥२७॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथस्य एकविंशतिसहस्त्रषट्शतपंचाशत्विपुलमतिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अध्यातमवादि न किसी से हारे, कमजोरो को दिये सहारे।
मन की व्याधी को यह हरते, प्रश्नों के झट उत्तर देते॥
तत्व प्रधान दृष्टि उपजाए, श्रद्धा निष्ठा मन में आये।
अभिनंदन का मिले सहारा, तो पायेंगें भंवर किनारा॥२८॥

ॐ ह्रीं अभिनंदनाथस्य एकसहस्त्रवादिऋषिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं

अभिनंदन वंदन करूँ, धर्म मूर्ति आधार।
तीन लाख ऋषि संग में, नमन करे शत बार।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथस्य सर्वत्रयलक्षत्रऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शम्भू छंद

निज आत्म सुधा रस पी करके, पूरबधारी संग में रहते।
आतम की संपति पा करके, उपसर्गों को भी वे सहते।।
हे सुमतिनाथ सुमतीदाता, मेरी मति को सुमती कर दो।
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूँ, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।।२९।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथस्य द्विसहस्त्रचतु: शतपूर्वधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिक्षा ही वे सार्थक होती, जो दीक्षा को दिलवाती है।
जो ज्ञान मात्र कोरा होता, वह भव-भव मे ले जाती है।।
हे सुमतिनाथ सुमतिदाता, मेरी मति को सुमति कर दो।
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूँ, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।।३०।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथस्य द्विलक्षचतु:पंचाशत्सहस्त्रत्रयशतपंचाशत्शिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो अवध क्षेत्र ना वध होता, पर अवधीज्ञानी रहते है।
गुण का उत्कर्ष किया करते, कर्मों के बादल हरते है।।
हे सुमतिनाथ सुमतीदाता, मेरी मति को सुमति कर दो।
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूँ, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।।३१।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथस्य एकादशसहस्त्रअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भौतिकता यह ज्ञान प्रभू, आकुलता ही उपजाता है।
आकुलता से जो रहित रहे, वह केवल ज्ञान कहाता है।।
हे सुमतिनाथ सुमतीदाता, मेरी मति को सुमति कर दो।
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूँ, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।।३२।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथस्य त्रयोदशसहस्त्रकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब भावों के है रूप बहुत, तन विक्रीय रूप बनाना है।
पा सुमतिनाथ के आश्रय को, आतम का रूप का सुहाना है।।

हे सुमतिनाथ सुमतिदाता, मेरी मति को सुमति कर दो।
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूँ, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।।३३।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथस्य अष्टादशसहस्रचतु:शतविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन ने जग को भटकाया है, मन को वश करना कठिन कहा।
पर विपुलमति मन पर्यय प्रभु, मन से ही सबको देख रहा।।
हे सुमतिनाथ सुमतिदाता, मेरी मति को सुमति कर दो।
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूँ, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।।३४।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथस्य दशसहस्रचतु:शतविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्याज्ञानी का मान हरे, वो वादविवाद कुशल होते।
जिन धर्म को जीते वादो से, पर समता रस छक कर पीते।।
हे सुमतिनाथ सुमतीदाता, मेरी मति को सुमती कर दो।
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूँ, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।।३५।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथस्य दशसहस्रचतु:शतपंचाशत्वादिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य दोहा

अचल हिमालय से प्रभू, देते सबको ज्ञान
आध्यात्मिक आनन्द है, शत-शत करूँ प्रणाम

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथस्य सर्वत्रयलक्षविंशतिसहस्रऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतेय शांतिधारा दिव्य पुष्पांजलि:।

शम्भु छन्द

हे पदम प्रभू पूरबधारी, सबके सर छाया करते हो।
हम आस लगाए बैठे हैं, पर दूर हमे क्यों करते हों।।
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्ति पुर का, दोषो को मेरे सब हर दो।।३६।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य द्विसहस्त्रत्रिशतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

स्वर मुखरित करते शिक्षा दे, ज्ञानी ''शिक्षक'' बन जाते हैं।
ज्ञानामृत का रस पी पी के, आतम को पुष्ट बनाते हैं॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥३७॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य द्विलक्षएकोनसप्ततिसहस्रशिक्षकऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

स्वीकृत कर पथ को वे निश्चित, पद से विचलित कैसे होते।
''अवधी'' से घटना को समझें, वे सजग सभी पहले होते॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥३८॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य दशसहस्रअवधिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

बादल बिन सूरज जैसे हों, वैसे ही ''केवल ज्ञान'' हुआ।
वह कर्म अंधेरा हार गया, जैसे ही केवल ज्ञान हुआ॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥३९॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य द्वादशसहस्रकेवलज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

अनुभूति शान्ति सुरभित मन की, तप ध्यान लगाने से होती।
तन की विक्रिय तनमय कर दे, जो धर्म प्रभावन को करती॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥४०॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य षोडशसहस्रअष्टशतविक्रियाधारिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

कण-कण में समता भाव भरा, क्षण-क्षण में धयान लगा लीना।
वह विपुल मती ज्ञानी मुनिवर, समता की आस नहीं कीना॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥४१॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य दशसहस्रत्रयशविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

हे सुमतिनाथ सुमतिदाता, मेरी मति को सुमति कर दो।
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूँ, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।।३३।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथस्य अष्टादशसहस्रचतु:शतविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन ने जग को भटकाया है, मन को वश करना कठिन कहा।
पर विपुलमति मन पर्यय प्रभु, मन से ही सबको देख रहा।।
हे सुमतिनाथ सुमतिदाता, मेरी मति को सुमति कर दो।
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूँ, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।।३४।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथस्य दशसहस्रचतु:शतविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्याज्ञानी का मान हरे, वो वादविवाद कुशल होते।
जिन धर्म को जीते वादो से, पर समता रस छक कर पीते।।
हे सुमतिनाथ सुमतीदाता, मेरी मति को सुमती कर दो।
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूँ, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।।३५।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथस्य दशसहस्रचतु:शतपंचाशत्वादिऋषिभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं दोहा

अचल हिमालय से प्रभू, देते सबको ज्ञान
आध्यात्मिक आनन्द है, शत-शत करूँ प्रणाम

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथस्य सर्वत्रयलक्षविंशतिसहस्रऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतेय शांतिधारा दिव्य पुष्पांजलि:।

शम्भु छन्द

हे पदम प्रभू पूरबधारी, सबके सर छाया करते हो।
हम आस लगाए बैठे हैं, पर दूर हमे क्यों करते हों।।
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्ति पुर का, दोषो को मेरे सब हर दो।।३६।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य द्विसहस्रत्रिशतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

स्वर मुखरित करते शिक्षा दे, ज्ञानी ''शिक्षक'' बन जाते हैं।
ज्ञानामृत का रस पी पी के, आतम को पुष्ट बनाते हैं॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥३७॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य द्विलक्षएकोनसप्ततिसहस्रशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

स्वीकृत कर पथ को वे निश्चित, पद से विचलित कैसे होते।
''अवधी'' से घटना को समझें, वे सजग सभी पहले होते॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥३८॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य दशसहस्रअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

बादल बिन सूरज जैसे हों, वैसे ही ''केवल ज्ञान'' हुआ।
वह कर्म अंधेरा हार गया, जैसे ही केवल ज्ञान हुआ॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥३९॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य द्वादशसहस्रकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

अनुभूति शान्ति सुरभित मन की, तप ध्यान लगाने से होती।
तन की विक्रिय तनमय कर दे, जो धर्म प्रभावन को करती॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥४०॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य षोडशसहस्रअष्टशतविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

कण-कण में समता भाव भरा, क्षण-क्षण में धयान लगा लीना।
वह विपुल मती ज्ञानी मुनिवर, समता की आस नहीं कीना॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥४१॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य दशसहस्रत्रयशविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

पदम प्रभु जिन देव जी, हृदय कमल खिल जाय।
ऋषि दर्शन को नित्य करें, शत्-शत् शीश नवाय।

शम्भू छन्द

तप करते ही ऋद्धि आती, वचनों की शुद्धि हो जाती।
वादी मुनिवर वाद करे तो, चहुं ओर ख्याति हो जाती॥४२॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य नवसहस्रषट्शतवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्यं दोहा

पदमप्रभु जिन देव जी, हृदय कमल खिल जाय।
ऋषि दर्शन करे, शत्-शत् शीश नवाय॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभनाथस्य त्रयलक्षत्रिंशत्सहस्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

सुपार्श्वनाथ

शंभु छंद

मित्थ्या दृष्टी दर्शन पाकर, सम्यक दृष्टी हो जाता है।
हे नाथ सुपार्श्वनाथ प्रभु, श्रुत ज्ञानी वो बन जाता है॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूँ, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥४३॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथस्य द्विसहस्रत्रिंशत्पूर्वधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

गम्भीर ज्ञान को पाकर के, वे वाणी को गम्भीर करें।
शिक्षक शिष्यों को शिक्षा दे, अपने सम उनको वीर करें॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥४४॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथस्य द्विलक्षचतुश्चत्वारिंशत्सहस्रनवशतविंशतिशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

जैसे अग्नि में तप करके, सोना खुद को चमकाता है।
अवधी ज्ञानी तप तपते, निज ज्ञान का सूर्य उगाता है॥

सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥४५॥
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथस्य नवसहस्त्रअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

प्रतिबिम्बित होवे जग सारा, आने जाने का राग मिटे।
नर देव पशु दर्शन कर लें, तो उनका भी वैराग्य बढ़े॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥४६॥
ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथस्य एकादशसहस्त्रकेवलऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

मुनि खूब भयंकर जंगल में, मंगल करने को जाते हैं।
तप से विक्रिया को प्राप्त करें, ऋद्धि धारी बन जाते हैं॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥४७॥
ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथस्य दशसहस्त्रत्रिपंचाशत्शतविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

मन से मोही मन से ध्यानी, मन से ज्ञानी का ज्ञान बढ़ा।
मन की गहराई में जाकर, ध्यानी पर तप का रंग चढ़ा॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥४८॥
ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथस्य नवसहस्त्रएकशतपंचाशत्विपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

है हर मुश्किल का समाधान, हर प्रश्न का उत्तर देते हैं।
तीर्थंकर के अनुयाई हैं, कुछ नहीं किसी से लेते हैं॥
सम्यक दर्शन को प्राप्त करूं, ऐसी मेरी बुद्धि कर दो।
वरदान मिले मुक्तीपुर का, दोषों को मेरे सब हर दो॥४९॥
ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथस्य अष्टसहस्त्रषट्शतवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

समवशरण में राजते, प्रभू सुपार्श्वनाथ।
सम अवसर सबको मिले, तुम्हें नवाऊँ माथ॥
ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथस्य त्रयलक्षसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

चन्दा प्रभु

दोहा

चन्दा स्वयं आलोक से, देता नित्य प्रकाश।
पूर्व धरों के मध्य रह, खुद भी पाये उजास॥
ज्योतिर्मय है ज्ञान से, सम्यक दृष्टी देव।
स्वर्ग-नर्क को तज करूं, नित्य तुम्हारी सेव॥५०॥

ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभनाथस्य चतु:सहस्रपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

ज्ञानी इच्छा ना करे, इच्छा है अज्ञान।
देने की इच्छा जिन्हें, जग में पाते मान॥
ज्योतिर्मय है ज्ञान से, सम्यक दृष्टी देव।
स्वर्ग-नर्क को तज करूं, नित्य तुम्हारी सेव॥५१॥

ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभनाथस्य द्विलक्षदशसहस्रचतु:शतशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

करे साधना धर्म की, अवधि ज्ञान हि पाय।
भव-भव के संचित कर्म, क्षण भर में नशवाय॥
ज्योतिर्मय है ज्ञान से, सम्यक दृष्टी देव।
स्वर्ग-नर्क को तज करूं, नित्य तुम्हारी सेव॥५२॥

ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभनाथस्य द्विसहस्रअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

केवल ज्ञानी देव ही, देते सच्चा ज्ञान।
केवल मुझको भी मिले, दे दो ये वरदान॥
ज्योतिर्मय है ज्ञान से, सम्यक दृष्टी देव।
स्वर्ग-नर्क को तज करूं, नित्य तुम्हारी सेव॥५३।

ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभनाथस्य अष्टादशसहस्रकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

ऋद्धि विक्रिया पा गये, किये कर्म चकचूर।
भावों का पूजन करें, रहें कर्म से दूर॥
ज्योतिर्मय है ज्ञान से, सम्यक दृष्टी देव।
स्वर्ग-नर्क को तज करूं, नित्य तुम्हारी सेव॥५४।

ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभनाथस्य षट्शतविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

ज्ञानी आतम ज्ञान में, नित्य करें विश्राम।
विपुल मती तव चरण में, बारम्बार प्रणाम्।।
ज्योतिर्मय है ज्ञान से, सम्यक दृष्टी देव।
स्वर्ग-नर्क को तज करूं, नित्य तुम्हारी सेव।।५५।।

ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभनाथस्य अष्टसहस्त्रविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

भिन्न जगत के जीव हैं, भिन्न सभी का ज्ञान।
किन्तु सत्य सब एक है, सत्यरूप भगवान।।
ज्योतिर्मय है ज्ञान से, सम्यक दृष्टी देव।
स्वर्ग-नर्क को तज करूं, नित्य तुम्हारी सेव।।५६।।

ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभनाथास्य सप्तसहस्त्रवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

दिव्य ज्ञान की ज्योति में, सूझे सारा लोक।
उनको कुछ ना चाहिए, जिन्हें मिला आलोक।।

ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभनाथस्य द्विलक्षपंचाशतसहस्त्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

पूर्णार्घ्य

पुष्पदंत

श्रुत ज्ञानी श्रुत ज्ञान से, करते आतम ध्यान।
पुष्पदन्त भगवान के, चरणों में विश्राम।।
दृढ़ हो श्रद्धा तत्व मम, गुरुवर दो आशीष।
भक्ती नित तेरी करूं, तुझे नवाकर शीश।।५७।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथस्य एकसहस्त्रपंचशतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

ज्ञानी ज्ञान पवित्र है, कोई ना पावे पार।
शिक्षक बनकर बांटते, बहे ज्ञान की धार।।
दृढ़ हो श्रद्धा तत्व मम, गुरुवर दो आशीष।
भक्ती नित तेरी करूं, तुझे नवाकर शीश।।५८।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथस्य एकलक्षपंचपंचाशतसहस्त्रपंचशतशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

अवधि ज्ञान धारी गुरु, मुझको कुछ समझाए।
त्याग-तपस्या पथ पर चलें, शत्-शत् शीश नवाए॥
दृढ़ हो श्रद्धा तत्व मम, गुरुवर दो आशीष।
भक्ती नित तेरी करूं, तुझे नवाकर शीश॥५९॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथस्य चतुरशीतिशतअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

सर्वश्रेष्ठ जिन ज्ञान है, सब ज्ञानों का सार।
केवल ज्ञानी जिन प्रभु, कर दो नैया पार॥
दृढ़ हो श्रद्धा तत्व मम, गुरुवर दो आशीष।
भक्ती नित तेरी करूं, तुझे नवाकर शीश॥६०॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथस्य सप्तसहस्रपंचशतकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

करे विक्रिया देश में, और समय को जान।
धरमी की रक्षा करें, वो जिनवर भगवान॥
दृढ़ हो श्रद्धा तत्व मम, गुरुवर दो आशीष।
भक्ती नित तेरी करूं, तुझे नवाकर शीश॥६१॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथस्य त्रयोदशसहस्रविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

ज्ञानी गुरु जिसको मिले, उसके जागे भाग।
चरण-शरण में आये हैं, करके सब कुछ त्याग॥
दृढ़ हो श्रद्धा तत्व मम, गुरुवर दो आशीष।
भक्ती नित तेरी करूं, तुझे नवाकर शीश॥६२॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथस्य सप्तसहस्रपंचशतविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

समझें हैं समझायेंगे, बात कुशल मुनिराज।
शुभ वाणी को ज्ञान दे, नमता सकल समाज॥
दृढ़ हो श्रद्धा तत्व मम, गुरुवर दो आशीष।
भक्ती नित तेरी करूं, तुझे नवांकर शीश॥६३॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथस्य षट्सहस्रषट्शतवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

पृथ्वी और आकाश के, पुष्पदन्त आधार।
शरण सभी को राखते, यही ज्ञान का सार॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथस्य द्विलक्षसर्वऋषिभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

शीतलनाथ भगवान

भुजंग प्रयात (नरेन्द्रं फणीन्द्रं)

बने बारह कोठे, प्रभु की सभा में।
जगन्नाथ की रश्मियां, हैं प्रभामय॥
प्रभु शीतलेश्वर जी, शीतलता धारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥६४॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथस्य चर्तुदशशतपूर्वधरऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

प्रभु किरण जिन की, जग मांही फैली।
पढ़ावें गुरुजन ही, उत्कृष्ट शैली॥
प्रभु शीतलेश्वर जी, शीतलता धारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥६५॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथस्य एकोनष्टष्टिसहस्रद्विशतशिक्षकऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

उन्हें आत्मा की, जो आवाज आई।
अवधि ज्ञान धारी ने, दृष्टि जमाई॥
प्रभु शीतलेश्वर जी, शीतलता धारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥६६॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथस्य सप्तसहस्रद्विशतअवधिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

प्रभु की शरण में, जो कैवल्य पावे।
जगत में वही, भाग्यशाली कहावे॥
प्रभु शीतलेश्वर जी, शीतलता धारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥६७॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथस्य सप्तसहस्रकेवलिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

करी विक्रिया रूप, सुन्दर बनाते।
नहीं क्रोध, मद नाहिं, श्रद्धा बढ़ाते॥
प्रभु शीतलेश्वर जी, शीतलता धारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥६८॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथस्य द्वादशसहस्रविक्रियाधारिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

विपुल ज्ञानधारी, जो सूक्ष्म को जानें।
स्वयं ज्ञान देखें, किसी की न मानें॥
प्रभु शीतलेश्वर जी, शीतलता धारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥६९॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथस्य सप्तसहस्रपंचशतविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

जिन धर्म रक्षा, के हित वाद करते।
समाधान देकर, के अज्ञान हरते॥
प्रभु शीतलेश्वर जी, शीतलता धारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥७०॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथस्य पंचसहस्रसप्तशतवादिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

शक्तिशाली जीव ही, आतम ध्यान लगाय।
शीतल से छाया मिले, शत्-शत् शीश नवाय।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथस्य एकलक्षसर्वऋषिभ्यः पूर्णार्घ्यं....।
शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

श्रेयांसनाथ भगवान

भुजंग प्रयात

मुनी पूर्वधर जो, भी होते सभा में।
सभी देव नमते, सभा की प्रभा में॥
धरम ज्ञान देकर, सभी को उबारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥७१॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथस्य एकसहस्रत्रयशतपूर्वधरऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

श्रेयांस में अंश, शिक्षक को दीना।
भरा ज्ञान सागर, दी ज्योति नवीना॥
धरम ज्ञान देकर, सभी को उबारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥७२॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथस्य अष्टचत्वारिंशद्सहस्रद्विशतशिक्षकऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

गुरु शिष्य का प्रेम, उत्तम दिखाया।
अवधि ज्ञानी होकर, भी चरणों बिठाया॥
धरम ज्ञान देकर, सभी को उबारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥७३॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथस्य षट्सहस्रअवधिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

केवल का बल ही, जगत से छुड़ावे।
केवल हुआ तो ये, मुक्ति बुलावे॥
धरम ज्ञान देकर, सभी को उबारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥७४॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथस्य षट्सहस्रपंचशतकेवलज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

कहे विक्रिया ने, क्रिया खूब पाई।
परन्तु प्रभो पास, ना काम आई॥
धरम ज्ञान देकर, सभी को उबारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥७५॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथस्य एकादशसहस्रविक्रियाधारिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

प्रभु के प्रति प्रेम, अप्रण दिखाया।
विपुल ज्ञान धारी, ने आतम को पाया॥
धरम ज्ञान देकर, सभी को उबारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें॥७६॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथस्य षट्सहस्रविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

बिना धर्म के कोई, आधार नाहीं।
मुनिवर से वादी, नहीं ज्ञानी माहीं।।
धरम ज्ञान देकर, सभी को उबारें।
हमारे सभी कष्ट, आकार निवारें।।७७।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथस्य पंचसहस्त्रवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

सिद्धात्मा हो सिद्ध जिन, कार्य सिद्ध हो जायें।
है प्रसिद्ध चरणां तेरे, शत्-शत् शीश नवायें।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथस्य चतुशीतिसहस्त्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

वासुपूज्य भगवान

भुजंग प्रयात (नरेन्द्रं फणीन्द्रं)

पूरब दिशा सम, लगे पूर्व धारी।
संग में प्रभु की भी महिमा है न्यारी।।७८।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यनाथस्य एकसहस्त्रद्विशतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

शिक्षक से शिक्षा, सभी जीव पाते।
निजातम में विद्या की ज्योति जलाते।।७९।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यनाथस्य एकोनचत्वारिंशतसहस्त्रद्विशतशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

अवधि की अवधि ही, पुण्यों से पाई।
अवधि ने सबकी ही लीला बताई।।८०।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यनाथस्य पंचसहस्त्रचतु:शतअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

अमर की ज्योति, जग को प्रकाशे।
लिया ध्यान निज का, निजातम विभासे।।८१।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यनाथस्य षट्सहस्त्रकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

करेंगे तपस्या, मुनिराज वन में।
आयेगी ऋद्धि ही, उनके ही तन में॥८२॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यनाथस्य दशसहस्रविक्रियाधारिऋषिभ्यः अर्घ्य....।

निर्बल को केवल कभी नाहीं मिलता।
करते तपस्या तो, केवल भी खिलता॥८३॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यनाथस्य षट्सहस्रविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्य....।

वचनों में जादू, मुनि जी के आया।
करे वाद कितना, सभी को हराया॥८४॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यनाथस्य द्विचत्वारिंशत्शतवादिऋषिभ्यः अर्घ्य....।

दोहा

वासुपूज्य जिनराज जी, बंदो मन वच काय।
कर्म बेड़ियां काट दो, शत्-शत् शीश नवाय॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यनाथस्य द्वासप्ततिसहस्रसर्वऋषिभ्यः पूर्णार्घ्य....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

विमलनाथ भगवान

भुजंग प्रयात (नरेन्द्रं फणीन्द्रं)

वहाँ पूर्वधर पूर्व, जाकर के बैठें।
विमलनाथ शरणा को, भक्ती से देखें॥८५॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य एकादशशतपूर्वधरऋषिभ्यः अर्घ्य....।

नहीं शास्त्र लेकर, करते पढ़ाई।
प्रभु ज्ञान से सीधे ज्योती जगाई॥८६॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य अष्टत्रिंशत्सहस्रपंचशतऋषिभ्यः अर्घ्य....।

सोये हुए को, सदा तुम जगाते।
अवधि ज्ञान से, सबके बन्धन छुड़ाते॥८७॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य अष्टचत्वारिंशत्शतअवधिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्य....।

विमलनाथ कैवल्य, को प्राप्त कीना।
कई केवली को, बना आप्त दीना॥८८॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य पंचसहस्रपंचशतकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

परस्पर सभी से, है अनुराग करते।
करी विक्रिया, धरम रक्षा को करते॥८९॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य नवसहस्रविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

आतम को करमों का, बन्धन सताये।
विपुल ज्ञान धारी, करम को भगाये॥९०॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य पंचसहस्रपंचशतविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

मिथ्यात्व का रंग, जहाँ आप देखें।
करते हैं वाद जिन धर्म, दोनों के लेखे॥९१॥

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य षट्त्रिंशत्शतवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

मूल्य नहीं है व्यक्ति का, मूल्य गुणों का जान।
और नहीं कुछ चाहिए, मिलें विमल भगवान।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथस्य अष्टषष्टिसहस्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

श्री अनंतनाथ जी

भुजंग प्रयात

नास्तिक को आस्तिक, प्रभु ने बनाया।
बनें पूर्व वे ही, जो शरणा में आया॥
करूँ तत्व चरचा, अनन्ता प्रभु की।
धरूँ ध्यान मैं भी, छवि उस विभु की॥९२॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथनाथस्य एकसहस्रपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

सभी प्रश्न उत्तर को, बुद्धि से देते।
वही देते हैं जो, प्रभुवर से लेते।
करूँ तत्व चरचा, अनन्ता प्रभु की।
धरूँ ध्यान मैं भी, छवि उस विभु की॥९३॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथनाथस्य एकोनचत्वारिंशत्सहस्रपंचशतशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

आतम से अपने, अवधि ज्ञान पाया।
अवधि ज्ञान पाकर के, मुक्ति को धाया॥
करूँ तत्व चरचा, अनन्ता प्रभु की।
धरूँ ध्यान मैं भी, छवि उस विभु की॥९४॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथनाथस्य त्रिचत्वारिंशित्शतअवधिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

नहीं ज्ञान खंडित, अखंडित बताया।
जो केवल्य का रूप, बनकर के आया॥
करूँ तत्व चरचा, अनन्ता प्रभु की।
धरूँ ध्यान मैं भी, छवि उस विभु की॥९५॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथनाथस्य पंचसहस्रकेवलज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

वपु में स्वाभाविक है, परिवर्तन होता।
पर विक्रिया से, जो पूरब को खोता॥
करूँ तत्व चरचा, अनन्ता प्रभु की।
धरूँ ध्यान मैं भी, छवि उस विभु की॥९६॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथनाथस्य अष्टसहस्रविक्रियाधारिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

आवेश हेतु, जगह ही नहीं है।
विपुल ज्ञान शांति, ही तन मन में आयी॥
करूँ तत्व चरचा, अनन्ता प्रभु की।
धरूँ ध्यान मैं भी, छवि उस विभु की॥९७॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथनाथस्य पंचसहस्रविपुलमतिज्ञानधारिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

होकर प्रफुल्लित धरम को बताते।
धरम को विवादों से, उन्नत बनाते॥
करूँ तत्व चरचा, अनन्ता प्रभु की।
धरूँ ध्यान मैं भी, छवि उस विभु की॥९८॥

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथनाथस्य द्वात्रिंशत्शतवादिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

अनन्तनाथ जिन राज का, ज्ञान बड़ा गम्भीर।
भव अनन्त में घूँमते, हरो हमारी पीर।

ॐ ह्रीं श्रीअनंतनाथनाथस्य षट्षष्टिसहस्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

श्री धर्मनाथ जी

चाल छन्द

धर्मी ने धर्म सिखाया, अरू पूर्व धरों बतलाया।
चर्चा तत्वों की करते, काले करमों को हरते॥९९॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथस्य नवशतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

सत-पथ में दृष्टि जमाई, तब ज्ञान की ज्याति जगाई।
मिथ्या मत को है नाशा, शिक्षक की सुन्दर भाषा॥१००॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथस्य चत्वारिंशत्सहस्रसप्तशतशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

जो अवधि ज्ञान के धारी, प्रभु चरणों में अविकारी।
पर ज्ञान की सीमा नाहीं, ज्ञानी आतम के माहीं॥१०१॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथस्य षट्त्रिशंत्शतअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

तप त्याग ने बल दिखलाया, फिर केवल को उपजाया।
कैवल्य की महिमा न्यारी, केवल को आतम प्यारी॥१०२॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथस्य चतु:सहस्रपंचशतकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

आध्यात्मिक रूप बनावे, विक्रिया यही करवावे।
आतम का शोधन होवे, निज आतम को ही पावे॥१०३॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथस्य सप्तसहस्रविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

प्रत्येक सूक्ष्म परमाणु, जानेगा कण-कण का अणु।
यह विपुल मति मन जाने, बाकी की बातें न माने॥१०४॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथस्य चतु:सहस्रपंचशतविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

चारित्र को धारण कीना, शक्तिमय भाव नवीना।
तुम वाद कुशल होते हो, नहीं समय कभी खोते हो॥१०५॥

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथस्य द्विसहस्रअष्टशतवादिऋषिभ्य: अर्घ्य....।

दोहा

धर्मनाथ जिन राज जी, धर्म का दे दो ज्ञान।
आत्म धर्म मैं नित चखूँ, बारम्बार प्रणाम।

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथस्य चतु:षटिसहस्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्य....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

श्री शांतिनाथ जी

चाल छन्द

शांतिनाथ जी शांति बढ़ाए, पूर्वधरों को पास बिठाए।
प्रभु जी क्यों हमको तुम छोड़ा, क्यों मुझसे है नाता तोड़ा॥१०६॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथस्य अष्टशतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्य....।

आतम दृष्टी आतम पुष्टी, आतम ज्ञान की होगी वृष्टी।
शिक्षक ज्ञानी ज्ञान जमाया, ज्ञान में सच्चा आनन्द आया॥१०७॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथस्य एकचत्वारिंशत्सहस्रअष्टशतशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्य....।

आशा रोके सेवर आया, जिसे मिली शांती की छाया।
अवधि ज्ञान विद्यायें पायी, आतम की नित शक्ती बढ़ाई॥१०८॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथस्य त्रयसहस्रअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्य....।

मोहराज से युद्ध है कीना, केवल पाया ज्ञान नवीना।
तीन लोक झलके दर्पण सम, नर-नारी सब झुके शीश नम॥१०९॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथस्य चतु:सहस्रकेवलिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्य....।

तीन रत्न से शुद्धि आयी, शुद्धि ने विक्रिया बुलाई।
प्रतिभा बुद्धि ज्ञान बढ़ाया, शान्तिनाथ की मिली थी छाया॥११०॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथस्य षट्सहस्रविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्य....।

रात्रि होती हुआ सवेरा, विपुल ज्ञान का हुआ बसेरा।
विपुल ज्ञान को शीश झुकाये, हम सब प्रभु की शरणा आये॥१११॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथस्य चतु:सहस्त्रविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

वाद किया औ ख्याति पायी, था अभिमान न किंचित भाई।
बस मुक्ती की उन्हें चाह है, चलते हैं वे उसी राह हैं॥११२॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथस्य चतुर्विंशतिशतवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

सब ऋषियों के बीच में, शांतिनाथ भगवान।
चंदा सम सुंदर लगें, बारम्बार प्रणाम।

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथस्य द्विषष्टिसहस्त्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

श्री कुंथुनाथ जी

चौपाई

सम्यक दर्शन वृक्ष लगाया, ज्ञान का फल उसमें ही पाया।
कुंथुनाथ जी रक्षा करना, हमें भी पूर्वधरों सम तरना॥११३॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथस्य सप्तशतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

शिक्षक शिष्यों के रक्षक हैं, दुष्टकर्म आतम भक्षक हैं।
दुष्टों से प्रभु दूर ही रखना, हमें स्वाद आतम का चखना॥११४॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथस्य त्रिचत्वारिंशत्सहस्त्रएकशतपंचाशत्शिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

पतझर आया पत्ते जायें, वृक्ष सभी सूने हो जायें।
कुंथुनाथ का वृक्ष है सुंदर, अवधि ज्ञान को पायें मुनिवर॥११५॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथस्य पंचविंशतिशतअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

नई कोपलें फूटें जैसे, मिथ्या सम्यक टूटे वैसे।
सम्यक तो आगे बढ़ जाये, मिथ्या ज्ञान पड़ा सढ़ जाये॥११६॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथस्य त्रयसहस्त्रद्विशतकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

ज्यार्तिमय यह लोक है सारा, आयी विक्रिया मिला सहारा।
ध्यान है रखना चरण कमल का, आतम निर्मल होवे हल्का॥११७॥
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथस्य पंचसहस्त्रएकशतविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।
विपुल ज्ञान का पुल बन जावे, सागर पार हमें पहुंचावे।
ज्ञानी हो तुम मेरे मुनिवर, पार करो मुझको भी गुरुवर॥११८॥
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथस्य त्रयस्त्रिंशत्शतपंचाशत्विपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।
जैन धर्म की करे बुराई, वादी ने तब शक्ति लगाई।
वाद-विवाद कुशल मुनिवर जी, शीश झुकायें हम जिनवर जी॥११९॥
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथस्य द्विसहस्त्रवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

कुंथुनाथ जिनराज जी, सुन्दर सुमुख सुजान।
ऋषिवर तुमको ही लखें, बारम्बार प्रणाम।
ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथस्य षष्टिसहस्त्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

श्री अरहनाथ जी

तर्ज-सोलह कारण

पूर्वधरों के बीच सुहाये, अरहनाथ सबके मन भाये।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१२०॥
ॐ ह्रीं श्री अरनाथस्य दशोत्तरषट्शतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।
शिक्षक हैं उनतिस हजार, मिलता उन्हें प्रभु का प्यार।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१२१॥
ॐ ह्रीं श्री अरनाथस्य पंचत्रिंशत्सहस्त्रअष्टशतपंचत्रिंशत्शिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।
अवधि ज्ञानी वध से दूर, कर्म किये तुमने चकचूर।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१२२॥
ॐ ह्रीं श्री अरनाथस्य अष्टाविंशतिशतअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।
केवल संग केवली आये, शत्-शत् उनको शीश झुकाये।

जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१२३॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथस्य अष्टाविंशतिशतकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

परिषह सह कर सुख ही पाया, आई विक्रिया धन्य बनाया।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१२४॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथस्य त्रिचत्वारिंशत्शतविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

विपुल मति ज्ञानी महाराज, ज्ञान का तुमने पहना ताज।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१२५॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथस्य द्विसहस्रपंचपंचाशत्विपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

वादी मुनिवर का अस्तित्व, ऊँचा उनका है व्यक्तित्व।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१२६॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथस्य एकसहस्रषट्शतवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

अरनाथ जिनदेव का, रूप जगत में श्रेष्ठ।
ऋषिगण पूजित को नमो, सारे जग के ईष्ट।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथस्य पंचाशत्सहस्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

श्री मल्लिनाथ जी

पूजा-सोलह कारण

मल्लिनाथ मल कर्म नशाए, पूर्वधरों को पास बिठाए।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१२७॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य पंचशतपंचाशत्पूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

ज्ञान की रक्षा शिक्षक करते, ज्ञान की झोली पल में भरते।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१२८॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य एकोनत्रिंशत्सहस्रशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

अवधि ज्ञान का भजन कराया। प्रभु की शरण स्वयं ही पाया।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१२९॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य द्विसहस्रद्विशतअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

घाती चारों कर्म नशाय, केवल ज्ञान तुरत उपजाय।

जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१३०॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य द्विसहस्त्रद्विशतकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।
पंच महाव्रत गुप्ती धरता, समता से कर्मों को हरता।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१३१॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य एकोनत्रिंशत्शतविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।
विपुल की ज्ञान की राशि पाय, सबके मन की बात बताय।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१३२॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य एकसहस्त्रसप्तशतपंचाशत्विपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

संयम रखकर बन गये ज्ञानी, लेकर वाद हुए अज्ञानी।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१३३॥
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य चतुर्दशशतवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

मल्लिनाथ जिन राज जी, मेटो करम कलेश।
ऋषियों के जिनवर तुम्हीं, पाऊँ शांति जिनेश।
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य चत्वारिंशत्सहस्त्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।
शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

मुनिसुव्रतनाथ जी

पूजा-सोलह कारण

सम्यक पथ दर्शित हो जाय, पूर्वधरों की संगत पाये।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१३४॥
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथस्य पंचशतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।
साधक को सब बाधक बनते, ज्ञानी बाधाओं को हनते।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१३५॥
ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथस्य एकविंशतिसहस्त्रशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।
अवधि ज्ञान से जोड़ा नाता, प्रभु चरणों में मिल गइ साता।

जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१३६॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथस्य अष्टादशशतअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

केवल ज्ञान सदा सुखदायी, सत पथ-जन की करे सहाई।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१३७॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथस्य अष्टादशशतकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

आयी विक्रिया क्रिया पालने, ज्ञान के झूले लगे झूलने।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१३८॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथस्य द्वाविंशतिशतविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

मति विपुल थी उनके पासा, हमको भी उस मति की आशा।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१३९॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथस्य एकसहस्रपंचशतविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

मिथ्या अर्थ कभी न करते, सम्यक श्रद्धा पूरी करते।
जो भी प्रभु की शरण में आयें, शरण छोड़ कहिं और न जाये॥१४०॥

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथस्य द्वादशशतवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

मुनिसुव्रत सुव्रत लिये, व्रत का किया विधान।
व्रत मेरे भी पूर्ण हों, बारम्बार प्रणाम।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथस्य त्रिंशत्‌सहस्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

श्री नमिनाथ जी

शेर चाल (हे दीनबन्धु)

ये आत्मा भव बन्धनों, बांध रही है।
ये चरण नमिनाथ जी को, चाह रही है॥
सम्यक्त्व ज्ञान में, चरित्र शुद्ध चाहिए।
चरणों में उनके ध्यान नित पवित्र चाहिए॥१४१॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य चतु:शतपंचाशत्‌पूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

तप त्याग तपस्या में, सदा लीन जो रहे।

संसार के कष्टों को, कभी जीव ना सहे।
सम्यक्त्व ज्ञान में, चरित्र शुद्ध चाहिए।
चरणों में उनके ध्यान नित पवित्र चाहिए॥१४२॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य द्वादशसहस्रषट्शतशिक्षकऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

शुभ ज्ञान अवधि धारी, में पास में रहे।
दर्शन से नहीं तृप्ति तो, विश्वास में रहे।
सम्यक्त्व ज्ञान में, चरित्र शुद्ध चाहिए।
चरणों में उनके ध्यान नित पवित्र चाहिए॥१४३॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य षोडशशतअवधिज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

हर जीव का हितकारी, ये प्रत्यक्ष दर्श हैं।
सुखकारी ज्ञान पाके, सभी पाये हर्ष हैं।
सम्यक्त्व ज्ञान में, चरित्र शुद्ध चाहिए।
चरणों में उनके ध्यान नित पवित्र चाहिए॥१४४॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य षोडशशतकेवलज्ञानिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

हे विक्रिया के धारी, तुम्हें नमस्कार है।
हे श्रेष्ठ ज्ञान धारी, तुम्हें नमस्कार है।
सम्यक्त्व ज्ञान में, चरित्र शुद्ध चाहिए।
चरणों में उनके ध्यान नित पवित्र चाहिए॥१४५॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य पंचदशशतविक्रियाधारिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

ये राग भाव जीव को, अपना बना रहा।
हर के मुदा उसी को, पाप में फंसा रहा है।
सम्यक्त्व ज्ञान में, चरित्र शुद्ध चाहिए।
चरणों में उनके ध्यान नित पवित्र चाहिए॥१४६॥

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य द्वादशशतपंचाशत्विपुलमतिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

वादी को कहीं कोई भी, प्रतिवादी जो मिले।
शास्त्रार्थ में हराके, उसका ज्ञान भी खिले।

सम्यक्त्व ज्ञान में, चरित्र शुद्ध चाहिए।
चरणों में उनके ध्यान नित पवित्र चाहिए।।१४७।।

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य एकसहस्रवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

नमन करूं तव चरण में, नमिनाथ जिनराय।
जिन गुण सम्पत्ति मिले, बारम्बार प्रणाम।

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथस्य विंशतिसहस्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

श्री नेमिनाथ जी

छंद-शेर चाल: (हे दीनबन्धु)

श्री नेमीनाथ शरण आके रहे, समोशरण में।
संग पूर्वधर मुनि हैं, वहां प्रभु चरण में।
हम ज्ञान राशि पायें, तेरी अर्चना करें।
सम्पूर्ण सौख्य प्राप्त हों, ये अर्घ्य हम धरें।।१४८।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथस्य चतु:शतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

परिपाक जो कर्मों का हो, मति भी नष्ट हो
देते रहे शिक्षा को शिक्षक, तो ना कष्ट हो।।१४९।। हम...

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथस्य एकादशसहस्रअष्टशतशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

मुनिराज ने निज ज्ञान से, जब ध्यान लगाया।
तप त्याग साधना के दम, से अविध को पाया।।१५०।। हम...

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथस्य एकसहस्रपंचशतअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

हो आप केवली प्रभु, केवल भी साथ है।
पीछे प्रभु के शिष्य हैं, प्रभु भी साथ है।।१५१।। हम...

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथस्य एकसहस्रपंचशतकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

आगम में भरे तत्व के, अर्थों को भी जाना।
पाकर के विक्रिया चरित्र साथ निभाना।।१५२।। हम...

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथस्य एकादशशतविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

श्री नेमिनाथ ने ही, ज्ञान दीप जलाया।
विपुल मति ने मुक्ति, का संसार सजाया॥१५३॥ हम...

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथस्य नवशतविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं.....।

सद्ज्ञान भरे शास्त्र, कोई भी नहीं पढ़ता।
ज्ञानी मुनि ही वाद से, आते हैं कुशलता॥१५४॥ हम...

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथस्य अष्टशतवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

राजुल तज दीक्षा धरी, ऋषिवर शिष्य बनाय।
'स्वस्ति' भी तैयार है, शत्-शत् शीश नवाय।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथस्य अष्टादशसहस्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

श्री पार्श्वनाथ जी

छंद-शेर चाल (हे दीनबन्धु)

उपसर्ग हुआ देव ने, पत्थर हैं गिराये।
तुम ध्यान में गहरे गये, शुभ ज्ञान को पाये॥
हे पार्श्व प्रभु रक्षा करो, संकट से घिरा हूं।
चारों गति में घूंम अब, चरणों में पड़ा हूं॥१५५॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथस्य त्रयशतपंचाशत्पूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

देकर के क्षमा दान प्रभु, अमर हो गये।
शिक्षक मुनि के साथ में, वे अधर हो गये॥
हे पार्श्व प्रभु रक्षा करो, संकट से घिरा हूं।
चारों गति में घूंम अब, चरणों में पड़ा हूं॥१५६॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथस्य दशसहस्रनवशतशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

मुनिराज अवधि ज्ञान के, धारक भी थे हुए।
सौभाग्यशाली वे हुए, पारस चरण छुए॥

हे पार्श्व प्रभु रक्षा करो, संकट से घिरा हूं।
चारों गति में घूंम अब, चरणों में पड़ा हूं।।१५७।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथस्य चतुर्दशशतअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

शुभ ज्ञान ज्योति आपने, अन्तर में जलाई।
वे केवली भी मिल गये, शिष्यों की बड़ाई।।
हे पार्श्व प्रभु रक्षा करो, संकट से घिरा हूं।
चारों गति में घूंम अब, चरणों में पड़ा हूं।।१५८।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथस्य एकसहस्त्रकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

शुभ विक्रिया आयी तो, भव्य द्वार खुल गये।
समता के महा ज्ञानी के, भी दरस मिल गये।।
हे पार्श्व प्रभु रक्षा करो, संकट से घिरा हूं।
चारों गति में घूंम अब, चरणों में पड़ा हूं।।१५९।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथस्य एकसहस्त्रविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

प्रतिकूलताओं ने प्रभु, है तुमको तपाया।
पाया विपुल को और, गुरु चरण में आया।।
हे पार्श्व प्रभु रक्षा करो, संकट से घिरा हूं।
चारों गति में घूंम अब, चरणों में पड़ा हूं।।१६०।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथस्य सप्तशतपंचाशत्विपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

होती है कलह जीव में, औ वाद भी होता है।
पर आप शांतिदूत, धर्म वाद ही होता।।
हे पार्श्व प्रभु रक्षा करो, संकट से घिरा हूं।
चारों गति में घूंम अब, चरणों में पड़ा हूं।।१६१।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथस्य षट्शतवादिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

दोहा

ज्ञान सूर्य सम आप हैं, पार्श्वनाथ भगवान।
उजियारा आतम मिले, शत्-शत् बार प्रणाम।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथस्य षोडशसहस्त्रसर्वऋषिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

महावीर भगवान

छंद-शेर चाल: (हे दीनबन्धु)

हे वर्धमान बड़े मान, ज्ञान भी बढ़े।
औ पूर्वधरों का है संग, ध्यान भी बढ़े॥
अंतिम में प्रभु जीव को, उपदेश दे दिया।
हम प्राणी भटकते हैं, ज्ञान तेरा ले लिया॥१६२॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरस्वामिन: त्रयशतपूर्वधरऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

अज्ञानी ज्ञानी का है ज्ञान, पास में लहे।
शिक्षकों की वाणी में, रस ज्ञान का बहे॥१६३॥
अंतिम में प्रभु ....

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरस्वामिन: नवसहस्रनवशतशिक्षकऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

करुणा हृदय में धारके, जिन धर्म धरा है।
ज्ञानी अवधि को धारके, निज कर्म करा है॥१६४॥
अंतिम में प्रभु ....

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरस्वामिन: त्रयोदशशतअवधिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

केवल लगा के घर में, दूर दर्श हैं करते।
औ वास्तविक केवल का, कभी ध्यान ना करते॥१६५॥
अंतिम में प्रभु ....

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरस्वामिन: सप्तशतकेवलज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

जो शास्त्र में लिखा है वो, चारित्र में होवे।
वे विक्रिया धारी मुनि, निज कर्म को खोवे॥१६६॥
अंतिम में प्रभु ....

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरस्वामिन: नवशतविक्रियाधारिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

करके विरक्त ध्यान में, जो भी रमा करते।
वो ज्ञान विपुलधारी, चरण में रहा करते॥१६७॥
अंतिम में प्रभु ....

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरस्वामिन: पंचशतविपुलमतिज्ञानिऋषिभ्य: अर्घ्यं....।

साकार हो सपना सभी, जिन धर्म को ध्यावें।
वे वाद मुनि सारे जग में, ख्याति कमावें॥१६८॥
अंतिम में प्रभु ....

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरस्वामिनः चतुःशतवादिऋषिभ्यः अर्घ्यं....।

दोहा

महावीर के संग में, ऋषियों का साथ।
हमें शरण दें हे प्रभु, तुम्हें नवाऊँ माथ।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरस्वामिनः चतुःर्दशसहस्रसर्वऋषिभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

पूर्णार्घ्य

तीर्थंकर देव की समवशरण, शुभ सुंदर रचना होती हैं।
उसमें ऋषि-मुनि यति यूं रहते, ज्योति सीप में रहते मोती हैं॥
अर्हंत हनन कर कर्मों का, निज केवल ज्ञान जगाया है।
परमानन्द पाकर के 'स्वस्ति' चरण में शीश झुकाया है॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितब्राह्मीप्रमुखपंचाशल्लक्षषट्पंचाशात्सहस्रद्वयशतपंचाशत्आर्यिकाचरणेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

जाप्य-ॐ ह्रीं समवसरणपद्मसूर्यवृषभादिवर्द्धमानान्तेभ्यो नमः।

जयमाला

(त्रिभंगी छन्द)

संसार है मेला, जीव अकेला, फिर भी मोह बढ़ाता है।
कर्मों का रेला, दुःख है झेला, कर्मों का पाप सताता है।
तीर्थंकर ध्यावें, पूज रचावें, पाप कर्म सब भाग गये।
चरणों में आवे, शीश झुकावे, भक्ति भाग सब जाग गये॥

चौपाई

चौबीस जिन राज की शरणा, जो आया भव सागर तरना।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥१॥

संगत पुण्य उदय से मिलती है, पुण्य उदय की कलियां खिलती।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥२॥

पुण्य उदय तीर्थंकर दर्शन, तन, मन से जीवन है अर्पण।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥३॥

ज्ञान का सारा चमत्कार है, ज्ञानी को मम नमस्कार है।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥४॥

नास्तिक भी आस्तिक बन जाये, पापी स्वर्ग मोक्ष को पाये।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥५॥

अंग पूर्व औ अवधि ज्ञानी, विपुल मति मनः पर्यय ध्यानी।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥६॥

ज्ञान सर्व ऋद्धि को देता, ज्ञानी सिर्फ ज्ञान ही लेता।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥७॥

ज्ञानी तपश्चरण को करता, ज्ञान ही सारे परिषह हरता।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥८॥

उजियाला जग में फैलाये, बिना ज्ञान कुछ समझ ना आये।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥९॥

सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञानी, तत्व खोज बनता विज्ञानी।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥१०॥

संयम मय ज्ञानी रहता है, ज्ञानी ही त्यागी बनता है।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥११॥

ज्ञान की गंगा जहाँ बहेगी, श्रद्धा भक्ति वहाँ रहेगी।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥१२॥

ज्ञानी आतम दर्शन करता, ज्ञानधार कर्मों को हरता।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥१३॥

मिथ्या ज्ञान जगत भटकाये, सम्यक वाणी समझ ना आये।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥१४॥

मानव जीवन का मंथन है, ज्ञान की धारा ही ग्रंथन है।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥१५॥

तत्व ज्ञान का जीवन प्यारा, भेद ज्ञान दिखता है न्यारा।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥१६॥

ज्ञानी से सब निर्मित कीना, ज्ञानी ने सब अर्पित कीना।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥१७॥

अनुशीलन परिशीलन कीना, चिन्तन से सुख पाय नवीना।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥१८॥

सिद्ध करे अध्यात्म साधना, ज्ञानी भक्ति हित अराधना।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥१९॥

ज्ञानामृत जो भी चख लेता, आत्म तत्व अंदर रख लेता।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥२०॥

ज्ञान के द्वारा ज्ञान को जाने, चेतन ज्ञान सदा पहचाने।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥२१॥

आत्मज्ञान स्वरूपी जानो, अपने आत्म को पहचाने।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥२२॥

प्रभुवर हमको ज्ञानी करना, ज्ञानावर्णी कर्म को हरना।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥२३॥

ज्ञानामृत अंदर बरसा दो, आतम को मेरे हर्षा दो।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥२४॥

प्रभुवर ज्ञान जगत भी पाये, पाप त्याग मुक्ती को जाये।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥२५॥

'स्वस्ति' की ना कोई आशा, मुक्तिपुरी में होवे वासा।
ऋषि, मुनि, यति सब शरणा आये, शिष्य बना दीक्षा को पाये॥२६॥

दोहा

गुण-गण मंडित जिन प्रभु, ज्ञान है परम विशाल।
शरणा अपनी लीजिए, मुझे बनाओ लाल।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितसर्वार्यिकाचरणेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

आदि से वीरा प्रभु; तुमने दिया ज्ञान।
आतम ज्ञानी हो मेरा, शत्-शत् बार प्रणाम।

इत्याशीर्वादः।

पंचकल्याणक पूजा

गीता छंद

पंच कल्याणक मनाए, जीव सब हर्षित हुए।
उद्धार करने जीव का, धरती में आ जन्मित हुए
चारों तरफ शांति हुई, पृथ्वी तिलक को धारती।
वंदन करें मिलकर सभी, आओं सभी मिल भारती।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणक समूह, अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणक समूह, अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणक समूह, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू छंद

यह स्वारथ की दुनिया सारी, इसमें तो सांचा कोई नहीं।
कर्मों के बन्धन में रत रह, निज आतम का हो ध्यान नहीं।।
तुम गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष, कल्याणक से कल्याण किया।
कल्याण पथिक कल्याण करे, मुक्ती में जाकर बसे जिया।।१।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यः जलम्, निर्वपामीति स्वाहा।

नासमझ न समझे जिनवर को, जग में बस चिन्ता करता है।
चिन्तन की छाया पाये तो, चन्दन सम शीतल होता है।।
चन्दन सी शीतलता पाने, कल्याणक से कल्याण किया।
कल्याण पथिक कल्याण करे, मुक्ती में जाकर बसे जिया।।२।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यः चन्दनं, निर्वपामीति स्वाहा।

समता का अक्षय धन तुममें, अक्षत से मैं पूजा करता।
इस दुखित क्रोध से हारा हूं, तेरी छवि को मन में धरता।।
अक्षय नगरी पाने को प्रभु, कल्याणक से कल्याण किया।
कल्याण पथिक कल्याण करे, मुक्ती में जाकर बसे जिया।।३।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्यः अक्षतम्, निर्वपामीति स्वाहा।

सूर्योदय से पंकज खिलता, सूर्यास्त समय मुरझा जाता।
पुष्पों से उत्तम आप प्रभु, ले भाव पुष्प पूजा करता॥
आतम बगिया को खिला खिला, कल्याणक से कल्याण किया।
कल्याण पथिक कल्याण करे, मुक्ती में जाकर बसे जिया॥४॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्य: पुष्पम्, निर्वपामीति स्वाहा।

इस स्वर्ग की रचना का प्रभु जी, निर्माण स्वयं ही करते हैं।
मुक्ती में तेरा वास प्रभु, पूजा से भूख को हरते हैं॥
सद्गुण पा दुर्गुण दूर करें, कल्याणक से कल्याण किया।
कल्याण पथिक कल्याण करे, मुक्ती में जाकर बसे जिया॥५॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्य: नैवेद्यं, निर्वपामीति स्वाहा।

चाहें तो स्वर्ग बना सकते, चाहें तो नर्क बना देंगे।
अपने पुरुषारथ के बल पर, हम दीपक ज्ञान जला देंगे॥
शक्ती दो नाथ प्रभु मुझको, पथ का अंधियारा हट जाये।
दीपक ले चरणों में आया, मुक्ती पथ मुझको मिल जाये॥६॥

ॐ ह्रींचतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्य: दीपम्, निर्वपामीति स्वाहा।

अवरोहण आरोहण द्वारा, सुख-दु:ख की परिभाषा जानी।
कर्मों का फल यह जीवन है, यह वीरा की सच्ची वाणी॥
कर्मों का धुंआ उड़ाकर के, कल्याणक से कल्याण किया।
कल्याण पथिक कल्याण करे, मुक्ती में जाकर बसे जिया॥७॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्य: धूपम्, निर्वपामीति स्वाहा।

हम अंधकार के आराधक, उजियाले के गुण गाते हैं।
फल इसका दु:ख ही मिलता है, सुख पाने को फल लाते हैं॥
मुक्ती का फल है सर्वश्रेष्ठ, यह वीरा की सच्ची वाणी।
कल्याण पथिक कल्याण करे, मुक्ती में भेजे जिनवाणी॥८॥

ॐ ह्रींचतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्य: फलम्, निर्वपामीति स्वाहा।

समता रस में हो सराबोर, प्रभु तेरे पूजन को आया।
समता रस मैं स्नान करूं, अर्घ्यो की थाली ले आया॥
तुम पद अनर्घ्य के पाने को, कल्याणक से कल्याण किया।

कल्याण पथिक कल्याण करे, मुक्ती में जाकर बसे जिया॥९॥

ॐ ह्रींचतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्य: अर्ध्यम्, निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक अर्घ्य (गर्भ कल्याणक)

दोहा

धरती हर्षित हो गई, हर्षित हुआ समाज।
कल्याणक की सूचना, पाने वाला आज॥

इति: मण्डलेश्योपरि पुष्पांजलि क्षिपेत्

(चौपाई)

नगर अयोध्या खूब सजा था, दुंदुभि बाजा खूब बजा था।
मरु देवी के गर्भ में आये, नाभिराय मन में हर्षाये॥
आदी में आदि हैं आये, आदिनाथ इससे कहलाये।
हर्षित हो कल्याण मनाते, चरणों में हम शीश झुकाते॥१॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभ देवस्य आषाढ़ कृष्णा द्वितीयायां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन शत्रू साकेत के राजा, विजया गर्भ आए महाराजा।
सूर्य चन्द्र सब शीश नवायें, कल्याणक को इन्द्र मनाए॥
अजित अनुत्तर से चय कीना, प्रश्नों के सब उत्तर दीना।
जब प्रत्यक्ष हो प्रभु का दर्शन, तब होगा कितना आकर्षण॥२॥

ॐ ह्रीं श्री अजित नाथस्य ज्येष्ठ कृष्णामावस्यायां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संभव भव तजने को आये, मात सुसेना गर्भ समाये।
पिता जतारी मन हर्षाये, उत्सव आकर इन्द्र मनाए॥
फागुन सुदी है अष्टमी प्यारी, शुभ वेला है मंगलकारी।
मंगल सारे स्वयं ही आये, चरणों हम शीश झुकाऐं॥३॥

ॐ ह्रीं श्री संभव नाथस्य फाल्गुन शुक्ला अष्टम्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनंदन जिन गर्भ में आये, और पिता का मन हर्षाये।
संवर राजा हुए थे पुलकित, सुर उत्सव कर होते हर्षित॥
थी वैशाख शुक्ल छठ प्यारी, शुभ वेला वह मंगलकारी।
मंगल सारे स्वयं ही आये, चरणों में हम शीश झुकाये॥४॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दन नाथस्य वैशाख शुक्ला षष्टंम्यायां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमति नाथ तीर्थंकर स्वामी, नगर अयोध्या आये नामी।
मेघ पिता के मेघ हटे थे, मां मंगल के कर्म घटे थे॥
श्रावण शुक्ला द्वितीया आई, खुशियां सारे जग में लाई।
लाली ये संदेशा लाई, आने वाले हैं त्रिपुराई॥५॥

ॐ ह्रीं श्री सुमति नाथस्य श्रावण शुक्ला द्वितीयायां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ताल सरोवर पदम खिलाये, तीर्थंकर श्री पद्म जो आये।
जन-जन हृदय खिला रवि आया, रत्न इन्द्र ने है बरसाया॥
कौशाम्बी नगरी थी प्यारी, मात सुसीमा महिमा न्यारी।
पिता चरण सौभाग्य मनायें, चरणों में हम शीश झुकायें॥६॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ नाथस्य माघ कृष्णा षष्टम्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नगर बनारस में रस आया, रस का स्वाद सभी ने पाया।
नाथ सुपारस गर्भ में आये, मात सुमात के भाग्य जगाये॥
भाद्र शुक्ल छटमी हर्षायी, कृष्ण रंग में शुक्लता आयी।
कल्याणक हम गर्भ मनायें, नाथ चरण में शीश झुकायें॥७॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथस्य भाद्रपद शुक्ला षष्टम्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजय अनुत्तर चय कर आये, मातु लक्ष्मणा कोख हैं पाये।
महासेन महामुदित हुए थे, सबसे सुंदर भाग्य लिये थे॥

चैत वदी पंचम थी प्यारी, हर्षित होते सब नर नारी।
इन्द्रों संग हम भक्ती करते, शीश चरण में नित ही धरते॥८॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रनाथस्य चैत्र कृष्णा पंचमम्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुविधि आरण छोड़के आये, काकंदी कण-कण हर्षाये।
राम और सुग्रीव के प्यारे, आप हुए थे जग में न्यारे॥
फाल्गुन वदी नवमी शुभ आई, खुशियां सारे जग में छाईं।
कल्याणक मंगल कर देता, सारे संकट को हर लेता॥९॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथस्य फाल्गुन कृष्णा नवम्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अच्युत से च्युत होकर आये, नगर भद्रिका जन हर्षाये।
दृढ़रथ पिता सुनन्दा माता, पायी आपने अद्भुत साता॥
चैत कृष्ण अष्टम शुभ प्यारी, जिन शीतल की है तैयारी।
इन्द्र मनाये उत्सव प्यारा, स्वर्ग पुरी धरती से हारा॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री शीतल नाथस्य चैत कृष्णा अष्टम्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पोत्तर से प्रभुजी आये, गर्भ मात वेणु का पाये।
पिता विष्णु का दिल हर्षाया, श्रेष्ठ जगत श्रेयांस है पाया॥
ज्येष्ठ कृष्ण छठ श्रेष्ठ बताई, श्रेष्ठ-श्रेष्ठ बातें सब पाईं।
इन्द्रों की भक्ती उमगाई, हर्षित होते हैं सब भाई॥११॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांस नाथस्य ज्येष्ठ कृष्णा षष्ठम्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ग छोड़ धरती पर आये, चम्पापुर ही नगर सुहाये।
वासुपूज्य पितु विजया माता, नहीं आपका कोई भ्राता॥
कृष्णा छठ आषाढ़ थी प्यारी, पृथ्वी की शोभा थी न्यारी।
वासुपूज्य की पूजा करते, जीवन पूर्ण समर्पित करते॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यनाथस्य आषाढ़ कृष्णा षष्टम्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ग शतार से तार है आया, पृथ्वी मां ने तुम्हें बुलाया।
कंपिल नगरी पा हर्षाई, कृत वर्षा मुख कांति आई।।
जय श्यामा मां मन मुस्काई, विमलनाथ की छाया आई।
इन्द्र स्वयं हैं रक्षा करते, चरणों में हम माथा धरते।।१३।।

ॐ ह्रीं श्री विमल नाथस्य ज्येष्ठ कृष्णा दशम्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पोत्तर तज पुष्प है आया, पुर साकेत को आन खिलाया।
जननी सर्वयशा यश पाये, सिंहसेन आशीष लुटाये।।
कार्तिक वदी एकम शुभ प्यारी, कर्मों की सेना है हारी।
प्रभु अनन्त मंगलमय जिन वर, मंगल कर दो दूर अमंगल।।१४।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथस्य कार्तिक कृष्णा प्रतिपदायां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तज सर्वार्थ सिद्धि प्रभु आये, मुक्ति-रमा उनके मन भाये।
रत्नपुरी में रत्न गिराये, इन्द्र - देव - नर सब हर्षाये।।
मां सुव्रत ने व्रत तप कीना, गर्भ धर्म का तभी है लीना।
पिता भानु भानू से दमके, भानू कहीं छिप गया शरम से।।१५।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथस्य वैशाख शुक्ला त्रयोदश्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गजपुर नगरी जग में न्यारी, तज सर्वार्थ सिद्धि अवतारी।
विश्वसेन मां ऐरा देवी, सेवा करतीं सखियां तेरी।।
भादों वदी सप्तमी प्यारी, शान्ति पाने की तैयारी।
सुरपति उत्सव नित्य मनायें, हम चरणों में शीश झुकायें।।१६।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथस्य भाद्रपद कृष्णा सप्तम्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंथुनाथ गजपुर के नामी, तज सर्वार्थ सिद्धि को स्वामी।
सूर्यसेन पितु श्रीमति माता, पायी जिनने सब सुख साता।।

श्रावण वदी दशमीं शुभ प्यारी,कुंथु जिनकी शोभा न्यारी।
महापूज्य की पूजा करते, संकट सारे पल में हरते॥१७॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथस्य श्रावण कृष्णा दशम्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपराजित तब हुआ पराजित, छोड़ा जब प्रभु ने अपना हित।
मात सुमित्रा गर्भ में आये, देव सुदर्शन महल बनाये॥
फाल्गुन वदी तृतीया तिथि भाई, घड़ी महूरत पावन आई।
इन्द्र प्रभु की सेवा करते, संकट सारे अर जिन हरते॥१८॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथस्य फाल्गुन कृष्णा तृतीयां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपराजिता अनुत्तर छोड़ा, मिथिलापुर से नाता जोड़ा।
कुंभ पिता मां प्रभावती जी, मल्लिधार हुई गर्भवती जी॥
चैत सुदी एकम् थी प्यारी, हुआ महोत्सव अति सुखकारी।
मल्लिनाथ के गुण हम गायें, आकर प्रभु को शीश झुकायें॥१९॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथस्य चैत शुक्ला प्रतिपदायां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणत तज पृथ्वी पर आये, पद्मावति के गर्भ समाये।
राजगृही के राजा घर में, पिता सुमित्र श्रेष्ठ थे वर में॥
श्रावण बदि द्वितीया शुभ आई, जन-मन में थीं खुशियां छाई।
कल्याणक हम गर्भ मनायें, संकट सारे शीघ्र नसायें॥२०॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रत नाथस्य श्रावण कृष्णा द्वितीयायां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपराजित को राजी करने, आये मिथिला आतम वरने।
पिता विजय जस पा हर्षाये, वप्रिल मात के गर्भ में आये॥
आश्विन वदी द्वितीया शुभ प्यारी, भव-भव के दुःख सोखन हारी।
नमिनाथ पा सब मुस्कायें, खुशियां मिलकर सभी मनायें॥२१॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथस्य आश्विन कृष्णा द्वितीयायां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शौरीपुर ने यश जग पाया, अपराजित से तुम्हें बुलाया।
समुद्र विजय घर खुशियां छाई, शिवा गर्भ में पा हर्षाई।।
कार्तिक सुदी छटमीं यश गाये, मंगलकारी गीत सुनाये।
कल्याणक हम गर्भ मनायें, नेमिनाथ को शीश झुकायें।।२२।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथस्य कार्तिक शुक्ला षष्ठम्यां गर्भ कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पारस प्राणत स्वर्ग से आयें, वामा माँ के गर्भ समाये।
अश्वसेन की सेना भारी, हर्षित है सब नर और नारी।।
नगर बनारस में रस बनता, कहे चक्रवर्ती की जनता।
कल्याणक हम गर्भ मनायें, पार्श्वप्रभु को शीश झुकायें।।२३।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथस्य वैशाख कृष्णा द्वितियायां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पोत्तर से उतर के आये, कुंडलपुर नगरी चमकाये।
त्रिशला माँ मन में हर्षायी, सिद्धारथ-शुभ घड़ी थी आई।।
सुदी असाढ़ थी छठमी प्यारी, वीरा जी की शोभा न्यारी।
कल्याणक हम गर्भ मनायें, चरणों में हम शीश झुकायें।।२४।।

ॐ ह्रीं श्री महावीर स्वामिन: आषाढ़ शुक्लाषष्ठम्यां गर्भकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं

त्रिभंगी छंद

चौबीसों जिनवर, गर्भ प्राप्त कर, स्वर्ग छोड़ धरती आए।
मां पितु को पाया, दिल हर्षाया, इन्द्रों ने कल्याण मनायें।।
शुभ तिथियाँ पाये, स्वप्न दिखायें, उत्सव चारों ओर हुआ।
तन मन से पूजें, भाव से पूजें, हर्षित सारा नगर हुआ।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर गर्भकल्याणकेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शान्तिधारा।।पुष्पांजलि:।।

(जन्म कल्याणक)

शम्भू छन्द

जब गर्भ में आये थे जिनवर, इन्द्रों ने रतन थे बरसाए
नगरी को सुन्दर बना दिया, सुरपति की आज्ञा को पाए
तिथि चैत वदी नौमी प्यारी, जब आदिनाथ जी जन्म हुआ।
पांडुक वन में फिर जाकर के, सुरपति के द्वारा न्हवन हुआ॥१॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्णा नवम्यां श्री ऋषभदेव जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरती पर कर्म विजय होने, जिन अजितनाथ का जन्म हुआ।
देवों के आसन कम्पित हैं, धरती पर नया प्रसून खिला॥
शुक्ला दशमी थी माघ मास, देवों के बाजे बाज उठे।
सुन्दर सूरत थी भगवन की, देखत-देखत ना नजर थके॥२॥

ॐ ह्रीं माघ शुक्लादशम्यां श्री अजितनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीतिस्वाहा।

भव के दुख नाशन हार प्रभु, संभव ने भव धारण कीना।
शचि आई धीरे से अन्दर, सौधर्म को बालक दे दीना॥
कार्तिक पूनो अवसर प्यारी, वसुधा को सुन्दर पुष्प मिला।
नर सुर सबको हर्षित करके, धरती में आकर फूल खिला॥३॥

ॐ ह्रीं कार्तिक शुक्लापूर्णिमायां संभवनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नन्दन का अभिनन्दन करने, स्वर्गों से सुरगण आते हैं।
रत्नों की वृष्टि कर करके, मन मोदक मोद मनाते है॥
थी माघ मास द्वादश प्यारी, अभिनन्दन नन्दन बन आये।
प्रमुदित होकर के जीव सभी, भक्ति में शीश झुका जाये॥४॥

ॐ ह्रीं माघ शुक्ला द्वादश्यां अभिनन्दनजिन जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऐरावत हाथी पर बैठा, पर्वत सुमेरु पर न्हवन किया।
शचि ने वस्त्राभूषण पहनाकर, श्री जिन तन का श्रृंगार किया॥

हे सुमतिनाथ अवधि धारी, सुमति का मार्ग दिखा देना॥
सबकी बुद्धि में सुमति भरो, मुक्ति पुर में पहुंचा देना॥५॥

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला एकादश्यां श्री सुमतिनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

जब सूर्य उदित हो जाता है, तो कमल मुखर हो जाते हैं।
जब जन्म हुआ पद्मा प्रभु का, नर-सुर सब ही हर्षाते हैं॥
कार्तिक कृष्णा तेरस का रस, सारी वसुधा पर फैल गया।
वसुधा वैभव से आच्छादित, खुशियों ने सुन्दर नृत्य किया॥६॥

ॐ ह्रीं कार्तिक कृष्णात्रयोदश्यां पद्मप्रभ जन्मकल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

नरको में कुछ शांति हुई, जब जन्म सुपार्श्वनाथ हुआ।
आनन्द छाया दुख दूर हुये, आतम आनन्द का ज्ञान हुआ॥
जन्मोत्सव इन्द्र मनातें हैं, स्वर्गो से सेना आती हैं।
पर्वत पर जाने का चित्रण, भव्यों के मन को भाती हैं॥७॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ शुक्ला द्वादश्यां सुपार्श्वनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दा का फैला उजियारा, तम ने जाकर तम विश्राम किया।
चन्दा की शीतल किरणों ने, सारे जग का हर ताप लिया॥
ग्यारस कृष्णा के पौष समय, रंग कृष्णा का ही शुक्ल हुआ।
त्रिभुवन में हर्ष लहर दौड़ी, सौधर्म ने ताण्डव नृत्य किया॥८॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्णा एकादश्यां श्री चन्द्रप्रभु जिनाय जन्मकल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर पुष्पों से प्यार करें, हे पुष्पदंत भगवान तुम्हीं।
भगवन का अतिशय रूप घना, तुम देखत नजर ना जाये कहीं॥
मगसिर सुदि एकम योग शुभम्, जिसने तीर्थंकर को देखा।
जन्मोत्सव का वर्णन प्यारा, लेखन में भी ना जाये लिखा॥९॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्ष शुक्ला प्रतिपदायां श्री पुष्पदंत जिन जन्मकल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्राणी अति हर्षित होती, स्पर्श प्रथम प्रभु पा करके।
दर्शन से मन ना भरता था, देखा था ध्यान लगा करके।।
फाल्गुन कृष्णा ग्यारस प्यारी, श्री श्रेयांसनाथ का जन्म हुआ।
स्वर्गों का वैभव महलो में, आकर के प्रभु का दर्श किया।।११।।

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णा एकादश्यां श्री श्रेयांस जिन जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्मत ही दस अतिशय होते, पुण्यों का फल ही अतिशय हैं।
जग पूज्य हुये थे वासुपूज्य, कर्मों का करते वो क्षय हैं।।
फाल्गुन वदी चौदस प्यारी थी, दर्शन देने जिनवर आये।
मुक्ति में जाने को प्रभुवर, तीर्थंकर की पदवी लायें।।१२।।

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णा चतुर्दश्यां श्री वासुपूज्य जिन जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भावों को निर्मल-निर्मल कर, भावों की शुद्धि कर डाली।
निज आतम फूल खिलाकर के, तुम स्वयं बने आतम माली।।
शुभ माघ सुदी चतुर्थी प्यारी, इन्द्रों के आसन डोल गये।
जिनवर की भक्ति जिसमें की, गूंगे भी आकर बोल गये।।१३।।

ॐ ह्रीं माघ शुक्ला चतुर्थ्यां श्री विमलनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो स्वयं धन्य होने आये, धरती को धन्य किया जिन ने।
शुभ गुण अनन्त को पाकर के, मुक्ति का ज्ञान दिया जिन ने।।
शुभ जेठ वदी द्वादश प्यारी, धर्मामृत का रस बरसाया।
जिस जिस ने रस का पान किया, शिवपथ में चल मुक्ति पाया।।१४।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णा द्वादश्यां श्री अनन्तनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वे धर्म ध्वजा फहराने को, वसुधा पर ध्वज लेकर आये।
जब धर्मनाथ का जन्म हुआ, आनन्द हुआ मंगल छाये।।

शुभ भाव सुदी तेरस प्यारी, गिरी पे जाकर के न्हवन किया।
शची ने आभूषण पहनाये, भक्तों ने आकर न्हवन किया॥१५॥

ॐ ह्रीं माघ शुक्ला त्रयोदश्यां श्री धर्मनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्ति से भ्रान्ति शीघ्र मिटे, शान्ति देने शान्ति आये।
नरकों ने भी शान्ति पाई, जन मन के मन भी हर्षाये॥
शुभ जेठ वदी चौदस प्यारी, सुरपति ने जिन अभिषेक किया।
शची ने आभूषण पहनाये, चहुँ ओर शान्ति जय घोष हुआ॥१६॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णा चर्तुदश्यां श्री शान्तिनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नों की वर्षा होने से, सब जग में किरणें फैल गयीं।
था स्वर्णमयी जिन रूप प्रभु , चरणों में लक्ष्मी बैठ गयी॥
वैशाख सुदी एकम आयी, जिसने भी जिनवर को देखा था।
हो गये धन्य वे जीव वहाँ, जिन ने जिनवर को लेखा था॥१७॥

ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ला प्रतिपदायां श्री कुंथुनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम दुष्ट अरि को नष्ट करन, धरती पर आ अवतार लिया।
हे वज्र वृषभ संहनन धारी, आठो कर्मों से समर किया॥
थी माघ सुदी चौदस प्यारी, जन्मोत्सव इन्द्र मनाते हैं।
जो जन्म मरण दुख से डरते, वे ही पूजा को आते हैं॥१८॥

ॐ ह्रीं माघ शीर्ष शुक्ला चतुर्दश्यां श्री अरनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन कर्मों का मल धोने को प्रभु, मल्लि प्रभु बनकर आये थे।
कर्मों के मल से विमल आप, आतम की ज्योति जगाये थे॥
मग सिर सुदी ग्यारस धन्य हुई, उत्तम तिथि थी ये तिथियों में,।
उस घड़ी को हम भी याद करें, मुनिवर लिखते हैं कृतियों में॥१९॥

ॐ ह्रीं माघ शीर्ष शुक्ला एकादश्यां श्री मल्लिनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि पथ की राह दिखाने को, मुनिसुव्रत जी का जन्म हुआ।
तुम चरम शरीरी तीर्थंकर, इन्द्रो ने आ अभिषेक किया।।
वैशाख सुदी द्वादश प्यारी, भक्ति करने को नाथ मिले।
मम जन्म मरण रिश्ता छूटे, अन्तर में ज्ञान कमल विकसे।।२०।।

ॐ ह्रीं वैशाख कृष्ण द्वादश्यां श्री मुनिसुव्रत जिन जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम महा गुणी तुम महा श्रेष्ठ, कर नमः नमः नाभिराय हुए।
एक सहस आठ सौं कलशों से जिन, पर्वत जा अभिषेक किए।
आषाढ़ कृष्ण दशमी प्यारी, शुभ लक्षण में तुम जन्म लिया।
सुर नर ने मिलकर चरणों में, भावों से जाकर न्हवन किया।।२१।।

ॐ ह्रीं आषाढ़ कृष्णा दशम्यां श्री नमिनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

था श्वेत रूधिर जिनवर तन में, वात्सल्य का भाव प्रगटता हैं।
थे कृष्ण रूप पर धवल आत्म, जिनके अतिशय की दृढ़ता है।
श्रावण सुदि षष्ठी प्यारी थी, ऐरावत शौरीपुर आया।
हर तन में मन में जीवन में, मंगल मंगल आनन्द छाया।।२२।।

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ला षष्ठयां श्री नेमिनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पार्श्व प्रभु का जन्म हुआ, तब नगर बनारस धन्य हुआ।
गंगा ने आकर दर्श किया, देवों ने उत्सव बहुत किया।।
देवों का पुण्य उदय आया, जा कर के प्रभु का न्वहन किया।
सारे जग में अतिशय तेरा, संकटहारी को नमन किया।।२३।।

ॐ ह्रीं पौष कृष्णा एकादश्यां श्री पार्श्वनाथ जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लघु काया थी शक्ति अनन्त, त्रिशला माता को धन्य किया।
युग के अन्तिम तीर्थंकर बन, मुक्ति का मारग दिखा दिया।।
थी चैत्र सुदी तेरस प्यारी, घर-घर में मंगलाचार हुए।
हिंसा की हिंसा करने को, आकर जग में अवतार लिये।।२४।।

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला त्रयोदश्यां श्री महावीर जिन जन्मकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं

दोहा

अन्तिम जन्म को पाये के, धन्य हुये थे आप।
चौबीसों जिनराज जी, नमता सकल समाज॥
अविनाशी तब वेश है, वन्दन है भगवान।
'स्वस्ति' पूजा नित करें, होएं आप समान॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशांति तीर्थंकर जन्मकल्याणकेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
शांतये शान्तिधारा।।पुष्पांजलि:॥

तप कल्याणक अर्घ्यं

शंभु छंद

जब नृत्य बीच मृत्यु देखी, मन में वैराग्य उमड़ आया।
लौकांतिक सुर फिर आ करके, वैराग्य छटा को लहराया।
थी चैत्य वदी नवमी बेला, दीक्षा संध्या में पायी है।
सिद्धार्थ वनों में जा करके, शुभ दीक्षा ही अपनाई है॥१॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्णा नवम्यां श्री ऋषभदेव दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अलका में उल्का का गिरना, संसार दशा का ज्ञान हुआ ।
सुप्रभा पालकी में बैठा, सहेतुक वन को गमन किया ।
थी माघ सुदी नवमी प्यारी, संग सहज भूप दीक्षा लीनी ।
तप की शक्ति हम भी पायें, चरणों में अर्जी कर दीनी ॥२॥

ॐ ह्रीं माघ शुक्ला नवम्यां श्री अजितनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वन की शोभा निरखत-निरखत, सम्भव को भव का ज्ञान हुआ।
थी क्वांर सुदी पूरणमासी, केवल पूरण का ज्ञान हुआ।
तब जप-तप का अभियान चला, देवों ने जप समृद्धि की।
लोकांतिक देवों ने आकर, वैराग्य कान्ति की वृद्धि की॥३॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्ष पूर्णिमायां श्री संभवनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गन्धर्वनगर की शोभा लख, अनुरक्त विरक्त हुए क्षण में।
अभिनन्दन निज वन्दन करने, फिर गमन किया था उग्रवन में।
तब एक सहस राजा आये, तुम चरण चिन्ह पर चलने को।
दीक्षा तुमसे लेकर प्रभुजी, मुक्ति के पथ को वरने को।।४।।

ॐ ह्रीं माघ शुक्ला दशम्यां श्री अभिनन्दन जिन दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैराग्य हुआ पद्मा देवा, कार्तिक वदी तेरस प्यारी थी।
उद्यान मनोहर में जाकर, मन हर दीक्षा ली न्यारी थी।
जग जाना था निस्सार रूप, वैभव को ठोकर मारी थी।
संग एक सहस राजाओं की, मुक्ति पथ की तैयारी थी।।५।।

ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ला नवम्यां श्री सुमतिनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप अग्नि में हो कर्म दहन, तप के द्वारा ही मुक्ति हैं।
इसलिए पद्मप्रभु दीक्षा ले, मुक्ति की पाई युक्ति हैं।
थी कार्तिक वदी तेरस चित्रा, उद्यान मनोहर जा पहुँचे।
आतम में ध्यान लगा लीना, वन में बैठे आंखे मीचें।।६।।

ॐ ह्रीं कार्तिक कृष्णा त्रयोदश्यां श्री पद्मप्रभु जिन दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आया वैराग्य प्रभु को जब, इन्द्रों का आसन डोल उठा।
लौकांतिक सुर तब शीघ्र आये, मुखरित वाणी में बोल उठा।
तुम नाम सुपारस पारस बन, दीक्षा ले तेला पर बैठे।
मन पर्ययज्ञान हुआ तब ही, अपने आतम में जा तिष्ठे।।७।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ शुक्ला द्वादश्यां श्री सुपार्श्वनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग का झंझट सब छोड़ दिया, कर्मों के नाशन हार बने।
दीक्षा ले उजियारा कीना, चन्दा के सारे मेघ हने।
चपला बिजली को लख करके, वैराग्य भाव में लीन हुए।
हम भाव बनाये भक्ति के, सुरगण से वंदित आप हुए।।८।।

ॐ ह्रीं पौष कृष्णा एकादश्यां श्री चन्द्रप्रभ जिन दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुविधि को विधि का ज्ञान हुआ, निज को पाने दीक्षा लीनी।
पुष्पों के वन में जाकर के, पुष्पित आतम बगिया कीनी।
मानुष देवों में बहस हुई, हम प्रथम पालकी पकड़ेंगे।
मानुष संयम से बड़े बने, वरना कर्मों से जकड़ेंगे॥९॥

ॐ ह्रीं मार्ग शीर्ष शुक्ला प्रतिपदायां श्री पुष्पदन्तनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु को दीक्षा तो लेनी थी, पर कारण हिम को बना लिया।
उद्यान सहेतुक में जाकर, आतम में निज का ध्यान किया।
हम भी कर्मों का नाश करें, ऐसी दीक्षा को कब लेगें ।
यदि मिले आपकी चरण धूलि, हम कर्म नाश भी कर देंगे॥१०॥

ॐ ह्रीं माघ कृष्णा द्वादश्यां श्री शीतलनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भोजन के रस से ज्यादा रस, ध्यानी को ध्यान में आता है।
तुम श्रेष्ठ बने श्रेयांसनाथ, चरणों का नाता भाता है।
दीक्षा कल्याणक उत्सव को, स्वर्गों से सुर गण आये गये।
तुम निज पर का कल्याण करो, भव्यों को तुम ही भा गये॥११॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णा एकादश्यां श्री श्रेयांस जिन दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

बालब्रह्मचारी प्रभो, ले ली तप की राह।
राज-पाठ सब छोड़कर, छोड़ी सबकी चाह।

गीता छंद

संसार सुख को त्याग कर, है बालपन दीक्षा धारी।
औ आत्मा के पाय दर्शन, आश मुक्ती की करी॥
घोर तप करके प्रभु, अरि कर्म को नशने लगे।
निज आत्मा में लीन हो, उपसर्ग को सहने लगे॥१२॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णा चतुदश्यां श्री वासुपूज्य जिन दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

शंभु छंद

संयम लेकर निज ध्यान किया, तुम विमल नाथ भगवान बने।
देव फिर पालकी पे चढ़ करके, उद्यान सहेतुक पहुंच गये।।
मुक्ती का साधन दीक्षा है, दीक्षा ले निज कल्याण किया।
मन पर्यय ज्ञान को पाकर के, मन की हर बात को जान लिया।।१३।।

ॐ ह्रीं माघ शुक्ला चतुर्थ्यां श्री विमलनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

उल्कापात को देखकर, मन विरक्त हो जाये।
नमः सिद्ध कहकर प्रभू, दीक्षा स्वयं ही पाये।।१४।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णा द्वादश्यां श्री अनंतनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्रवर्ती वैभव तजा, आया जब वैराग।
सिद्ध सिद्धिक पालकी, चढ़े किया सब त्याग।।१५।।

ॐ ह्रीं माघ शुक्ला, त्रयोदश्यां श्री धर्मनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धों को माना गुरु, लिया दिगम्बर वेष।
भक्त गुरू मानें तुम्हें, विघ्न रहें ना शेष।।१६।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णा चतुदश्यां श्री शांतिनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हो विरक्त कुंथु प्रभु, लौकांतिक सुर आयें।
विजया नामक पालकी, चढ़कर वन को जायें।।
उत्सव इन्द्रों ने किया, स्वस्तिक चिन्ह बनाय।
केश पिटारी लेकर, क्षीर सरोवर जाय।।१७।।

ॐ ह्रीं वैशाख शुक्ला प्रतिपदायां श्री कुंथुनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर महल था मेघ मय, क्षण भर का था खेल।
अरहनाथ देखे प्रभु, बढ़ी त्याग की बेल।।

शाली वन में जायकर, किया परिग्रह त्याग।
दीक्षा की यह शुभ घड़ी, हृदय खिलाये बाग॥१८॥

ॐ ह्रीं मंगसिर शुक्ला दशम्यां श्री अरनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चंचल विद्युत देखकर, चपला है यह देश।
आया तब वैराग्य तो, धरा दिगम्बर वेश।
मल्लिनाथ बलवान थे, पंच मुष्टि कच लोंच।
अन्दर बाहर शुद्ध मय, आतम का था बोध॥१९॥

ॐ ह्रीं मंगसिर शुक्ला एकादशम्यां श्री मल्लिनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाति स्मृति होत ही, आया था वैराग।
कर्मों का पतझड़ हुआ, भाया निज का राग।
अपराजित थी पालकी, अपराजित थे आप।
अपराजित मुनिवर प्रभो, करते तेरा जाप॥२०॥

ॐ ह्रीं बैशाख कृष्णा दशम्यां श्री मुनिसुव्रतनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर नमिनाथ ने, धरा तपस्या योग।
जाला कर्मों का हटा, करी कर्म पर चोट॥
एक सहस्त्र नृप संग में, दीक्षा ली अविकार।
धीरे-धीरे बढ़ चले, हुई कर्म की हार॥२१॥

ॐ ह्रीं आषाढ़ कृष्णा दशम्यां श्री नमिनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूल्हा बनकर के चले, नेमिनाथ मनहार।
राजुल तज दीक्षा धरी, पाया आतम सार॥
तेला का उपवास ले, निज को लिया निहार।
शुद्ध ज्ञान को पाय कर, जग में किया विहार॥२२॥

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ला षष्ठम्यां श्री नेमिनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पार्श्वनाथ भगवान को, आया था वैराग।
मां वामा थी रोकती, किया मोह का त्याग॥
मूर्तिमान आतम लखे, नाशा दृष्टि जमाय।
संकटहारी जिन प्रभो, शत्-शत् शीश नवाय॥२३॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्णा एकादशम्यां श्री पार्श्वनाथ दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यौवन में वैराग्य ले, किया स्वयं से प्यार।
कठिन तपस्या में रमे, जग छोड़ा निस्सार॥
स्वयं अकेले मुनि बने, ना कोई था साथ।
स्वयं स्वंभू आप हैं, आपहि मुक्तीनाथ॥२४॥

ॐ ह्रीं मंगसिर कृष्णा दशम्यां श्री महावीर जिन दीक्षाकल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शंभू छंद

इक वर्ष बाद इक्षु रस का, श्री ऋषभनाथ आहार लिया।
तीर्थंकर प्रभुजी खीर लेय, सुरगण ने पंचाश्चार्य किया॥
रत्नों की वर्षा से आंगन, तब नित्य प्रकाशित होता था।
चारों दिशि में खुशियाँ होतीं, तब ज्ञान सुवासित होता था॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर दीक्षाकल्याणकेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

तप कल्याणक देव का, सुर गण इन्द्र मनाय।
महापुरूष महादेव को, शत शत शीश नवाय॥

इत्याशीर्वादः

केवलज्ञान कल्याणक अर्घ्य

(चाल छन्द)

तुम दुष्ट घतिया घाते, तब केवलज्ञान प्रकाशे।
फिर तरु अशोक भये तीरा, श्री आदिनाथ जिन वीरा॥१॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णा एकादशम्यां श्री आदिनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घाती कर्मों को जीता, कर्मों का किया फजीता।
श्री अजित नाम को पाया, शुभ समवशरण रचवाया॥२॥

ॐ ह्रीं पौष शुक्ला एकादशम्यां श्री अजितनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ शाल वृक्ष के नीचे, बैठे थे आंखें मीचे।
तब केवल रवि प्रगटाया, सम्भव ने ज्ञान को पाया॥३॥

ॐ ह्रीं कार्तिक कृष्णा चर्तुथ्यां श्री संभवनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनन्दन ज्ञान को पाया, इन्द्रासन को कम्पाया।
घंटा आदि सब बाजे, आये सब पूजा काजे॥४॥

ॐ ह्रीं पौष शुक्ला चतुर्दश्यां श्री अभिनन्दननाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब इष्टानिष्ट हटाये, निज शुद्ध भावना भाये।
केवल का दीप प्रकाशा, हमको केवल की आशा॥५॥

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला एकादश्यां श्री सुमतिनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद्मा का मनहर वन था, मन में केवल आतम था।
आतम के तम को नाशा, केवल का दीप प्रकाशा॥६॥

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला पूर्णिमायां श्री पद्मप्रभ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सातों विधि सेना आई, पारस की भक्ती गाई
शुभ समवशरण था प्यारा, लगता है जग से न्यारा॥७॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णा षष्ठम्यां श्री सुपार्श्वनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ नाग वृक्ष की माया, केवल का दीप जगाया।
चंदा के गुण हम गायें, चरणों में शीश झुकायें॥८॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णा सप्तम्यां श्री चन्द्रप्रभ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंतर ज्योतिष भी आये, औ कल्प भवन शुभ गाये।
मम पुष्पदन्त जिन स्वामी, आश्रय दाता है नामी॥९॥

ॐ ह्रीं कार्तिक शुक्ला द्वितीयायां श्री पुष्पदन्तनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचनामृत प्रभु ने लीना, अरु दिव्य ध्वनि को कीना।
ज्ञानामृत को बरसायें, पीने को हम सब आयें।
शुभ माली वृक्ष की छाया, शीतलता को बिखराया।
शीतल केवल के धारी, झुकती है दुनिया सारी॥१०॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्णा चर्तुदश्यां श्री शीतलनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेयांस श्रेष्ठ बन आये, केवल पाकर मुस्काये।
मुस्कान ज्ञान तब दीना, पाया था ज्ञान नवीना॥११॥

ॐ ह्रीं माघ कृष्णा अमावस्यायां श्री श्रेयांसनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पा नगरी अति न्यारी, श्री वासु पूज्य की प्यारी।
इसलिए कहीं ना जाएं, चम्पा में ज्ञान उपाए॥१२॥

ॐ ह्रीं माघ शुक्ला द्वितीयां श्री वासुपूज्यनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाटल तरु ने तम टाला, केवल का ज्ञान विशाला।
केवल ने विमल बनाया, चरणों में शीश झुकाया॥१३।

ॐ ह्रीं माघ शुक्ला षष्ठम्यां श्री विमलनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम स्वयं भेद विज्ञानी, दुनिया कहती है ज्ञानी।
केवल का सूर्य उगाया, तत्पर अनन्त को पाया॥१४॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्णा अमावस्यायां श्री अनंतनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूरणमासी थी दासी, चरणों में आयी प्यासी।
तुम ज्ञान धर्म का दीना, हम अर्घ्य चढ़ा सुख लीना॥१५॥

ॐ ह्रीं पौष शुक्ला पूर्णिमायां श्री धर्मनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरपति सुर अगणित आए, दर्शन पा प्रभु हर्षाए।
नन्दी ने नन्दित कीना, दी शांति सर्व सुख लीना॥१६॥

ॐ ह्रीं पौष शुक्ला दशम्यां श्री शांतिनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वह तिलक वृक्ष भव्यात्मा, कुंथु को किया शुद्धात्मा।
इन्द्रों के परिकर आये, दर्शन से शांती पाये॥१७॥

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला तृतीयां श्री कुंथुनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उस दिव्य ध्वनि की किरणें, निकली भव्यों को तरने।
अरु अरि उन्मूलन कीना, पाया था सौख्य नवीना॥१८॥

ॐ ह्रीं कार्तिक शुक्ला द्वादश्यां श्री अरनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मामृत प्रभु बरसाये, भक्तों के जोड़े आये।
शुभ गन्ध कुटी में राजे, बजते हैं सारे बाजे॥१९॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्णा द्वितीयायां श्री मल्लिनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि दीक्षा जिन हैं देते, कष्टों को सब हर लेते।
श्रावक को व्रत दिलवाये, जो समवशरण में आये॥२०॥

ॐ ह्रीं वैशाख कृष्णा नवम्यां श्री मुनिसुव्रतनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो समवशरण में जावे, सब रोग शोक नश जावे।
यह नमिनाथ की माया, भक्तों को पास बुलाया॥२१॥

ॐ ह्रीं मंगसिर शुक्ला एकादश्म्यां श्री नमिनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम लोका लोक प्रकाशी, होंगे सिद्धालय वासी।
ले लो हमको भी शरणा है, भव सागर से तरना है॥२२॥

ॐ ह्रीं आश्विन शुक्ला प्रतिपदायां श्री नेमिनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो समवशरण में आवें, वो सम अवसर को पावें।
ना छोटे कोई बड़े हैं, रक्षा को पार्श्व खड़े हैं॥२३॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्णा चर्तुदश्यां श्री पार्श्वनाथ केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋजुकूला तट पर आए, आकर के ध्यान लगाये।
केवल का फूल खिलाया, आतम ने आतम पाया॥२४॥

ॐ ह्रीं वैशाख कृष्णा दशम्यां श्री महावीर जिन केवलज्ञान कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य
त्रिभंगी छन्द

प्रभु आतम ध्यानी, केवल ज्ञानी, दोष अठारह दूर किये।
जिन महल बनाया, भक्त भी आया, सबको शरणा आप दिये॥
वृक्षों की गरिमा, आपकी महिमा, सुर-नर मिलकर गाते हैं।
ये भक्त तुम्हारे, चरण पखारे, भक्ती करने आते हैं॥२५॥

ॐ ह्रींचतुर्विंशति तीर्थंकर केवलज्ञान कल्याणकेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोक्ष कल्याणक अर्घ्य
(दोहा)

कर्म किये चकचूर सब, आत्म ध्यान को ध्याय।
माघ कृष्ण चौदस दिना, मुक्ति सुंदरी पाय॥

गीता छन्द

जग की सभी जड़ वस्तुओं से, दूर प्रभु जी हो गये।
दिव्य सुख अरु दिव्य शांति, पाने को मुक्ती गये॥
जय-जय ध्वनि होने लगी, मस्तक सभी झुकने लगे।
औ भव्य जन वैराग्य आया, कर्म को हरने लगे॥

चौपाई

आदिनाथ ने पथ दिखलाया, चलकर भव्यों को बतलाया।
कर्मनाश मुक्ती को पाया, फिर कैलाश को धाम बनाया॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सबेरा॥१॥

ॐ ह्रीं माघ कृष्णा चतुर्दश्यां श्री आदिनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अजितनाथ ने विजय है पायी, मुक्ति सुंदरी लेने आई।
प्रथम मोक्ष सम्मेद से पाया, जिनवर मैं पूजा को आया॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥२॥

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला पंचम्यां श्री अजितनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संभव ने मुक्ती को चाहा, मुक्ती ने उनको बुलवाया।
श्री सम्मेद शिखर अभिलाषी, आप हुए सिद्धालय वासी॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥३॥

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला षष्ठम्यां श्री संभवनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनन्दन का वन्दन करते, कर्म कालिमा को वो हरते।
सिद्धों की श्रेणी में आये, हम सब मिलकर शीश झुकाये॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥४॥

ॐ ह्रीं बैशाख शुक्ला षष्ठम्यां श्री अभिनन्दननाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मति ने उनको सुमति बनाया, मुक्ती का रस्ता दिखलाया।
सिद्धों की पदवी को पाए, हम सब मिलकर शीश झुकाए॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥५॥

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला एकादश्म्यां श्री सुमतिनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चिदानन्द चिद्रूप हुए तुम, निजानन्द शिव भूप हुए तुम।
मुक्ती का घर तुमको भाया, छोड़ी जग की सारी माया॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥६॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णा चतुर्थ्यां श्री पद्मप्रभ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आना-जाना, जाना-आना, किया बन्द सब ताना-बाना।
नाथ सुपारस मुक्त हुए हो, सिद्धालय में जाय बसे हो॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥७॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णा सप्तम्यां श्री सुपार्श्वनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मृत्यु महोत्सव किया आपने, आतम में आतम की जाप ने।
ललित कूट से मोक्ष पधारे, चंदा सबको लगते प्यारे॥

हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥८॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन शुक्ला सप्तम्यां श्री चन्द्रप्रभ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

फूल खिले और मुरझाते हैं, ऐसे ही रिश्ते नाते हैं।
पुष्पदन्त जी ना मुरझाये, जा सम्मेद पे फूल खिलाये॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥९॥

ॐ ह्रीं भाद्रपद शुक्लाष्टम्यां श्री पुष्पदन्तनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

दुष्ट अष्ट से नाता तोड़े, कष्टों के तुम कान मरोड़े।
कर्मों ने ना तुम्हें सताया, श्री सम्मेद से मोक्ष को पाया॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥१०॥

ॐ ह्रीं आश्विन शुक्लाष्टम्यां श्री शीतलनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ती राजा बजायें बाजा, मुक्ती कहती आजा-आजा।
श्री सम्मेद शिखर पर आये, श्री श्रेयांस मुक्ति को पाये॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥११॥

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ला पूर्णिमायां श्री श्रेयांशनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

वासुपूज्य की पूजा कीनी, चरणों में भक्ती धर दीनी।
समता धर वन्दन करते हैं, आतम को चन्दन करते हैं॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥१२॥

ॐ ह्रीं भाद्रपद शुक्ला चतुर्दश्यां श्री वासुपूज्यजिन मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

आवागमन मिटाया स्वामी, सिद्धालय के होकर गामी।
विमल-विमल आतम कर लीना, मुक्ति का सुख जाकर लीना॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥१३॥

ॐ ह्रीं आषाढ़ कृष्णाष्टम्यां श्री विमलनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्तों के आदर्श तुम्हीं हो, भक्तों के भगवान तुम्हीं हो।
गुण अनन्त निज में प्रगटाये, मुक्ती में जा ध्यान लगाये॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥१४॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्णामावस्यायां श्री अनंतनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म धर्म सबसे अच्छा है, आत्म धर्म सबसे सच्चा है।
धर्म-धर्म की ज्योति जगाये, जाकर मुक्ती वास बनाये॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥१५॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्थ्यां श्री धर्मनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाह्य सम्पदा छोड़ी स्वामी, आत्म सम्पदा पाई नामी।
शांति आत्म शांति को पाने, मुक्ती को जा लगे जगाने॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥१६॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ कृष्णा चतुर्दश्यां श्री शांतिनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राग रहित है, द्वेष रहित है, सिद्धालय में वेश रहित है।
कुंथु ज्ञान का तनु है केवल, जिसमें सबसे ज्यादा है बल॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥१७॥

ॐ ह्रीं बैशाख शुक्ला प्रतिपदायां श्री कुंथुनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रिश्तों के नाटक को छोड़ा, अपने तन से भी मुख मोड़ा।
अरह अरि को नष्ट कराए, श्री सम्मेद से मुक्ती पाए॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥१८॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्णामावस्यायां श्री अरनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन होगा वेतन मांगेगा, इन्द्रिय सुख में यह जागेगा।
मात्र ज्ञान के कोष आप हैं, दोष रहित निर्दोष आप हैं॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥१९॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन शुक्ला पंचम्यां श्री मल्लिनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

फाल्गुन कृष्ण द्वादश आई, मुक्ति दिवस मुनिसुव्रत भाई।
श्री सम्मेद ने तुम्हें बुलाया, मुक्ती का रस्ता दिखलाया॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥२०॥

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्णा द्वादश्यां श्री मुनिसुव्रतनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्ती का सुख लिखा न जाये, मुक्ती का सुख पढ़ा न जाये।
नमिनाथ ने मुक्ति पाई, सच्चा सुख आया तब भाई॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥२१॥

ॐ ह्रीं वैशाख कृष्णा चतुर्दश्यां श्री नमिनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ना संताप के शूल हैं चुभते, ना ही कलह के कांटे उगते।
शांति-शांति बस शांती छाई, नेमि ने जब मुक्ती पाई॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥२२॥

ॐ ह्रीं आषाढ शुक्ला सप्तम्यां श्री नेमिनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पारस ने उपसर्ग सहा था, फिर केवल का दीप जला था।
फिर सम्मेद गिरि पर आये, मुक्ति पाने ध्यान लगाये॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥२३॥

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ला सप्तम्यां श्री पार्श्वनाथ मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

कार्तिक कृष्ण अमावस न्यारी, पूरणमासी बन गई प्यारी।
पावापुर से मोक्ष पधारे, अंतिम में भगवान हमारे॥
हम दुखिया हैं कर्म के मारे, संकट सारे हरो हमारे।
मुक्ती में हो जाये बसेरा, जीवन में प्रभु करो सवेरा॥२४॥

ॐ ह्रीं कार्तिक कृष्णामावस्यायां श्री महावीरजिन मोक्ष कल्याणकाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

त्रिभंगी छंद

जिन शक्ति आई, मुक्ति पाई, हम सब मिल हर्षाऐंगे।
करे मुक्ति बसेरा, हुआ सवेरा, अब वापस ना आएंगे॥
प्रभु महिमा तेरी, लघिमा मेरी, भू अम्बर जैसे मिलना।
तुम दिव्य दिवाकर, शांति प्रभाकर, दर्शत भव्यों का खिलना॥२५॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरमोक्षकल्याणकेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा दिव्य पुष्पांजलिः।

जयमाला

दोहा

तीर्थंकर तो तिर गए, तिरेंगे आगत शेष।
भक्ती हम उनकी करें, पाएं ज्ञान विशेष॥

पद्धरि छंद

जय तीर्थंकर जग में महान, उनके चरणों करते प्रणाम।
तीर्थंकर पुरुष है पुरुषोत्तम, पृथ्वी मोती सबसे उत्तम॥
आने से पहले रत्न गिरे, महलों में आकर देव फिरे।
वह धन कुबेर बरसाय रहे, सेवा का अवसर पाय रहे॥
स्वर्गों की लक्ष्मी आई थी, दुल्हन सी वसु सजाई थी
माता की सेवा करने को, देवी आई भव तरने को
मां सोलह स्वप्न दिखाए थे, तीर्थंकर गर्भ में आए थे
उद्याचल रवि थी मीन दोय, सिंहासन और विमान होय
तालाब समुन्दर रत्न भरा, नागेन्द्र भवन रत्नों बिखरा
पति से सुन फल हर्षित होती है, सौभाग्य लिया खुश होती है।
सुर आसन फिर कम्पाय गया, उत्सव को इन्द्र भी आय गया
मति श्रुत अवधी के धारी थे, भक्तों के संकट हारी थे।
शुभ बेला में था जन्म हुआ, बाजे बजते और नाद हुआ।
रत्नों के थाल लुटाए गये, अरु मेघ तुल्य बरसाए गये।
जय-जय के नारे गूंज उठे, देवों के मस्तक स्वयं झुके।
सौधर्म इन्द्र रत्नों के साथ, लेकर आया था नगर नाथ।
शचि बाहर प्रभु को संग लाई, सौधर्म इन्द्र देवे बधाई
सानत ईशान महेन्द्र देव, प्रभु चरणों की जा करें सेव।
ऐरावत हाथी भी आया, प्रभु सेवा करके हर्षाया।
क्षीरो दधि जल लेकर आए, जन्माभिषेक मिल करवाए।
गन्धोदक पा तन-मन पवित्र, प्रभु जी को माना है पवित्र।
स्वयमेव ही कानों छेद पाये, शचि कुण्डल धारण करवाये।
सौधर्म लखे तृप्ती न होय, तब नेत्र सहस से लखा सोय।
उत्सव की क्या बातें करना, मनहर इन्द्रों का मन रमना।

माता को बालक सौंप दिया, सौधर्म ने ताण्डव नृत्य किया।
विद्या गुण वृद्धि खूब हुयी, वो बाल रूप था हर्षमयी।
स्वर्गों से भोजन आता था, आभूषण भी मन भाता था।
सारी सेवा मिल देव करें, पुण्योंदय झोली आय भरें।
राज्याभिषेक सुरगण करते, तब प्रजापती संकट हरते।
वैराग्य उमड़ जब आया था, लौकांतिक वृद्धि कराया था।
तप कल्याणक को इन्द्र आये, संयम मय भाव बना पाये।
तब स्वयं-स्वयंभू हुए आप, दीक्षा से करते दूर ताप।
ना शिष्य बनेगा गुरु बनाये, सामर्थ्यमयी बन देव आये।
तप से कर्मों को नाशा है, केवल का दीप प्रकाशा है।
समभाव धरे सब जीव आय, वह समवशरण जिनवर कहाय।
आठों कर्मों से छूट गये, मुक्ती में जाकर समा गये।
सुर-नर कर करते नमस्कार, फिर से प्रभुदर्श का इन्तजार।
किया अग्नि कुमार ने संस्कार, विधिपूर्वक कीना निर्विकार।
पांचों कल्याणक इन्द्र करे, भव्यों के सारे पाप हरे।
मन वचन काय विधि को मनाय, कल्याणक से कल्याण पाय।
जिस भू का भी स्पर्श किया, तीरथ बन उसने पुण्य दिया।
हो तीर्थ पती हो जगत पती, जग को पाला हो प्रजापति।
कल्याणक तिथियां पूजित हैं, व्रत करके हम भी हर्षित हैं।
''स्वस्ति'' ने जिन गुणगान किया, जिनवर का शुभ सम्मान किया।

दोहा

पुण्यमयी प्रभु की कथा, भव-भव कष्ट नशाय।
पंचकल्याणक पाठ कर, शत्-शत शीष नवाय।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर पंचकल्याणकेभ्य: जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

पंच कल्याणक धर्म के धारक, इन्द्र मना खुश होता हैं।
उत्सव करते कर्म को हरते, बीज मुक्ति का बोता है।
पाठ पूर्णकर, कर्म चूर्णकर, आतम आनन्द पाना है।
मुक्ती में जाऊँ फिर ना आऊँ, जाकर के बस जाना है।

इति आशीर्वाद: परि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अनुबद्ध केवली पूजा

शंभु छन्द

तीर्थंकर के बाद अनेकों, अनुबद्ध केवल पाते
मोक्ष गए, ''अहमिंद्र'' हुए, सौधर्म इन्द्र कुछ बन जाते
तीर्थंकर स्व साथ बहुत, भव्यों के तारण हार बनें
मैं चरणों में हूँ आप प्रभु, मेरे भी पालन हार बनें॥१॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तमुनिसमूह! अत्र अवतर अवर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तमुनिसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तमुनिसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

नाराच छन्द

लोक परलोक बीच आत्माऐं घूमती
जन्म और मृत्यु चक्र, कुण्डली सी झूमती
अनुबद्ध केवली की, भाव से अर्चा करूँ
हो पवित्र आत्मा, यूं आत्म की चर्चा करूँ॥१॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तसाधुभ्य: जलं...।

चंदनादि शीत है जो, ताप को निवारता
शांत हो जगत का दाह, चर्ण में निहारता॥२॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तसाधुभ्य: चंदनं...।

मोतियों से अक्षतान, थाल लेके आ गया
आश पूर्ण हो झुका, मैं भाल लेके आ गया॥३॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तसाधुभ्य: अक्षतं...।

कामनाओं से भरी, जगत की सारी भावना
स्वर्ण पुष्प अर्पणों से, शुद्ध होगी साधना॥४॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तसाधुभ्य: पुष्प...।

भूख-भूख-भूख-भूख, भूख ही सता रही
शान्त हो ये भूख चरु, चर्ण में चढ़ा रहे॥५॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तसाधुभ्यः नैवेद्यं...।

अन्धकार ने ग्रसा है सत्य नाहिं दीखता
दीप का प्रकाश हो तो, धर्म त्याग सीखता॥६॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तसाधुभ्यः दीपं...।

अष्ट कर्म दुष्ट सदा, जीव को भ्रमावते
अष्ट कर्म नाश हेतु, धूप ये चढावते॥७॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तसाधुभ्यः धूपं...।

आत्मा का शुद्ध ध्यान, ज्ञान भी विमल रखा
मुक्ति सौख्य प्राप्ति हेतु, चरणों में ये फल रखा॥८॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तसाधुभ्यः फलं...।

नीर साथ अर्घ्य लेय, नित्य चर्ण को जजूं
पद अनर्घ्य ही मिले, मैं आपको नित ही भजूं॥९॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तसाधुभ्यः अर्घ्यं...।

दोहा

जल, गन्धादि से करी, पूजा बड़ी महान।
पुष्पांजलि नित ही करूं, बारम्बार प्रणाम॥

अनुबद्ध केवली अर्घ्य

दोहा

ज्ञान हुआ केवल जिन्हें, क्रम-क्रम करके जान
अनुबद्ध वे केवली, बारम्बार प्रणाम॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

दोहा

''आदिनाथ'' भगवान के, चौरासी थे संग
अनुबद्ध वे केवली, पाया सौख्य अनंग॥१॥

ॐ ह्रीं ऋषभदेवस्य चतुरशीतिअनुबद्धकेवलिभ्य: अर्घ्यं...।

अनुबद्ध वे केवली, अजित नाथ भगवान
मुक्ति वल्लभ को मेरा, बारम्बार प्रणाम॥२॥

ॐ ह्रीं अजितनाथस्य चतुरशीतिअनुबद्धकेवलिभ्य: अर्घ्यं...।

''संभवनाथ'' के साथ है, अनुपम केवल ज्ञान
इन्द्र देव नर पूजते, बारम्बार प्रणाम॥३॥

ॐ ह्रीं संभवनाथस्य चतुरशीतिअनुबद्धकेवलिभ्य: अर्घ्यं...।

जग में तुम निर्पेक्ष हो, हो आतम सापेक्ष
चरण कमल को पूजते, पाऊं शान्ति जिनेश॥४॥

ॐ ह्रीं अभिनंदननाथस्य चतुरशीतिअनुबद्धकेवलिभ्य: अर्घ्यं...।

''सुमतिनाथ'' भगवान ने, दिया मति का दान
इससे केवल पावते, बारम्बार प्रणाम॥५॥

ॐ ह्रीं सुमतिनाथस्य चतुरशीतिअनुबद्धकेवलिभ्य: अर्घ्यं...।

पद्मप्रभु भगवान ने किया आत्मकल्याण॥
प्रभु चरणों को मैं नमुं पाऊँ आतमज्ञान॥

ॐ ह्रीं पद्मप्रभनाथस्य चतुरशीतिअनुबद्धकेवलिभ्य: अर्घ्यं...।

''सुपार्श्वनाथ'' भगवान का, शुभ वैभव था ज्ञान
आनु पूर्व थे संग में, बारम्बार प्रणाम॥७॥

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथस्य चतुरशीतिअनुबद्धकेवलिभ्य: अर्घ्यं...।

चन्दा सम चमके प्रभु, अनुबद्ध के बीच
कर्म मैल को मेट के, त्यागी सारी कीच॥८॥

ॐ ह्रीं चंद्रप्रभनाथस्य चतुरशीतिअनुबद्धकेवलिभ्य: अर्घ्यं...।

दन्त हुए हैं पुष्प सम, ''पुष्प दन्त'' कहलाए
पाद पद्म पूजूँ सदा, शत-शत शीश झुकाऐं॥९॥

ॐ ह्रीं पुष्पदंतनाथस्य चतुरशीतिअनुबद्धकेवलिभ्य: अर्घ्यं...।

''शीतल'' की छाया मिली, पाप कर्म नसवाय
अनुबद्ध वे केवली, आत्म सम्पदा पाय॥१०॥

ॐ ह्रीं शीतलनाथस्य चतुरशीतिअनुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं...।

श्रेष्ठ ज्ञान अर्जित किया, पुनि-पुनि दीना दान
अनुबद्ध वे केवली, बारम्बार प्रणाम॥११॥

ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथस्य चतुरशीतिअनुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं...।

चरण कमल धरते जहां, स्वर्ण कमल खिल जाये
''वासु पूज्य'' के संग में, अनुबद्ध हैं आए॥१२॥

ॐ ह्रीं वासुपूज्यनाथस्य चतुश्चत्वारिंशत्अनुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

चार घातियाँ नष्ट कर, विमल-विमल बन जाय
नाम मात्र सुमिरन करे, मुक्ति सम्पदा पाय॥१३॥

ॐ ह्रीं विमलनाथस्य चत्वारिंशत्अनुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

अन्तर बल पाया प्रभु, फिर उपदेश बखान
उन्हीं केवली बद्ध को, नत हो करूं प्रणाम॥१४॥

ॐ ह्रीं अनन्तनाथस्य षट् त्रिशंत् अनुबद्ध केवलिभ्यः अर्घ्यं....।

धर्म रत्न को धारते, अनुबद्ध बत्तीस
ज्ञान पुष्प खिलते सदा, तुम्हें नवाऊं शीश॥१५॥

ॐ ह्रीं धर्मनाथस्य षट् त्रिशंत् अनुबद्ध केवलिभ्यः अर्घ्यं....।

''शान्तिनाथ'' के नाम से, आत्म शान्ति मिल जाए
अपने अन्दर जा बसे, अनुबद्ध हैं आए॥१६॥

ॐ ह्रीं शांतिनाथस्य अष्टाविंशतिअनुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

कुंथुनाथ शरणा गही, पाया केवल ज्ञान
भव्य जीव नित आय के, शत-शत करें प्रणाम॥१७॥

ॐ ह्रीं कुंथुनाथस्य चतुर्विंशतिअनुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

चक्रवति की सम्पदा, बने सभी के ईश
आनुबद्ध केवलि हुए, उन्हें नवाऊँ शीश॥१८॥

ॐ ह्रीं अरनाथस्य विंशतिअनुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

मोह कर्म को नाश कर, ''मल्लिनाथ'' कहाए
आनुबद्ध वे केवली, मुक्ति, सुन्दरी पाए॥१९॥

ॐ ह्रीं मल्लिनाथस्य षोडशअनुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

''मुनिसुव्रत'' जिन नाथ के, भामण्डल का तेज
आनुबद्ध केवलि हुए, पाऊं शान्ति जिनेश॥२०॥

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतनाथस्य द्वादशअनुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

''नमिनाथ'' मन से नमन, काटे कर्म कलेश
अनुबद्ध चतु बाद में, पाएं शान्ति विशेष॥२१॥

ॐ ह्रीं नमिनाथस्य अष्टानुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

नार तजे गिरनार जा, हुए ध्यान में लीन
आनुबद्ध केवलि हुए, धर्म बजाई बीन॥२२॥

ॐ ह्रीं नेमिनाथस्य चतुरनुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

''पार्श्वनाथ'' संकट हरे, अनुबद्ध अज्ञान
ज्योति जलाई ज्ञान की, बारम्बार प्रणाम॥२३॥

ॐ ह्रीं पार्श्वनाथस्य त्रयानुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

''महावीर'' भगवान के, गौतम आदि तीन
पंचम काल में मोक्ष जा, कर्म किये थे क्षीण॥२४॥

ॐ ह्रीं महावीरस्वामिनः त्रयानुबद्धकेवलिभ्यः अर्घ्यं....।

त्रिभंगी छन्द

निज आतम सिद्धि, ज्ञान की वृद्धि, कर्म नाश कर मोक्ष गए
फिर हुए केवली, खिली गुण कली, अनुबद्ध शुभ नाम लिए
थी यही श्रृंखला, मुक्ति पथ चला, महावीर तक गमन करे
चरणों में वन्दन, है अभिनन्दन, जीवन अपना चमन करे॥२५॥

दोहा

स्वार्थ नहीं परमार्थ से, प्रभु को किया प्रणाम
तीर्थंकर की शरण में, ले लो सब विश्राम॥२६॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकराणां द्व्यशीत्युत्तरएकादशशतानुबद्धकेवलिभ्यः पूर्णार्घ्यं.
शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

अनुत्तर प्राप्त मुनियों के अर्घ्य

चौपाई

अनुतरों में बसते जाकर, आशिष "आदिनाथ" का पाकर
सिद्धालय है उनका धाम, नित चरणों में करूं प्रणाम॥१॥
ॐ ह्रीं ऋषभदेवस्य अनुत्त्सारप्राप्तविंशतिसहस्त्रमुनिभ्य: अर्घ्यं....।

"अजितनाथ" ने जग को जीता, जीवन में फिर पाई साता
साता लेते साता देते, संकट सारे वे हर लेते॥२॥
ॐ ह्रीं अजितनाथस्य अनुत्तरप्राप्तविंशतिसहस्त्रमुनिभ्य: अर्घ्यं....।

संयम शिष्य अनुत्तर जाए, बीस हजार गणित बतलाए
भव से तुमने किया किनारा, हम भक्तों को मिले सहारा॥३॥
ॐ ह्रीं संभवनाथस्य अनुत्तरप्राप्तविंशतिसहस्त्रमुनिभ्य: अर्घ्यं....।

अभिनंदन का वंदन करते, बारह सहस मुनि नित आय।
अनुत्तरों को प्राप्त किया है, उनके चरणन नमन कराये॥४॥
ॐ ह्रीं अभिनंदननाथस्य अनुत्तरप्राप्तद्वादशसहस्त्रमुनिभ्य: अर्घ्यं....।

"सुमतिनाथ" नाथ ने मति सुधारी, कर्मों की सेना सब हारी
उत्तर देय अनुत्तर जाएं, शत-शत उनको शीश झुकाएं॥५॥
ॐ ह्रीं सुमतिनाथस्य अनुत्तरप्राप्तद्वादशसहस्त्रमुनिभ्य: अर्घ्यं....।

पदम् प्रभु ने शिक्षा दीनी, फिर शिष्यों को दीक्षा दीनी
सभी अनुत्तर भव तन जाएं, चरणों में हम शीश झुकाएं॥६॥
ॐ ह्रीं पद्मप्रभनाथस्य अनुत्तरप्राप्तद्वादशसहस्त्रमुनिभ्य: अर्घ्यं....।

करे "सुपार्श्व" ज्ञान में वृद्धि, ज्ञान से हो जाएगी सिद्धि
सिद्धी उन्हें अनुत्तर भेजें, आकर के हम चरणा पूजें॥७॥
ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथस्य अनुत्तरप्राप्तद्वादशसहस्त्रमुनिभ्य: अर्घ्यं....।

"चन्द्र" प्रभु शिष्यों के चन्दा, शीश झुकाऐ आकर बन्दा
बन्दों का कल्याण किया है, उन्हें अनुत्तर भेज दिया है॥८॥
ॐ ह्रीं चंद्रप्रभनाथस्य अनुत्तरप्राप्तद्वादशसहस्त्रमुनिभ्य: अर्घ्यं....।

''पुष्पदन्त'' सबको महकाऐ, मुरझाया वो चमन खिलाए
शिष्यों को भी फूल बनाया, जाएं अनुत्तर ज्ञान सिखाया॥९॥

ॐ ह्रीं पुष्पदंतनाथस्य अनुत्तरप्राप्तएकादशसहस्त्रमुनिभ्यः अर्घ्यं....।

''शीतल'' प्रभु की निर्मल छाया, छाया पाने भक्त भी आया
धर्म की छाया गए अनुत्तर, दिये सभी प्रश्नों के उत्तर॥१०॥

ॐ ह्रीं शीतलनाथस्य अनुत्तरप्राप्तएकादशसहस्त्रमुनिभ्यः अर्घ्यं....।

श्रेष्ठ वंश ''श्रेयांश'' हुए हैं, श्रेष्ठ सभी को ज्ञान दिये हैं
ज्ञान से सारे उत्तर मिलते, फूल अनुत्तर के भी खिलते॥११॥

ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथस्य अनुत्तरप्राप्तएकादशसहस्त्रमुनिभ्यः अर्घ्यं....।

''वासुपूज्य'' बन वसुधा आए, सुर-नर मिलकर शीश झुकाऐं
कृपा दृष्टि शिष्यों पर कीनी, जाए अनुत्तर सिद्धी लीनी॥१२॥

ॐ ह्रीं वासुपूज्यनाथस्य अनुत्तरप्राप्तएकादशसहस्त्रमुनिभ्यः अर्घ्यं....।

''विमलनाथ'' हैं केवल ज्ञानी, ज्ञानी हैं केवल के दानी
जो भी उनकी शरणा आए, जाए अनुत्तर में बस जाऐं॥१३॥

ॐ ह्रीं विमलनाथस्य अनुत्तरप्राप्तएकादशसहस्त्रमुनिभ्यः अर्घ्यं....।

भव का नहीं दीखता अन्ता, इससे भजता प्रभु ''अनन्ता''
शुभ भावों से नमन करेंगे, और अनुत्तर जाय वरेंगे॥१४॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथस्य अनुत्तरप्राप्तदशसहस्त्रमुनिभ्यः अर्घ्यं....।

''धर्मनाथ'' आगम के ज्ञानी, आगम बिना न ज्ञान कहानी
तुमने ज्ञानी शिष्य बनाए, जो भी शरण आपकी आए॥१५॥

ॐ ह्रीं धर्मनाथस्य अनुत्तरप्राप्तदशसहस्त्रमुनिभ्यः अर्घ्यं....।

''शान्तिनाथ'' शान्ति के दाता, पूजे चरण मिलेगी साता
जिन भक्तों ने तुमको ध्याया, आत्म शान्ति को निश्चित पाया॥१६॥

ॐ ह्रीं शांतिनाथस्य अनुत्तरप्राप्तदशसहस्त्रमुनिभ्यः अर्घ्यं....।

''कुंथु'' जीव की रक्षा करते, संकट सारे पल में हरते
कर्म कटे मुक्ति पा जाए, पाऐं अनुत्तर शीश झुकाऐं॥१७॥

ॐ ह्रीं कुंथुनाथस्य अनुत्तरप्राप्तदशसहस्त्रमुनिभ्यः अर्घ्यं....।

''अरहनाथ'' ने अरि को नाशा, केवल ज्ञान हुआ था वासा
और सभी भक्तों ने ध्याया, मिला अनुत्तर शीश झुकाया॥१८॥
ॐ ह्रीं अरनाथस्य अनुत्तरप्राप्तदशसहस्त्रमुनिभ्य: अर्घ्यं....।
''मल्लिनाथ'' ने हर मल धोया, बीज मुक्ति का खुद ही बोया
वृक्ष बना मुक्ति फल पाया, गये अनुत्तर तेरी माया॥१९॥
ॐ ह्रीं मल्लिनाथस्य अनुत्तरप्राप्तअष्टसहस्त्राष्टशतमुनिभ्य: अर्घ्यं....।
''मुनिसुव्रत'' शुभ व्रत ही देते, शिष्यों को सम तुम कर लेते
महाव्रतों को पूर्ण किया है, पायें अनुत्तर ध्यान लिया है॥२०॥
ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतनाथस्य अनुत्तरप्राप्तअष्टसहस्त्राष्टशतमुनिभ्य: अर्घ्यं....।
''नमिनाथ'' गुण के भंडारी, सभी प्रतिज्ञा तुमने धारी
नियम धरम को पूरा करते, शिष्य अनुत्तर में जा बसते॥२१॥
ॐ ह्रीं नमिनाथस्य अनुत्तरप्राप्तअष्टसहस्त्राष्टशतमुनिभ्य: अर्घ्यं....।
''नेमीनाथ'' हैं करुणा नन्दन, शीश झुका मैं करता वन्दन
शिष्य अनुत्तर करते वासा, मेरी पूरी हो अभिलाषा॥२२॥
ॐ ह्रीं नेमिनाथस्य अनुत्तरप्राप्तअष्टसहस्त्राष्टशतमुनिभ्य: अर्घ्यं....।
''पार्श्वनाथ'' समता के धारी, पारस रक्षा करे तुम्हारी
शिष्यों को शरणा में लीना, दिया अनुत्तर ज्ञान नवीना॥२३॥
ॐ ह्रीं पार्श्वनाथस्य अनुत्तरप्राप्तअष्टसहस्त्राष्टशतमुनिभ्य: अर्घ्यं....।
वीरा यह संदेश सुनाऐं, धर्म अहिंसा ध्वज फहराएं
वीरा हैं सच्चे गुण ज्ञानी, गए अनुत्तर सुन जिन वाणी॥२४॥
ॐ ह्रीं महावीरस्वामिन: अनुत्तरप्राप्तअष्टसहस्त्राष्टशतमुनिभ्य: अर्घ्यं....।

शम्भु छन्द

है विजय जयन्त अजेय अमिट, स्वारथ सिद्धि आदि जग में
यह पाँच अनुत्तर मुक्ति के, पाता जो जाता शिव मग में॥
चौबिस जिनवर के शिष्यों ने, निज आतम ज्ञान लिया प्यारा
स्वर्गों को पाकर के क्रम से, पाया मुक्ति का घर न्यारा।

दोहा

सुविधाओं से दूर तुम, निजानन्द लिये पाय
आतम सम्पत्ति मिले, शत-शत शीश नवाय॥२५॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकराणां अनुत्तरप्राप्तद्विलक्षसप्तसप्ततिसहस्त्राष्टशतमुनिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

मुक्ति प्राप्त मुनियों के अर्घ्य

चाल छन्द

जय ''ऋषभ देव'' बलिहारी, तेरी शोभा है न्यारी
शिष्यों संग मुक्ति जाऐं, हम शत-शत शीश झुकाएं॥१॥

ॐ ह्रीं ऋषभदेवस्य सिद्धपदप्राप्तषष्टिसहस्त्रनवशतयतिभ्य: अर्घ्यं....।

यह अशुभ नरक ले जाता, शुभ स्वर्गों में भरमाता
तुम शुद्ध भाव को पाया, मुक्ति का रास रचाया॥२॥

ॐ ह्रीं अजितनाथस्य सिद्धपदप्राप्तसप्तसप्ततिसहस्त्रएकशतयतिभ्य: अर्घ्यं...।

अन्तिम भव ''संभव'' धारा, और भव से किया किनारा
शिष्यों को पास बिठाया, मुक्ति का मार्ग बताया॥३॥

ॐ ह्रीं संभवनाथस्य सिद्धपदप्राप्तएकलक्षसप्ततिसहस्त्रएकशतयतिभ्य: अर्घ्यं....।

''अभिनन्दन'' वन्दन कीना, पाया था सौख्य नवीना
अध्यात्म ध्यान जब साधा, मुक्ति में कैसी बाधा॥४॥

ॐ ह्रीं अभिनंदननाथस्य सिद्धपदप्राप्तद्विलक्षअशीतिसहस्त्रएकशतयतिभ्य: अर्घ्यं....।

चिन्तन आतम का करते, अरू ध्यान ''सुमति'' का धरते
उत्थान मार्ग था पाया, मुक्ति वधु तुम्हें बुलाया॥५॥

ॐ ह्रीं सुमतिनाथस्य सिद्धपदप्राप्तत्रिलक्षषोडशशतयतिभ्य: अर्घ्यं....।

स्वर्गों का बन्धन तोड़ा, जग से ही मुखड़ा मोड़ा
''पद्मा'' के शिष्य कहाए, भक्ति कर मुक्ति पाऐं॥६॥
ॐ ह्रीं पद्मप्रभनाथस्य सिद्धपदप्राप्तत्रिलक्षचतुर्दशसहस्त्रयतिभ्यः अर्घ्यं....।
बेड़ी पग आन पड़ी है, इच्छा मन बांध खड़ी है
तन-मन से ध्यान किया है, मुक्ति को जीत लिया है॥७॥
ॐ ह्रीं सुपार्श्र्वनाथस्य द्विलक्षपंचाशीतिसहस्त्रषट्शतयतिभ्यः अर्घ्यं....।
चन्दा ने चन्दा देखा, मुक्ति की पाई रेखा
''चन्दा'' मुक्ति ले आए, मुक्ति का सौख्य दिखाऐं॥८॥
ॐ ह्रीं चंद्रप्रभनाथस्य सिद्धपदप्राप्तद्विलक्षचतुस्त्रिंशत्सहस्त्रयतिभ्यः अर्घ्यं....।
''सुविधि'' ने विधि बतलाई, मुक्ति की अलख जगाई
सब शिष्य मुक्ति पा जाए, हम शत-शत शीश नवाएं॥९॥
ॐ ह्रीं पुष्पदंतनाथस्य सिद्धपदप्राप्तएकलक्षएकोनाशीतिसहस्त्रषट्शतयतिभ्यः अर्घ्यं....।
शीतल का फल भी शीतल, शीतल का हल भी शीतल
''शीतल'' मुक्ति को पाऐं, हम शत-शत शीश झुकाऐं॥१०॥
ॐ ह्रीं शीतलनाथस्य सिद्धपदप्राप्तशीतिसहस्त्रषट्शतयतिभ्यः अर्घ्यं....।
जो श्रेष्ठ विषय के ज्ञानी, ''श्रेयांश नाथ'' के ध्यानी
मुक्ति का पद अपनाया, मुनियों को संग लगाया॥११॥
ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथस्य सिद्धपदप्राप्तपंचषष्टिसहस्त्रषट्शतयतिभ्यः अर्घ्यं....।
वसुधा में तुम पूजित हो, चम्पा में तुम गूंजित हो
श्री ''वासुपूज्य'' को ध्यावें, मुनियों के चरण धुलावें॥१२॥
ॐ ह्रीं वासुपूज्यनाथस्य सिद्धपदप्राप्तचतुः पंचाशत्सहट्षट्शतयतिभ्यः अर्घ्यं..।
राजे-महाराजे आते, चरणों में शीश झुकाते
मुनिवर संग मोक्ष को पाया, हमने भी शीश नवाया॥१३॥
ॐ ह्रीं विमलनाथस्य सिद्धपदप्राप्तएकपंचाशत्सहस्त्रत्रिशतयतिभ्यः अर्घ्यं....।
रस अध्यातम का पीते, हर पल आतम में जीते
शाश्वत मुक्ति को पाया, मुनियों को मोक्ष दिलाया॥१४॥
ॐ ह्रीं अनंतनाथस्य सिद्धपदप्राप्तएकपंचाशत्सहस्त्रयतिभ्यः अर्घ्यं....।

हैं नरक कष्ट के बन्धन, दिन-रात वहां है क्रन्दन
गतियों के जाल से छूटे, कर्मों के बन्धन टूटे॥१५॥
ॐ ह्रीं धर्मनाथस्य सिद्धपदप्राप्तएकोनपंचाशत्सहस्त्रसप्तशतयतिभ्य: अर्घ्यं....।
चैतन्य आत्मा पाई, कर्मों की फौज भगाई
शान्ति का अमृत पाया, श्री ''शान्तिनाथ'' गुण गाया॥१६॥
ॐ ह्रीं शांतिनाथस्य सिद्धपदप्राप्तअष्टचत्वारिंशित्सहस्त्रचतु:शतयतिभ्य: अर्घ्यं..।
आतम में दृष्टि धरते, तुम शिष्यों को भी वरते
शिष्यों का भाग्य जगाया, मुक्तिपुर को भिजवाया॥१७॥
ॐ ह्रीं कुंथुनाथस्य सिद्धपदप्राप्तषट्चत्वारिंशित्सहस्त्रअष्टशतयतिभ्य: अर्घ्यं...।
तुम काम-क्रोध को चूरा, शाश्वत सुख पाया पूरा
जय ''अरहनाथ'' जिन स्वामी, दुख मेटो अन्तर्यामी॥१८॥
ॐ ह्रीं अरनाथस्य सिद्धपदप्राप्तसप्तत्रिंशत्सहस्त्रद्विशतयतिभ्य: अर्घ्यं....।
भौतिक उपलब्धि त्यागी, निज आतम ज्योति जागी
तुम आत्म धाम को पाया, मुनियों को सौख्य दिलाया॥१९॥
ॐ ह्रीं मल्लिनाथस्य सिद्धपदप्राप्तअष्टाविंशतिसहस्त्रअष्टशतयतिभ्य: अर्घ्यं..।
सारी सम्पत्ती त्यागी, विषयों से हुए विरागी
संग शिष्यों को भी पाया, मुक्ति ने तुम्हें बुलाया॥२०॥
ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतनाथस्य सिद्धपदप्राप्तएकोनविंशतिसहस्त्रद्विशतयतिभ्य: अर्घ्यं.।
क्षमता से समता आई, वैराग्य हुआ सुखदाई
बासठ सौ संग में मुनिवर, गए मोक्ष हमारे गुरुवर॥२१॥
ॐ ह्रीं नमिनाथस्य सिद्धपदप्राप्तअष्टसहस्त्रयतिभ्य: अर्घ्यं....।
''राजुल'' का कुल था सुन्दर, वैरागी बना समुन्दर
शुद्धोपयोग को पाया, मुक्ति में ध्यान लगाया॥२२॥
ॐ ह्रीं नेमिनाथस्य सिद्धपदप्राप्तनवसहस्त्रषट्शतयतिभ्य: अर्घ्यं....।
पारस ने रस बरसाया अमृत का पान कराया।
अमृत से अमृता आई, सिद्धों की पदवी पाई॥२३॥
ॐ ह्रीं पार्श्वनाथस्य सिद्धपदप्राप्तषष्टिसहस्त्रद्विशतयतिभ्य: अर्घ्यं....।

हे ''महावीर'' जिन स्वामी, आतम मय अन्तर्यामी
मुक्ति का द्वारा पाया, आतम में ध्यान लगाया॥२४॥

ॐ ह्रीं महावीरस्वामिन: सिद्धपदप्राप्तचतुश्चत्वारिंशत्शातयतिभ्य: अर्घ्यं....।

शम्भु छन्द

श्री ''ऋषभ'', ''अजित'', ''सम्भव'' संग में, केवल ज्ञानी बन मोक्ष गए
पाई तीर्थंकर की शरणा, मुक्ति में सारा सौख्य बहे
संसर्ग प्रभु का जिसे मिले, सौभाग्य उसी का होता है
बाकी सब जग में घूम रहे, वो बीज मुक्ति का बोता है

दोहा

चौबीसों जिनराज जी, हमको दो वरदान
चरण शरण में आ गए, मिले मुक्ति का दान॥२५

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकराणां सिद्धपदप्राप्तचतुर्विंशतिलक्षचतु:षष्टिसहस्त्रचतु:
शतकयतिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।
शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

सौधर्म से ग्रैवेयक तक प्राप्त हुए मुनियों के अर्घ्य

दोहा

भरत बाहुबलि के पिता, भक्तों के भगवान
सौधर्मादिक भेजते, किया भव्य कल्याण॥१॥

ॐ ह्रीं ऋषभदेवस्य स्वर्गादिग्रैवेयकप्राप्तत्रयसहस्त्रएकशतसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

कष्ट परीषह जीत कर, ''अजित नाथ'' कहलाये
सौधर्मादिक स्वर्ग पा, जीव सभी हर्षाये॥२॥

ॐ ह्रीं अजितनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकांतप्राप्तद्विसहस्त्रनवशतसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

संभव ज्ञान की ज्योति ले, भव्यों को दें राह
सौधर्मादिक स्वर्ग पा, करें मुक्ति की चाह॥३॥

ॐ ह्रीं संभवनाथस्य स्वार्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तनवसहस्त्रनवशतसाधुभ्य: अर्घ्यं...।

आनन्दित सब जीव हों, ''अभिनन्दन'' वरदान
सौधर्मादिक में गए, बारम्बार प्रणाम॥४॥

ॐ ह्रीं अभिनंदननाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तसप्तसहस्त्रनवशतसाधुभ्यः अर्घ्यं...।

होय हिमाचल सम प्रभु, आए बहु उपसर्ग
''सुमतिनाथ'' वन्दन करें, दूर होंय (सब वर्ग)॥५॥

ॐ ह्रीं सुमतिनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तत्रिलक्षषोडशशतयतिभ्यः अर्घ्यं....।

तीन लाख चौदह सहस ''पद्मप्रभु'' के शिष्य
पूजत निज गुण सम्पदा लिया मुक्ति पद नित॥६॥

ॐ ह्रीं पद्मप्रभनाथस्य सिद्धपदप्राप्तत्रिलक्षचतुर्दशसहस्त्रयतिभ्यः अर्घ्यं....।

अमिट, अतुल अनुभूति पा, अमृत दिया लुटाय
सौधर्मादिक स्वर्ग पा, भक्त रहे हर्षाय॥७॥

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तचतुर्विंशतिश्यातसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

श्वेत वर्ण था चन्द्र सम, ''चन्द्र'' प्रभु भगवान
सौधर्मादिक भेजते, भक्त पाऐं जिन ज्ञान॥८॥

ॐ ह्रीं चंद्रप्रभनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तचतुःसहस्त्रसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

रंग रहित होकर प्रभो, सुन्दरता का ताज
सौधर्मादिक भेजते, निज आतम का राज॥९॥

ॐ ह्रीं पुष्पदंतनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तनवसहस्त्रचतुःशतसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

साधन पाए साध्य को, करत-करत पुरुषार्थ
''शीतल'' जिन शांतिमयी, पाया स्वयं निजार्थ॥१०॥

ॐ ह्रीं शीतलनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तचतुरशीतिशतसाधुभ्यः अर्घ्यं...।

श्रेष्ठ शिष्य पाए बहुत, श्रेष्ठ दिया था ज्ञान
सौधर्मादिक वे गए, बारम्बार प्रणाम॥११॥

ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तसप्तसहस्त्रचतुः शतसाधुभ्यः अर्घ्यं....।

वसुधा भी खुश हो गई, ''वासु पूज्य'' को पाय
शिष्यों को अनुगमन दे, स्वर्ग दिया भिजवाय॥१२॥

ॐ ह्रीं वासुपूज्यनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तचतुःषष्टिशतसाधुभ्यः अर्घ्यं...।

करें कीर्तन जिन देव का, ''विमलनाथ'' भगवान
''विमलनाथ'' साधु भए, पाए अतुलित ज्ञान॥१३॥

ॐ ह्रीं विमलनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तपंचसहस्त्रसप्तशतसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

विचलित पथ से ना हुए, हुआ कभी उपसर्ग
शिष्य शान्तिमय थे सभी, बने आपके वर्ग॥१४॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तपंचसहस्त्रसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

दश धर्मों के बाग के, माली आप कहाए
''धर्म नाथ'' प्रभु आपने, शिष्य स्वर्ग भिजवाए॥१५॥

ॐ ह्रीं धर्मनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तत्रिचत्वारिंशत्‌शतसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

अचल हिमाचल से खड़े, ''शांतिनाथ'' भगवान
धर्मामृत सबको दिया, बारम्बार प्रणाम॥१६॥

ॐ ह्रीं शांतिनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तषट्‌त्रिंशत्‌शतसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

अभिप्राय को जानकर, शिष्यों बांटा ज्ञान
बारम्बार प्रणाम हे, कुंथुनाथ भगवान॥१७॥

ॐ ह्रीं कुंथुनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तद्वात्रिंशत्‌शतसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

कंपित आसन हो गए, पाया केवल ज्ञान
कर्मों को कंपाय के, भेजा उच्च स्थान॥१८॥

ॐ ह्रीं अरनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तअष्टाविंशतिशतसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

गुण धर, गणधर हो तुम्ही, ''मल्लिनाथ'' जिनराज
मुनि दीक्षा देकर प्रभु, पहनाया सिर ताज॥१९॥

ॐ ह्रीं मल्लिनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यकप्राप्तचतुर्विंशतिशतसाधुभ्य: अर्घ्यं...।

संयम व्रत देते तुम्ही, देते हो सद्ज्ञान
''मुनिसुव्रत'' मणिव्रत दिये, बारम्बार प्रणाम॥२०॥

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यप्राप्तद्विसहस्त्रसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

''नमिनाथ'' आशीष में, शिष्यों को वरदान
इक दिन मुक्ति जाऐंगे, बारम्बार प्रणाम॥२१॥

ॐ ह्रीं नमिनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तषोडशशतसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

हुए मुक्त संसार से, प्रतिवाद से दूर
शिष्यों को आश्रय दिया, कर्म किये चक चूर॥२२॥

ॐ ह्रीं नेमिनाथस्य स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तद्वादशशतसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

दुख सहने की शक्ति दो, हे ''पारस'' भगवान
मोक्ष मार्ग पर हम चलें, ऐसा दे दो ज्ञान॥२३॥

ॐ ह्रीं पार्श्वनाथस्य स्वार्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तएकसहस्त्रसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

ज्योति जले तव तेज की, फैले दिव्य प्रकाश
स्वर्ग, मोक्ष देते रहो, यही हमारी आस॥२४॥

ॐ ह्रीं महावीरस्वामिन: स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तअष्टशतसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य (शम्भु छन्द)

तीर्थंकर की शरणा रहकर, मुनिपद का पालन करते हैं
वे चारित्र मूलगुण परिषह, सह सब दुष्ट करम को हरते हैं
अन्तिम क्षण तक प्रभु नाम रहे, हृदय में मेरे बस जाओ
चरणों में आकर बैठे, हृदय में आन समा जाओ।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकराणां स्वर्गादिग्रैवेयकपर्यंतप्राप्तएकलक्षपंचसहस्त्रअष्टशत-साधुभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

दश दश बैठे केवली, सहे कठिन उपसर्ग।
उनके चरणन मैं नमूं, पाऊँ गुण का स्वर्ग॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थकालेषु दशदशघोरोपसर्गविजयिअंतकृतकेवलिभ्य: पूर्णार्घ्यं.....।

महापूर्णार्घ्य

हर तीर्थंकर की अवधि में, दश-दश मुनिवर उपसर्ग हुए
उस घोर उपद्रव को सहकर, मुनिजन भी सब अपवर्ग हुए
ऐसे मुनि जन के चरणों में, हम बारम्बार प्रणाम करें
निज आत्म भक्ति हम भी, पाएं मुक्ति में जाकर वास करें॥२६॥

दोहा

प्रत्येक तीर्थंकर के समय, उपसर्ग मुनिपर होता है।
पंचानुत्तर में जन्म धार, कर्मों के बन्धन खोता है॥

दश-दश पे उपसर्ग हो, स्वर्ग सभी वे जायें।
पूजा हम उनकी करें, सब उपसर्ग नशायें।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरतीतीर्थकालेषु दशदशदारुणोपसर्गविजयिअनुत्तरौपादिक-मुनिभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

जाप्य-ॐ ह्रीं समवसरणपद्मसूर्यवृषभादिवर्द्धमानान्तेभ्यो नम:।

जयमाला

दोहा

तीर्थंकर के शिष्य को, मिला अतुल अनुराग
तीर्थंकर से गुरु मिले, जाग गया सौभाग्य।।१।।

छन्द शेर चाल-हे दीन बन्धु....

इस लोक में परलोक में, प्रभु ध्यान तुम्हारा
मैं भक्ति करुं पूजा में, गुणगान तुम्हारा
श्री ''आदिनाथ'' देव ने, शिष्यों को बनाया
महावीर ने शिष्यों को, मुक्ति धाम दिखाया।।१।।
चौबीस जिनके काल में भव्यों ने सुख लिया
वे स्वर्ग गये मोक्ष में विश्राम ले लिया
भक्तों ने शिष्य बनके प्रभु, गीत जो गाए
भगवान ने भक्तों के सभी दु:ख मिटाए।।२।।
शिक्षा को लेके शिष्य ज्ञान ध्यान भी करें
वे पालकर महाव्रतों को दान भी करें
जाकर के पर्वतों पे महायोग भी किया
सरिता के तट खड़े-खड़े परिषह भी सह लिया।।३।।
उपसर्ग को वे मौन धार कर सभी सहते
पत्थर गिरे या बरसे आग कुछ नहीं कहते
बस एक चाह मुक्ति की उनकी सदा रहती
नित आत्म ध्यान धरते, ज्ञान धार भी बहती।।५।।

पहले तो ध्यान में उन्होंने देव को ध्याया
फिर धीरे-धीरे आत्मा में ध्यान लगाया
मुनिराज कभी वन में, कभी गांव भी जाते
श्रावक जनों की श्रद्धा का आहार भी पाते॥५॥
उन जंगलों में सर्प, सिंह हाथी बहुत थे
पर आपके तप-तेज के आगे सभी झुके
सुनसान या श्मशान में भी ध्यान लगाया
निज ध्यान से ही शुद्ध आत्मा को जगाया॥६॥
अध्यात्म के चिन्तन को सार्वजनिक बनाया
उपलब्ध हो सभी को ज्ञान, ध्यान सिखाया
निस्वार्थ होके तपस्या निष्काम नित करें
वे वीतराग संत महा ज्ञान को धरें॥७॥
वे ''ऋद्धि-सिद्धि'' नाथ जहां भी चले जाते
दुर्भिक्ष कलह दूर, भक्त शांति को पाते
फल-फूल हर ऋतु के एक साथ में आते
दर्शन की लालसा से सभी शीश झुकाते॥८॥
वन्दन करूं हे नाथ, सदा ही मैं तुम्हारा
चरणों में आ गया प्रभु अब दे दो सहारा
मैं जन्म-मृत्यु नाश निज के सौख्य को पाऊं
फिर मुक्ति में जाकर कभी ना लौट के आऊं॥९॥

दोहा

जय-जय हो मुनिराज की, जय-जय हो जिनराज
विजय तुम्हारी हो गयी, कर्म गए सब भाग
भक्ति भाव से है किया, हमने यह शुभ पाठ
दुख संकट सारे कटें, होवें सारे ठाठ

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थेषु अनुबद्धकेवलिस्वर्गापवर्गप्राप्तसाधुभ्य:जयमाला पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

तीर्थ प्रवर्तन काल पूजा

गीता छंद

जब धर्म का होता प्रवर्तन, कुल प्रभु का चालता
आर्यिका, मुनिराज, श्रावक, धर्म को नित पालता
जितने मुनिवर कर्म तज, उस काल में मुक्ति गए
हम करते हैं आह्वान उनका, सिद्ध पदवी पा गए

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिसाधुसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिसाधुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठःठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिसाधुसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधीकरणं।

भुजंग प्रयात

नरेन्द्र - फणीन्द्रं सुरेन्द्रं अधीशं......

जनम-मृत्यु जाला, है हमको फंसाए
प्रभु इनसे छूटें, हैं जल लेके आए
ये स्वर्गों के रंगीन, सुख ना लुभाएं
हम अध्यात्म पाने, शरण तेरी आएं ॥१॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिसाधुभ्य: जलं.....

संसार के सौख्य, ताप बढाऐं
हो चन्दन से वन्दन, तो संताप ये
ये स्वर्गों के रंगीन, सुख ना लुभाएं
हम अध्यात्म पाने, शरण तेरी आएं ॥२॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिसाधुभ्य: चंदनं.....

पदों की रही है, सदा चाह मुझको
न अक्षय पदों की, है अभिलाष मुझको

ये स्वर्गों के रंगीन, सुख ना लुभाएं
हम अध्यात्म पाने, शरण तेरी आएं ॥३॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिसाधुभ्य: अक्षतं.....

कहूँगा प्रभु मैं, तेरे द्वार आके
मैं पुष्पों से पूजा, बताऊं रचा के
ये स्वर्गों के रंगीन, सुख ना लुभाएं
हम अध्यात्म पाने, शरण तेरी आएं ॥४॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिसाधुभ्य: पुष्पं.....

अध्यात्म का ज्ञान, है आत्म भोजन
नहीं कोई रसना, रसों से प्रयोजन
ये स्वर्गों के रंगीन, सुख ना लुभाएं
हम अध्यात्म पाने, शरण तेरी आएं ॥५॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिसाधुभ्य: नैवेद्यं.....

प्रभु दीप पूजा मोह को साती
इसीलिए दीपक से करते हैं आरती
ये स्वर्गों के रंगीन, सुख ना लुभाएं
हम अध्यात्म पाने, शरण तेरी आएं ॥६॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिसाधुभ्य: दीपं.....

प्रभु तेरी पूजा, करम को नशाती
नहीं ये कषायों, के कारण सुहाती
ये स्वर्गों के रंगीन, सुख ना लुभाएं
हम अध्यात्म पाने, शरण तेरी आएं ॥७॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिसाधुभ्य: धूपं.....

फल की ही चाहत, ने पूजा कराई
वो निष्काम भक्ति, कभी भी न भायी
ये स्वर्गों के रंगीन, सुख ना लुभाएं
हम अध्यात्म पाने, शरण तेरी आएं ॥८॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिसाधुभ्य: फल.....

अर्घ्यों का अमृत, चढ़ाने को आया
प्रभु भाव पूजा, बढ़ाने को आया
ये स्वर्गों के रंगीन, सुख ना लुभाएं
हम अध्यात्म पाने, शरण तेरी आएं ॥१॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिसाधुभ्य: अर्घ्यं.....

दोहा

तीर्थ काल पूजा करूँ, काल पवित्रम् जान
तीर्थंकर के काल में, और करूँ व्याख्यान

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

प्रत्येक अर्घ्य

शंभु छन्द

सम्यग्दर्शन चर्चा करता, ना जीवन में आ पाता है।
श्रद्धा, भक्ति, पूजा संयम् ही, भेद ज्ञान करवाता है॥
श्री ''आदिनाथ'' जिन आदि का, लाखों वर्षों तक काल चला।
उस काल को हम मन से पूजें, जिस काल का संकट आन टला॥१॥

ॐ ह्रीं ऋषभदेवस्य पंचाशल्लक्षकोटिसागरएकपूर्वांगतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुत-केवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

श्री ''अजितनाथ'' ने जग जीता, कर्मों की सेना हारी है।
उस समय नहीं थे हम भगवन, पर आज हमारी है बारी॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ, वह घड़ी बड़ी उत्कृष्ट हुई।
अध्यात्म साधना की झांकी, अन्तर्मन से आकृष्ट हुई जिस घड़ी॥२॥

ॐ ह्रीं अजितनाथस्य त्रिंशल्लक्षकोटिसागरएकपूर्वांगतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुत-केवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

श्री ''संभवनाथ'' ने जग जीता, कर्मों की सेना हारी है।
उस समय नहीं थे हम भगवन, पर आज हमारी है बारी॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ.......................................॥३॥

ॐ ह्रीं संभवनाथस्य दशलक्षकोटिसागरएकपूर्वांगतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुत-केवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

अभिनंदन शुद्ध समय पाकर, भव सागर से ही पार हुए।
हम पर भी कृपा करो भगवन, हमने नित आकर चरण छुए॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ......................................॥४॥

ॐ ह्रीं अभिनन्दनतीर्थंकरस्य नवलक्षकोटिसागरचतु:पूर्वांगतीर्थप्रवर्तनकाल-केवलिश्रुतकेवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

है मति सुधारी कुमति की, हर कुमति को सुमति बनाया है।
वह क्षण कितना ही पावन है, जिसने पाई तुम छाया है॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ......................................॥५॥

ॐ ह्रीं सुमतिनाथस्य नवतिसहस्रकोटिसागरचतु:पूर्वांगतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुत-केवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

भूमण्डल में भुवनेश्वर में, तुमसा न्यारा तो कोई नहीं।
पदमा सब जग के प्यारे हैं, इतना प्यारा तो कोई नहीं॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ......................................॥६॥

ॐ ह्रीं पद्मप्रभनाथस्य नवसहस्रकोटिसागरचतु:पूर्वांगतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुत-केवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

पावनता से पावन होती, धरती की ये सुन्दर माटी।
तव नमूँ सुपारस नाथ प्रभु, सब कर्मों की बेड़ी काटी॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ......................................॥७॥

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथस्य नवशतकोटिसागरचतु:पूर्वांगतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुत-केवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

सब चेतन और अचेतन को, चन्दा उजियारा देता है।
तुम सदा चमकते चन्दा हो, आतम का तम हर लेता है॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ......................................॥८॥

ॐ ह्रीं चंद्रप्रभनाथस्य नवतिकोटिसागरचतु:पूर्वांगतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुत-केवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

जीवन की दिशा बदल डाली, अवलम्बन धर्म तुम्हारा है।
पुष्पों सम महके तुम जग में, खुशबू का हमें सहारा है॥

जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ...॥९॥

ॐ ह्रीं पुष्पदंतनाथस्य पल्यचतुर्थांशअष्टाविंशतिपूर्वांगहीनएकलक्षवर्षाधिकनव-कोटिसागरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुतकेवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

सिद्धालय का संयम साधन, साधन चारित्र निभाना है।
''शीतल'' ने धारा संयम को, फिर ना ही कोई बहाना है॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ...॥१०॥

ॐ ह्रीं शीतलनाथस्य अर्धपल्यशतसागरन्यूनएककोटिसागरषट्षष्टिलक्षषट्विंशति-सहस्रवर्षन्यूनपंचविंशतिसहस्रवर्षपूर्वतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुतकेवलिआचार्योपाध्या-यसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

निश्चय से आतम में रमना, आतम का मूल स्वभाव कहा।
आतम जग में है सर्वश्रेष्ठ, ''श्रेयांस नाथ'' का भाव रहा॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ...॥११॥

ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथस्य पादोनपल्यहीनएकविंशतिलक्षवर्षअधिकचतु:पंचाशत्सागर-तीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुतकेवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

मुक्ति पथ कदम बढ़ा करके, फिर ''वासु पूज्य'' ने तप कीना।
चम्पा नगरी तुमको प्यारी, निर्वाण वहीं से पा लीना॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ...॥१२॥

ॐ ह्रीं वासुपूज्यनाथस्य एकपल्यहीनत्रिंशत्सागरचतु:पंचाशल्लक्षवर्षतीर्थप्रवर्तन-कालकेवलिश्रुतकेवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

लम्बी है जीवन की घटना, कल्याणक से कल्याण किया।
हे ''विमलनाथ'' अन्तर्यामी, तारो मुझको ना जाय जिया॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ...॥१३॥

ॐ ह्रीं विमलनाथस्य पादोनपल्यहीननवसागरपंचदशलक्षवर्षतीर्थप्रवर्तनकालकेवलि-श्रुतकेवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

मुक्ति पथ राही बन करके, कदमों को पीछे ना कीना।
हम पद चिन्हों पर चलते हैं, अब संयम मय जीवन जीना॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ...॥१४॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथस्य अर्धपल्योनचतु:सागरसप्तलक्षपंचाशत्सहस्रवर्षतीर्थप्रवर्तन-कालकेवलिश्रुतकेवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

ज्ञाता हो आतम के भगवन, तुम सिद्ध शिला के ध्यानी हो।
हे ''धर्म नाथ'' भगवान सुनो, तुम ही तो सच्चे दानी हो॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ....................................॥१५॥

ॐ ह्रीं धर्मनाथस्य एकपल्यहीनत्रयसागरद्विलक्षपंचाशत्सहस्त्रवर्षतीर्थप्रवर्तनकाल-केवलिश्रुतकेवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

बुद्धि के ज्ञानी बहुत मिले, पर आतम ज्ञानी कोई नहीं।
क्रांति के दानी हैं अनेक, शांति के दानी आप सही॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ....................................॥१६॥

ॐ ह्रीं शांतिनाथस्य अर्धपल्यद्वादशशतपंचाशत्वर्षतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुत-केवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

बंधन से आप विमुक्त हुए, बंधन में संसारी रहता।
हे कुंथुनाथ भगवान प्रभु, मैं भी अपने दुखड़े कहता॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ....................................॥१७॥

ॐ ह्रीं कुंथुनाथस्य नवार्बुदनवनवतिकोटिनवनवतिलक्षसप्तनवतिसहस्त्रद्विशतपंचा-शत्वर्षहीनपल्यचतुर्थभागतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुतकेवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

बलवानी हूँ पर दीन हीन, कैसे मैं ध्यान में जाऊँगा।
आतम शक्ति का अमृत दो, मैं तभी शांति को पाऊँगा॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ....................................॥१८॥

ॐ ह्रीं अरनाथस्य नवार्बुदनवनवतिकोटिनवनवतिलक्षषट्षष्टिसहस्त्रशतवर्षतीर्थ-प्रवर्तनकालकेवलिश्रुतकेवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

मानस में चिंता भरी हुई, पूजा में मन बाहर जाता।
मन की व्याधि को दूर करो, तब सच्ची शांति पाता॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ....................................॥१९॥

ॐ ह्रीं मल्लिनाथस्य चतु:पंचाशल्लक्षसप्तचत्वारिंशत्सहस्त्रचतु: शतवर्षतीर्थप्रवर्तन-कालकेवलिश्रुतकेवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

मुनियों को शुभव्रत दे करके, मुनिसुव्रत नाम को पाया है।
तप करने की शक्ति पायें, यह भक्त शरण में आया है॥

जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ..॥२०॥
ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतनाथस्य षट्लक्षपंचसहस्रवर्षतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुतकेवलि-आचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

तव मुख मुद्रा को लख करके, मम मन प्रसन्न हो जाता है।
समता रहती मुस्कान रहे, मन जग में ना भरमाता है॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ..॥२१॥
ॐ ह्रीं नमिनाथस्यंचलक्षअष्टादशशतवर्षतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुतकेवलिआचार्यो-पाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

योगी हो योग परायण हो, ध्यानी हो ध्यान परायण हो।
हे ''नेमिनाथ'' भगवान तुम्ही, नर से बन गए नारायण हो॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ..॥२२॥
ॐ ह्रीं नेमिनाथस्य चतुरशीतिसहस्त्रत्रयशतअशीतिवर्षतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुत-केवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

ममता के बंधन प्यारे हैं, तुमने हर बंधन तोड़ा है
हे ''पार्श्वनाथ'' करुणा निधान, सारे जग से मुँह मोड़ा है
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ..॥२३॥
ॐ ह्रीं पार्श्वनाथस्य द्विशतअष्टसप्ततिवर्षतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुतकेवलिआचार्यो-पाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

''त्रिशला'' माता के लाला हो, ''सिद्धारथ'' आप कन्हैया हो
हे ''महावीर'' भगवान तुम्ही, भव सागर तारण नैया हो
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ..॥२४॥
ॐ ह्रीं महावीरस्वामिन: एक विंशतिसहस्रचत्वारिंशद्वर्षतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुत-केवलिआचार्योपाध्यायसाधुभ्य: अर्घ्यं....।

चौथा काल था मुक्ति का, मुक्ति गए जिनराज।
केवलि श्रुत केवलि हुए, पूजा करुँ मैं आज॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ..॥२५॥
ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकर शासनकालकेवलिश्रुतकेवलिआचार्योपाध्यायपंचमका-लान्त्यवीरांगजसाधुपर्यंतसर्वसाधुभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

अभियंता अभिभावन तुम हो, ईश्वर और जिनेश्वर तुम हो।
ब्रह्मा और महेश भी तुम हो, हम भक्तों के जिनेश भी तुम हो॥
जिस घड़ी में प्रभु का जन्म हुआ..॥२६॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरशासनकालब्राह्मीगणिनीप्रभृतिसर्वश्रीआर्यिकापर्यंतसर्व-आर्यिकाभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

जाप्य-ॐ ह्रीं समवसरणपद्मसूर्यवृषभादिवर्द्धमानान्तेभ्यो नमः।

जयमाला

दोहा

पुण्यवान वह काल था, पुण्यवान वह लाल
पुण्य योग पूजा करो, पुण्य बढ़ाए माल

पद्धरि-छन्द

चौबीस जिनेश्वर गुण महान, उनके चरणों में है प्रणाम।
जय आदि देव जय महावीर, लोकोत्तर होकर हुए तीर॥१॥

तीर्थंकर वाला तीर्थकाल, होता है वह अद्‌भुत विशाल।
निर्वाण जाय फिर धर्म कहे, पीछे से भी कुछ मोक्ष गए॥२॥

आचार्य साधु हैं पाठक हैं, छोड़ा जग का सब नाटक है।
कुछ समय तीर्थ विच्छेद हुआ, सद्धर्म का जिसमें भेद हुआ॥३॥

प्राणी सब धर्मों को भूले, विषयों के झूले में झूले।
तीर्थंकर आते रहते हैं, वे धर्म चलाते रहते हैं॥४॥

अंतिम तीर्थंकर श्री ''महावीर'', निर्वाण प्राप्त कर हुए धीर।
गौतम को केवल ज्ञान हुआ, सुधर्मा को भी भान हुआ॥५॥

गौतम ने फिर मुक्ति पाई, तब केवल ज्योति भी आई।
मैं सुखी रहूँ बस सुखी रहूँ, संकट सारे ही टल जाएं॥६॥

दो कृपा दृष्टि हे "अरहनाथ", शत्रु हो सभी विकल जाएं।
श्रद्धान अटल विश्वास प्रबल, मैं तुम्हें मनाने आया हूँ॥७॥

हे "मल्लिनाथ" भगवान प्रभो, मैं छाया पाने आया हूँ।
सद्धर्म बाद "जम्बू" स्वामी, पंचम में मुक्ति पाई नामी॥८॥

अनुबद्ध केवली बासठ हैं, अंतिम केवलि "श्रुत श्रीधर" हैं।
दशपूर्वी आचारांग हुए, ज्ञानी जन ने सम्मान दिये॥९॥

श्रुत तीरथ चलता रहता है, श्रुत ज्ञान का झरना बहता है।
"धरसेन" और वे "पुष्पदन्त", थे "भूतबलि" वे ज्ञानवंत॥१०॥

षट् खण्डागम का सूत्र रचा, हम पढ़ते हैं जो रहा बचा।
अध्यात्म ज्ञान का शास्त्र बना, पढ़ते ही पाया ज्ञान घना॥११॥

गुणधर ने पाहुड़ रचना की, श्रुत ज्ञानी तभी अर्चना की।
गुरु यति वृषभ अकलंक देव, वे "समन्त भद्र" की करें सेव॥१२॥

हे कुन्द-कुन्द अद्भुत महान्, जिसने पाया था आत्म ज्ञान।
गुरु की संतति थी चली आई, गुरुओं से सब शिक्षा यें पाई॥१३॥

गुरुओं ने आशीर्वाद दिया, अपने जैसा ही बना लिया।
आचार्य मुनि अरु उपाध्याय, उनके चरणों में सिर नवाय॥१४॥
आर्यिका हुई श्रावक आए, श्राविका भाव शुभ को पाऐं।
साढे अठरह सौ सहस वर्ष, ये धर्म चलेगा पाय हर्ष॥१५॥

तीर्थंकर का यह तीर्थकाल, पुण्योदय से मिलता विशाल।
"स्वस्ति" शुभ भाव बनाय रही, तीर्थंकर के गुण गाय रही॥१६॥

दोहा

जिन शासन जिन देव जी, सदा रहे अविराम
जन्म-मरण से छूटकर, लें शिवपुर विश्राम

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरतीर्थप्रवर्तनकालकेवलिश्रुतकेवलिआचार्योपाध्यायसर्व-साधुभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।।

जिन सहस्त्र नाम पूजन

स्थापना

गीता छन्द

भगवान के भक्तों में सबसे, इन्द्र आगे है खड़ा
भक्ति करे भगवान की, चरणों में आकर के पड़ा
सहस अठ नामों से पूजें, भक्ति को हम आए हैं
आओ प्रभो मेरे हृदय में, फिर भावना ये लाए हैं

दोहा

तीर्थंकर जिन देव की, महिमा बड़ी विशाल
अर्चन भक्ति से करें, तुम्हें झुकाकर भाल।।१।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थअष्टोत्तरसहस्त्रनामसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वानानं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थअष्टोत्तरसहस्त्रनामसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थअष्टोत्तरसहस्त्रनामसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

चाल छन्द

हम जल लेकर के आए, आकर के तुम्हें चढाऐं
हो जन्म-मरण का नाशा, तुमसे प्रभु इतनी आशा

पढ़ सहस नाम हर्षाऊँ तेरी भक्ति को आऊँ
समता का हो उजियाला, कर्मों का कटेगा जाला॥१॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरअष्टोत्तरसहस्रनामसमूहहाय जलं......।

चन्दन लाया वंदन को, अपने ही प्रभु नंदन को,
सम्यक दृष्टि को पाऊँ जग में न फिर भरमाऊँ॥२॥
पढ़ सहस नाम......................

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरअष्टोत्तरसहस्रनामसमूहहाय चंदनं......।

आतम अक्षत् अविनाशी, उज्जवल यह अक्षत राशी
जड़ सत्ता को विनशाऊँ, आतम की ज्योति जगाऊँ॥३॥
पढ़ सहस नाम......................

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरअष्टोत्तरसहस्रनामसमूहहाय अक्षतं......।

पुष्पों की शोभा प्यारी, उपवन महकाए क्यारी
मर्यादा को पा लूंगा, मुक्ति पथ पर चल दूंगा॥४॥
पढ़ सहस नाम......................

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरअष्टोत्तरसहस्रनामसमूहहाय पुष्पं......।

इस पेट ने पाप कराया, फिर भी यह न भर पाया
नैवेद्य चरण में लाऊँ, यह क्षुधा रोग नशवाऊँ॥५
पढ़ सहस नाम......................

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरअष्टोत्तरसहस्रनामसमूहहाय नैवेद्यं......।

तम ने हमको भटकाया, गतियों में हमें घुमाया
रत्नों का दीप चढाऊँ, अब और कहीं ना जाऊँ॥६॥
पढ़ सहस नाम......................

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरअष्टोत्तरसहस्रनामसमूहहाय दीपं......।

कर्मों का गहरा दलदल, प्रश्नों का ना कोई हल
अग्नि में धूप गिराऊँ, कर्मों को नित्य जलाऊँ॥७॥
पढ़ सहस नाम......................

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरअष्टोत्तरसहस्रनामसमूहहाय धूपं......।

अमृत फल तुमने पाया, अमृतमय स्वयं बनाया
फल अप्रण कर फल पाऊँ, तेरी पूजा को आऊँ॥८॥
पढ़ सहस नाम.....................

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरअष्टोत्तरसहस्रनामसमूहहाय फलं......।

साधन से साध्य को पावे, साधन ही उसे मिलावे
अर्घ्यों का थाल सजाऊँ, पूजा करके हर्षाऊँ॥९॥
पढ़ सहस नाम.....................

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरअष्टोत्तरसहस्रनामसमूहहाय अर्घ्यं......।

दोहा

मम जीवन ज्योति जगे, नाम अमर हो जाय
पुष्पांजलि कर पूजते, शत-शत शीश नवाय

प्रत्येक अर्घ्य

शंभू छंद

तुम अनंत चतुष्टय धारी हो, लक्ष्मी का वैभव पाया है
शुभ समवशरण का रूप बना, तेरे चरणों में आया है
परिमार्जित हो संशोधित हो, यह जीवन शुद्ध बने मेरा
कर्मो के बादल छंट जाएं, आया है चरणों में चेरा॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीमते नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सामर्थ्यवान हो शक्तिवान, गुरु बिन भी दीक्षा को पाया
प्रभु आप "स्वयंभु" स्वयं हुए, निज ही तो गुरुता को पाया॥२॥

ॐ ह्रीं स्वयंभुवे नमः अर्घ्यं....।

तुम "वृषभ" गुरु हो वृषभ धर्म, धारण करके मुस्काते हो
संदेश अहिंसा का देकर, तुम धर्म ध्वजा फहराते हो॥३॥

ॐ ह्रीं वृषभाय नमः अर्घ्यं....।

''शंभव'' शं-भव को धारण कर, जीवन में शांति पाई है
समीचीन मार्ग को बतलाकर, जन जीवन ज्योति जगाई है॥४॥

ॐ ह्रीं शंभवाय नमः अर्घ्यं....।

इन्द्रिय के विषयों को छोड़ा, तुम आतम रस का स्वाद लिया
पाने को परमानंद "शम्भु", परमातम् का निज ध्यान किया॥५॥
ॐ ह्रीं शंभवे नमः अर्घ्यं....।

आतम है शुद्धमयी मेरा, है ज्ञान ''आत्म भू'' कहलाए
आतम से होता चमत्कार, भक्तों को भी ये बतलाए॥६॥
ॐ ह्रीं आत्मभुवे नमः अर्घ्यं....।

आतम ज्योति जब भी फैले, त्रैलोक्य प्रकाशित होता है
तुम बने "स्वयम्भु" इसीलिए, यह जग आलोकित होता है॥७॥
ॐ ह्रीं स्वयंप्रभाय नमः अर्घ्यं....।

सामर्थ्यवान सबका स्वामी, कष्टों को दूर भगाता है
यह शब्द है सार्थक नाम "प्रभु", भक्तों के मन को भाता है॥८॥
ॐ ह्रीं प्रभवे नमः अर्घ्यं.....।

इन्द्रिय सुख तो यह नश्वर है, आतम का सुख ही पावन है
परमानंद सुख को अनुभव कर, "भोक्ता'' यह नाम ही साधन है॥९॥
ॐ ह्रीं भोक्त्रे नमः अर्घ्यं....।

सारे जग का मंगल करते, सब जग में दृष्टि रखते हो
हे नाथ ''विश्वभू'' केवलमय, निज आतम का रस चखते हो ॥१०॥
ॐ ह्रीं विश्वभुवे नमः अर्घ्यं....।

इस जन्म-मरण से छूटे तन, इस जग में ना फिर आना है
"अपुनर्भवः" भगवान हमें, आतम का पाठ पढ़ाना है॥११॥
ॐ ह्रीं अपुनर्भवाय नमः अर्घ्यं....।

अपने आतम जैसा तुमने, सबके आतम को माना है
हे "विश्वात्मा" हे ज्ञानमयी, साधन स्वरूप बतलाना है॥१२॥
ॐ ह्रीं विश्वात्मने नमः अर्घ्यं.....।

तुम तीन लोक के ईश बने, तीनों लोकों को ईश मिले
हे जिनवर "विश्वलोकेश" नाम, पाकर अन्तर के फूल खिले॥१३॥
ॐ ह्रीं विश्वलोकेशाय अर्घ्यं....।

चक्षु दर्शन श्रुत ज्ञानी का, श्रुत ज्ञान से कुछ-कुछ देखे हैं
हे नाथ "विश्वतश्चक्षु" ही, तीनों लोकों को लेखे हैं॥१४॥

ॐ ह्रीं विश्वतश्चक्षुषे नमः अर्घ्यं....।

अक्षर का क्षरण नहीं होता, अक्षर "अक्षय" हो जाते हैं
"अक्षेन्द्रिय" मन को वश करता, शुभ अक्षर नाम बुलाते हैं॥१५॥

ॐ ह्रीं अक्षराय नमः अर्घ्यं....।

केवल ज्ञानी के ज्ञान विषे, सब विश्व चराचर लगता है
प्रभु आप "विश्ववित", कहते हो, केवल तो सबको लखता है॥१६॥

ॐ ह्रीं विश्वविदे नमः अर्घ्यं....।

विद्या के आप धनी प्रभुवर, सब विश्व में विद्या फैल गई
प्रभु आप "विश्व विद्येश" हुए, केवल की रश्मि फैल गई॥१७॥

ॐ ह्रीं विश्वविद्येशाय नमः अर्घ्यं....।

हर वस्तु के उपदेशक हो, उत्पत्ति के तुम कारण हो
हे "विश्वयोनि" तुम जन्मा हो, इस जग के आप ही तारक हो॥१८॥

ॐ ह्रीं विश्वयोनये नमः अर्घ्यं....।

अविनाशी और "अनश्वर" हो, आतम का क्षय ना होता है
त्रिकाल में प्रभुवर का आतम, अक्षय अखण्ड ही होता है॥१९॥

ॐ ह्रीं अनश्वराय नमः अर्घ्यं.....।

इक बार में सारा जग देखे, इक क्षण में सब कुछ जान लिया
हो आप "विश्वदृष्टा" जग के, तुमको देखा पहचान लिया॥२०॥

ॐ ह्रीं विश्वदृश्वने नमः अर्घ्यं....।

सामर्थ्य मिली जग तारन की, खुद को भी तारा है तुमने
"विभु" इससे ही प्रभु कहलाए, कर्मों को मारा है तुमने॥२१॥

ॐ ह्रीं विभवे नमः अर्घ्यं....।

तुम सबके भाग्य विधाता हो, कर्मों के पालनहार बने
"धाता" ने ही रक्षा की है, भक्तों के तारनहार बने॥२२॥

ॐ ह्रीं धात्रे नमः अर्घ्यं....।

तीनों लोकों के ईश तुम्हीं, निज आत्म ज्योति फैलाई है
"विश्वेश" इसी से कहलाए, हर ओर शांति भी आई है॥२३॥
ॐ ह्रीं विश्वेशाय नमः अर्घ्यं....।

उपदेश अहिंसामयी दिया, हम उसपर ही तो चलते हैं
हो आप "विश्व लोचन" प्रभुवर, तव नेत्र देख हम पलते हैं॥२४॥
ॐ ह्रीं विश्वलोचनाय नमः अर्घ्यं....।

जग के कण-कण में व्यापे हो, जग के कण-कण को जान लिया
बन गए "विश्वव्यापी" तुमने, तीनों लोकों को ज्ञान दिया॥२५॥
ॐ ह्रीं विश्वव्यापिने नमः अर्घ्यं....।

चौपाई

"विधु नाम को धारण कीना, ज्योति प्रकाश ज्ञान की लीना
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥२६॥
ॐ ह्रीं विधवे नमः अर्घ्यं....।

ज्ञान ज्योति को आप जगाए, "वेधा" नाम इसी से पाए।
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥२७॥
ॐ ह्रीं वेधसे नमः अर्घ्यं....।

शाश्वत पद में आप विराजे, "शाश्वत" नाम इसी से साजे।
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥२८॥
ॐ ह्रीं शाश्वताय नमः अर्घ्यं....।

अंतर में भगवन मुख दिखता, प्रभु "विश्वतो मुख" को लखता
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥२९॥
ॐ ह्रीं विश्वतोमुखाय नमः अर्घ्यं....।

कर्म व्यवस्था को समझाया, छवि "विश्वकर्मा" की पाया
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥३०॥
ॐ ह्रीं विश्वकर्मणे नमः अर्घ्यं....।

"जगत् ज्येष्ठ" तुम जग महान् हो, श्रेष्ठ हुए तुम ही प्रधान हो
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥३१॥
ॐ ह्रीं जगज्जेष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

गुण-गण की तुम मूरत प्यारी, "विश्व मूर्ति" की महिमा न्यारी
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥३२॥

ॐ ह्रीं विश्वमूर्तये नमः अर्घ्यं....।

मुनि योगी के हो परमेश्वर, इसीलिए कहलाए "जिनेश्वर"
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥३३॥

ॐ ह्रीं जिनेश्वराय नमः अर्घ्यं....।

वस्तु मात्र अवलोकन करते, "विश्वद्रक्" के नाम को वरते
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥३४॥

ॐ ह्रीं विश्वदृशे नमः अर्घ्यं....।

प्रभू "विश्वभूतेशा" आए, प्राणी जन के ईश कहाए
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥३५॥

ॐ ह्रीं विश्वभूतेशाय नमः अर्घ्यं....।

"विश्वज्योति" करती उजियारा, केवल ज्ञान की बहती धारा
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥३६॥

ॐ ह्रीं विश्वज्योतिषे नमः अर्घ्यं....।

आप "अनीश्वर" नहीं हैं ईश्वर, आप ही सबके बने जिनेश्वर
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥३७॥

ॐ ह्रीं अनीश्वराय नमः अर्घ्यं....।

"जिन" भगवन ने करम भगाए, इसी प्रयोजन से हम आए
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥३८॥

ॐ ह्रीं जिनाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभु "जिष्णु" कर्मारि हुए हैं, शासन में प्रभु विजयी हुए हैं
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥३९॥

ॐ ह्रीं जिष्णवे नमः अर्घ्यं....।

"अमेयात्मा" गुण भण्डारी, नाप सके ना ये संसारी
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥४०॥

ॐ ह्रीं अमेयात्मने नमः अर्घ्यं....।

"विश्वरीश" मम ईश कहाए, सब भक्तों को पार लगाए
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥४१॥

ॐ ह्रीं विश्वरीशाय नमः अर्घ्यं....।

''जगतपति'' जगदीश्वर स्वामी, हरो जगत का दुख जगनामी
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥४२॥

ॐ ह्रीं जगत्पतये नमः अर्घ्यं....।

प्रभु "अनन्तजित" कुमति हटाए, सुमति देय जन सुखी कराए
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥४३॥

ॐ ह्रीं अनंतजिते नमः अर्घ्यं....।

है "अचिन्त्य" आत्मा की महिमा, चिन्तन ना कर सकते गरिमा
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥४४॥

ॐ ह्रीं अचिन्त्यात्मने नमः अर्घ्यं....।

"भव्य बन्धु" बन्धु भव्यों के, स्मृति में प्रभु उन्हीं क्षणों के
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥४५॥

ॐ ह्रीं भव्यबंधवे नमः अर्घ्यं....।

प्रभु "अबन्धन" नाम है सुन्दर, बांध सके ना कोई समुन्दर
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥४६॥

ॐ ह्रीं अबंधनाय नमः अर्घ्यं....।

तुम्ही "युगादि" पुरुष कहाये, आदि समय में आदि आए
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥४७॥

ॐ ह्रीं युगादिपुरुषाय नमः अर्घ्यं....।

"ब्रह्मा" आत्म ब्रह्म के ध्यानी, जग में आप हुए थे ज्ञानी
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥४८॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मणे नमः अर्घ्यं.....।

"पंच ब्रह्ममय" आप कहाए, पांच ज्ञान के ईश बताए
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥४९॥

ॐ ह्रीं पंचब्रह्ममयाय नमः अर्घ्यं....।

"शिव" में जा आनन्द लिया है, सब दोषों को दूर किया है
हम सब भगवन दास तुम्हारे, चरणों में दो हमें सहारे॥५०॥

ॐ ह्रीं शिवाय नमः अर्घ्यं....।

शेर चाल

नाम प्रभु का "पर" हुआ, पर की करे रक्षा।
जो आ गया है भाव से, दे दी उन्हें दीक्षा॥५१॥

ॐ ह्रीं पराय नमः अर्घ्यं....।

"परतर" हो प्रभु तारते, भव्यों को तुम सदा।
जो आपका उपदेश सुने, भूले ना कदा॥५२॥

ॐ ह्रीं परतराय नमः अर्घ्यं....।

"सूक्ष्म" आत्मा को प्राप्त, आपने किया।
दीखते न चक्षु से, हमने नमन किया॥५३॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्माय नमः अर्घ्यं....।

"परमेष्ठी" बन के श्रेष्ठ पद को, पाय तुम लिया।
संग भव्यों को भी, आपने तो पार कर दिया॥५४॥

ॐ ह्रीं परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं....।

हे देव "सनातन" बने, विकार हुए दूर
भक्ति से करुं अर्चना हो, कर्म ये चकचूर॥५५॥

ॐ ह्रीं सनातनाय नमः अर्घ्यं....।

जगाके "स्वयम् ज्योति" ज्ञान ध्यान को पाया।
निज आत्मा की ज्योति से, तम आप भगाया॥५६॥

ॐ ह्रीं स्वयंज्योतिषे नमः अर्घ्यं....।

"अज" देव की उत्पत्ति जगत में न अब होगी।
हो ज्ञान में विख्यात ज्ञान की निधि होगी॥५७॥

ॐ ह्रीं अजाय नमः अर्घ्यं.....।

"अजन्मा" देव अब कभी न जग में आएगा।
दर्शन करेगा जो भी वो मुक्ति में जाएगा॥५८॥

ॐ ह्रीं अजन्मने नमः अर्घ्यं....।

हो "ब्रह्मयोनि" आपमें, उत्पत्ति वेद की।
वो द्वादशांग वाणि है, होती ना खेद की॥५९॥
ॐ ह्रीं ब्रह्मयोनये नमः अर्घ्यं....।

हे नाथ "अयोनिज" हुए, योनि में ना जाओ।
उत्पत्ति योनि में कभी अब, आप ना पाओ॥६०॥
ॐ ह्रीं अयोनिजाय नमः अर्घ्यं.....।

"मोहारि विजयईश" प्रभु, आप हुए हैं।
उस मोह शत्रु पे भी विजय, प्राप्त किये हैं॥६१॥
ॐ ह्रीं मोहारिविजयिने नमः अर्घ्यं....।

"जेता" का नाम आपको ही इन्द्र दिया है।
जीता तुम्हीं ने मृत्यु को शुभ नाम लिया है॥६२॥
ॐ ह्रीं जेत्रे नमः अर्घ्यं....।

संग "धर्म चक्र" आपके चलता रहा सदा।
जाते है आप तो होता है यश वहां॥६३॥
ॐ ह्रीं धर्मचक्रिणे नमः अर्घ्यं....।

लेकर "दया ध्वजा" प्रभु ने जग में उड़ाई।
हे दीनबन्धु नाथ, दया आप चलाई॥६४॥
ॐ ह्रीं दयाध्वजाय नमः अर्घ्यं....।

कर "प्रशान्त अरि" प्रभु कर्म शान्त हो।
जो शांत हुए कर्म तो, जीवन प्रशान्त हो ॥६५॥
ॐ ह्रीं प्रशांतारये नमः अर्घ्यं....।

प्रभु आप"अनन्त आत्मा" हो, अन्त नहीं है।
अविनाशियों, शिवगामियों का पन्थ नहीं है ॥६६॥
ॐ ह्रीं अनन्तात्मने नमः अर्घ्यं....।

''योगी'' बनें हो योग को जीवन में वश किया।
हो मन भी शुद्ध, तन भी शुद्ध, तप ही तप किया ॥६७॥
ॐ ह्रीं योगिने नमः अर्घ्यं.....।

“योगीश्वरों से अर्चित” प्रभु आप हुए हैं।
गण धर नवाएं शीश, और चरण छुए हैं ॥६८॥

ॐ ह्रीं योगीश्वरार्चिताय नमः अर्घ्यं....।

हे नाथ “ब्रह्मविद” बने, निज ब्रह्म को जाना।
अनुभव किया है स्वाद लिया ब्रह्म को माना ॥६९॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मविदे नमः अर्घ्यं.....।

हे नाथ “ब्रह्म तत्व” के तत्वज्ञ को पाया।
निज आत्म ध्यान करके ज्ञान तत्व लुटाया ॥७०॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मतत्त्वज्ञाय नमः अर्घ्यं.....।

“ब्रह्मोद्याविद” थे आप ही विद्या के थे धनी।
मर्मज्ञ आत्म ज्ञान के, ध्यानी तनी मनी ॥७१॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मोद्याविदे नमः अर्घ्यं....।

हे नाथ “यतीश्वर” गुरु यतियों ने स्वीकारा।
गणधर ने करी अर्चना औ तुमको पुकारा ॥७२॥

ॐ ह्रीं यतीश्वराय नमः अर्घ्यं......।

हो सिद्ध तुम्ही “शुद्ध” तुम्हीं कर्म मल रहित।
सारे मलों को दूर किया, रहे गुण सहित ॥७३॥

ॐ ह्रीं शुद्धाय नमः अर्घ्यं.....।

तुम “बुद्ध” हो सर्वज्ञ, तत्व सारे जानते।
ये भक्त तुम्हें ज्ञान का, भण्डार मानते ॥७४॥

ॐ ह्रीं बुद्धाय नमः अर्घ्यं.....।

हे नाथ “प्रबुद्धात्मा”, है निज को बनाया।
औ आत्मा को शुद्ध गुणों, से है सजाया ॥७५॥

ॐ ह्रीं प्रबुद्धात्मने नमः अर्घ्यं....।

गीता छन्द

तुम जगत के “सिद्धार्थ” हो, हर आत्मा को जानते।
तुम सब प्रयोजन पूर्णकर, बस आत्म को ही मानते।॥७६॥

ॐ ह्रीं सिद्धार्थाय नमः अर्घ्यं....।

सिद्धांत का खण्डन नहीं, हो "सिद्ध शासन" भी तुम्हीं।
पर आपका शासन प्रभो, विख्यात है सारी मही॥७७॥
ॐ ह्रीं सिद्धशासनाय नमः अर्घ्यं.....।

सब कार्य कारण "सिद्ध" हों, चरणों में खुद ही आ गए।
करके करम को नष्ट प्रभु, सारे जगत में छा गए॥७८॥
ॐ ह्रीं सिद्धाय नमः अर्घ्यं....।

"सिद्धान्त विद्" सिद्धान्त ज्ञानी, ज्ञान का भण्डार हो।
परिपूर्ण ध्यानी हो जगत के, ध्यान के अनगार हो॥७९॥
ॐ ह्रीं सिद्धांतविदे नमः अर्घ्यं....।

"ध्येय" तुम ध्याता तुम्ही, हम ध्यान में ध्यायें सदा
सब योगियों के ध्यान में, आराध्य बन आए सदा॥८०॥
ॐ ह्रीं ध्येयाय नमः अर्घ्यं.....।

सिद्ध तुम हो "साध्य" भी तुम, मुक्तिपुर को पा लिया।
जो ध्यान निशदिन ध्याय वो, मुक्तीपुर को जा लिया॥८१॥
ॐ ह्रीं सिद्धसाध्याय नमः अर्घ्यं....।

इस जगत में हित के हो कारण, आप "जगद्धित" बन गए।
औ सहज सबके वास्ते तुम, कर्म सारे हन गए॥८२॥
ॐ ह्रीं जगद्धिताय नमः अर्घ्यं.....।

गुण क्षमा धारी हो प्रभु, तुम ही "सहिष्णु" हो गए।
सब कोई चाहे कुछ करे बस, आप ज्ञाता हो गए॥८३॥
ॐ ह्रीं सहिष्णवे नमः अर्घ्यं.......।

अपना स्वभाव ना छोड़ते "अच्युत" बने तब आप ही।
फिर मोक्ष पदवी पा गए तुम, अब न लौटें आप ही॥८४॥
ॐ ह्रीं अच्युताय नमः अर्घ्यं.....।

हैं अनन्तों आप में गुण, हो गए तब ही "अनन्त"।
जन्म-मृत्यु से छुटे हो, सिद्ध पद पा दिगदिगन्त॥८५॥
ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः अर्घ्यं.....।

नाम "प्रभविष्णु" हुआ तुम, ही बने समरथ धनी।
यह आप से जग है प्रभावित, आप से ही है बनी॥८६॥

ॐ ह्रीं प्रभविष्णवे नमः अर्घ्यं....।

श्रेष्ठ सबसे जन्म जग में, नाथ "भवोद्भव" हुए।
ये ज्ञान, गुण परमात्मा, समरथ धनी तब सब हुए॥८७॥

ॐ ह्रीं भवोद्भवाय नमः अर्घ्यं....।

तुम शक्ति का ना पार पाया, नाथ "प्रभूष्णु" नाम है।
शक्ति से तप-त्याग कीना, शिवपुरी तव धाम है॥८८॥

ॐ ह्रीं प्रभूष्णवे नमः अर्घ्यं.....।

दुःखमय है यह बुढापा, पर "अजर" तो आप हैं।
नाश दो सब दुख हमारे, प्रभु अमर तो आप हैं॥८९॥

ॐ ह्रीं अजराय नमः अर्घ्यं.....।

जीरण कभी न होओगे प्रभु, "अजर्य" नाम को धर लिया।
यह रोगमय है तन मेरा, अब आपको ही वर लिया॥९०॥

ॐ ह्रीं अजर्याय नमः अर्घ्यं....।

"भ्राजिष्णु" ज्ञान प्रकाश है, तम तब हुआ सब दूर है।
मम ज्ञान ज्योति गर जगे, तो कर्म चकनाचूर है॥९१॥

ॐ ह्रीं भ्राजिष्णवे नमः अर्घ्यं....।

हे नाथ "धीश्वर" हो तुम्हीं, भक्तों ने माना ईश है।
यह बुद्धि होवे शुद्ध मेरी, तू जगत जगदीश है॥९२॥

ॐ ह्रीं धीश्वराय नमः अर्घ्यं......।

हो तुम्ही "अव्यय" व्यय नहीं है, ध्रौव्यता को प्राप्त हो।
गर मिले आशीष मुझको तो, निश्चय तुम्ही तो आप्त हो॥९३॥

ॐ ह्रीं अव्ययाय नमः अर्घ्यं.....।

अग्नि सम है कर्म ईन्धन, तुम ही तो "विभावसु" हुए।
सब छोड़ कर्मों को जगत में, मुक्तिपुर में जा बसे॥९४॥

ॐ ह्रीं विभावसवे नमः अर्घ्यं....।

आओ जग में ना दुबारा, "असंभूष्णु" नाम है।
मुक्तिपुरी में वास कीना, मुक्ति तेरा धाम है॥९५॥

ॐ ह्रीं असम्भूष्णवे नमः अर्घ्यं........।

स्वयंमेव मुक्ति पर चले थे, और "स्वयभूषणू" तुम हुए।
संपूर्ण वैभव पा लिया है, सिद्ध आत्मा हो गए॥९६॥

ॐ ह्रीं स्वयंभूष्णवे नमः अर्घ्यं........।

काल में प्राचीन होने, से ''पुरातन'' हो गए।
द्रव्य दृष्टि से लखे, परमात्म आतम हो गए॥९७॥

ॐ ह्रीं पुरातनाय नमः अर्घ्यं....।

ध्यान कर "परमात्मा" का, परम पद को पा लिया।
इन्द्रादि ने भक्ति करी, आनन्द सुख अपना लिया॥९८॥

ॐ ह्रीं परमात्मने नमः अर्घ्यं.....।

उत्कृष्ट ज्योति पुन्ज हो, आतम को ज्योतिर्मय किया।
हो गए हो "परम् ज्योति", भव्य शिव मग पा लिया॥९९॥

ॐ ह्रीं परंज्योतिषे नमः अर्घ्यं....।

त्री जगत में हो "परम् ईश्वर", आप परमेश्वर भए।
अरिहन्त देव को पूजते तो, स्वयं ईश्वर बन गये॥१००॥

ॐ ह्रीं त्रिजगत्परमेश्वराय नमः अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य

दोहा

आप नाम के मंत्र को, जो भी पढे पढाय।
सुख सम्पति पावे सभी, कष्ट दूर जो जाय॥

ॐ ह्रीं श्रीमदादिशतनामावलिभ्यः पूर्णार्घ्यं......।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

दोहा

लघु भाषा, भाषा महा, आप दिये समझाय।
"दिव्य भाषा पति" को, शत-शत शीश नवाय॥१०१॥

ॐ ह्रीं दिव्यभाषापतये नमः अर्घ्यं.....।

"दिव्य" रूप था आपका, सुर-नर लख हर्षायें।
दिव्य तनु पावें सभी, दिव्यात्मा बन जाएं॥१०२॥

ॐ ह्रीं दिव्याय नमः अर्घ्यं....।

"पूत वाक्" वाणी मिली, अमृत सा बरसाय।
हित-मित, प्रिय सब, बोलते, मिश्री सी घुल जाय॥१०३॥

ॐ ह्रीं पूतवाचे नमः अर्घ्यं......।

शासन भी पावन किया, किया आत्म उत्थान।
"पूतशासन" जो रहा, किया आत्म कल्याण॥१०४॥

ॐ ह्रीं पूतशासनाय नमः अर्घ्यं....।

"पूतात्मा" हो तुम प्रभो, आतम किया पवित्र।
भव्य जीव जो भी हुए, उन्हें बनाया मित्र॥१०५॥

ॐ ह्रीं पूतात्मने नमः अर्घ्यं.....।

"परम ज्योति" परमात्मा, परम् ज्ञान परमेश।
परम धाम वासी तुम्ही, वीतरागता वेश॥१०६॥

ॐ ह्रीं परमज्योतिषे नमः अर्घ्यं.....।

"धर्माध्यक्ष" बने प्रभो, तुम अध्यक्ष महान्।
सब को रखते साथ में, बारम्बार प्रणाम्॥१०७॥

ॐ ह्रीं धर्माध्यक्षाय नमः अर्घ्यं....।

सभी इन्द्रियां दमन कर, नाम "दमीश्वर" पाय।
मुक्तिनाथ जिन देव जी, शत-शत शीश झुकाय॥१०८॥

ॐ ह्रीं दमीश्वराय नमः अर्घ्यं.....।

जग मुक्ति, लक्ष्मी पति, "श्री पति" नाम धराय।
जग लक्ष्मी पीछा करे, रूके नहीं प्रभु जाय॥१०९॥

ॐ ह्रीं श्रीपतये नमः अर्घ्यं.....।

ज्ञान ऐश्वर्य पूर्ण हो, हुए आप "भगवान"।
प्रतिहार्य शोभा करे, बारम्बार प्रणाम॥११०॥

ॐ ह्रीं भगवते नमः अर्घ्यं.....।

"अर्हंत" पूजा प्राप्त है, चार कर्म से दूर।
भावों से भक्ति करे, पाप कर्म हों चूर॥१११॥

ॐ ह्रीं अर्हते नमः अर्घ्यं....।

कर्म धूलि को दूर कर, आप "अरज" हो जायें।
गुण-गण मणि हों शुद्ध सब, शत-शत शीश झुकाय॥११२॥

ॐ ह्रीं अरजसे नमः अर्घ्यं....।

करम विहीना हैं प्रभु, आप "विरज" बन जाएं।
भव्य जीव को तारते, शत-शत शीश नवाय॥११३॥

ॐ ह्रीं विरजसे नमः अर्घ्यं.....।

ब्रह्मचर्य पावन करे, आतम "शुचि" बनाए।
आत्म शुद्धि के कारणे, चरणों अर्घ्य चढाए॥११४॥

ॐ ह्रीं शुचये नमः अर्घ्यं.....।

तीर्थ भव्य को तारते, तीर्थ बनावें आप।
''तीरथकृत'' हम भी तरे, जपते तेरा जाप॥११५॥

ॐ ह्रीं तीर्थकृते नमः अर्घ्यं....।

ज्ञानावर्णी नाश कर , पूर्ण ज्ञान को पाय।
भय ''केवली'' आप जिन, चरणान शीश नवाय॥११६॥

ॐ ह्रीं केवलिने नमः अर्घ्यं...।

अहमिन्द्र पूजा करे, जग में हुए प्रसिद्ध।
नाम "ईशान" को धारते, आप हुए फिर सिद्ध॥११७॥

ॐ ह्रीं ईशानाय नमः अर्घ्यं....।

करे अर्चना देवता, पूजा के हैं योग।
"पूजार्ह" इस नाम से, आज हुए जग जोग॥११८॥

ॐ ह्रीं पूजार्हाय नमः अर्घ्यं......।

पूर्ण ज्ञान को पा लिया, "स्नातक" कहलाय।
सत्य ज्ञान मुझको मिले, चरणन शीश नवाय॥११९॥

ॐ ह्रीं स्नातकाय नमः अर्घ्यं....।

विमल, ''अमल'' देही हुए, कर्म धूल कर नाश।
दुष्ट कर्म भागे सभी, पाऊँ पूर्ण प्रकाश॥१२०॥

ॐ ह्रीं अमलाय नमः अर्घ्यं.....।

"अनंत दीप्ति" से तन हुआ, दिव्य तेज निज देह।
प्रभु दर्शन जो भी करे, मुक्ति का पथ लेह॥१२१॥

ॐ ह्रीं अनंतदीप्तये नमः अर्घ्यं....।

आतम ज्ञानमयी हुआ, ज्ञान ही आतम ज्ञान।
''ज्ञानात्मा'' की देह पा, किया आत्म कल्याण॥१२२॥

ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः अर्घ्यं.....।

''स्वयंबुद्ध'' ज्ञानी हुए, हो प्रबुद्ध जिनराज।
स्वयं गुरु बन आपने, प्रगटा केवलज्ञान॥१२३॥

ॐ ह्रीं स्वयंबुद्धाय नमः अर्घ्यं......।

लालन पालन है किया, ''प्रजापति'' कहलाये।
है प्रसन्न परजा वहां, आकर शीश झुकाये॥१२४॥

ॐ ह्रीं प्रजापतये नमः अर्घ्यं....।

बंधन सारे काटकर, दोष रहित जिनराज।
''मुक्ति'' सुख अधिकार से, लिया आत्म का ज्ञान॥१२५॥

ॐ ह्रीं मुक्ताय नमः अर्घ्यं......।

भक्त ''शक्त'' के दर्श कर, शक्ति धर्म उपाय।
''शक्त'' नाम की जाप से, पाप कर्म कट जाय॥१२६॥

ॐ ह्रीं शक्ताय नमः अर्घ्यं.....।

बाधा सारी दूर कर, ''निराबाध'' सुखदाय।
मुक्ती है बाधा रहित, शत्-शत् शीश झुकाय॥१२७॥

ॐ ह्रीं निराबाधाय नमः अर्घ्यं.....।

कल-कल तज ''निष्कल'' हुए, कला ज्ञान धनवान।
कवलाहार करो नहीं, फिर भी शक्तिमान॥१२८॥
ॐ ह्रीं निष्कलाय नमः अर्घ्यं.....।

त्रिभुवन पति संसार में, दीनबंधु जिनराज।
''भुवनेश्वर'' रक्षा करो, नमता सकल समाज॥१२९॥
ॐ ह्रीं भुवनेश्वराय नमः अर्घ्यं.....।

अंजन धोया कर्म का, आप निरंजन देव।
अष्ट कर्म को नष्ट कर, करे आत्म की सेव॥१३०॥
ॐ ह्रीं निरंजनाय नमः अर्घ्यं....।

एक ज्योति से एक का, अंधकार मिट जाय।
''जगज्योति'' जिनराज हो, है केवल सुखदाय॥१३१॥
ॐ ह्रीं जगज्ज्योतिषे नमः अर्घ्यं.....।

सार्थक वच हैं आपके, कोई नहीं विरोध।
''निरूक्तोक्ती'' शुभ नाम से, होवे आतम बोध॥१३२॥
ॐ ह्रीं निरुक्तोक्तये नमः अर्घ्यं....।

ताप शाप शमनार्थ कर, हुए ''निरामय'' आप।
व्याधि रहित सुखकार हो, करे आपकी जाप॥१३३॥
ॐ ह्रीं निरामयाय नमः अर्घ्यं....।

थल में जल में गर रहो, रहो अचल जिनराज।
''अचल स्थिति'' आपकी, पूजे सकल समाज॥१३४॥
ॐ ह्रीं अचलस्थितये नमः अर्घ्यं.....।

चित्त शांत सागर महा, नहीं क्षोभ का काम।
नाम ''अक्षोभ्य'' को पूजते, मिले चरण विश्राम॥१३५॥
ॐ ह्रीं अक्षोभ्याय नमः अर्घ्यं.....।

लोक अग्र में राजते, नाम है जिसका कूट।
प्रभु ''कूटस्थ'' में जा बसे, सर्व कर्म से छूट॥१३६॥
ॐ ह्रीं कूटस्थाय नमः अर्घ्यं.....।

करें नहीं गमना गमन, लोक शिखर विश्राम।
नाम हुआ "स्थाणु" है, बारम्बार प्रणाम॥१३७॥

ॐ ह्रीं स्थाणवे नमः अर्घ्यं.....।

अक्षय का क्षय है नही, "अक्षय" पद अविनाश।
अक्षय सुख के हो धनी, अक्षय पुण्य प्रकाश॥१३८॥

ॐ ह्रीं अक्षयाय नमः अर्घ्यं.....।

आगे-आगे हो तुम्हीं, पीछे सब संसार।
नाम "अग्रणी" पा लिया, मुक्ति को तैयार॥१३९॥

ॐ ह्रीं अग्रण्ये नमः अर्घ्यं....।

नाम "ग्रामणी" पाय कर, भव्यों पंथ दिखाय।
मुझको मुक्ति ले चलो, चरणन शीश झुकाय॥१४०॥

ॐ ह्रीं ग्रामण्ये नमः अर्घ्यं.....।

सत्पथ मारग धर्म का, जीवों को बतलाये।
स्वयं चले चलकर लखे, ''नेता'' नाम धराये॥१४१॥

ॐ ह्रीं नेत्रे नमः अर्घ्यं.....।

जिनवाणी रचना करे, आगम दिया दिखाय।
आप "प्रणेता" हो धनी, शत-शत शीश झुकाय॥१४२॥

ॐ ह्रीं प्रणेत्रे नमः अर्घ्यं....।

न्याय शास्त्र को रच दिया, नहीं करे अन्याय।
''न्यायशास्त्र वित'' नाम है, शत्-शत् शीश नवाय॥१४३॥

ॐ ह्रीं न्यायशास्त्रविदे नमः अर्घ्यं....।

हित उपदेशी वाणि से, रस्ता दिया दिखाय।
"शास्ता" अनुपम नाम है, मुक्ति पुरी ले जाय॥१४४॥

ॐ ह्रीं शास्त्रे नमः अर्घ्यं....।

ईश्वर की संज्ञा मिली, "धर्मपति" कहलाय।
दस धर्मों के सार को, जग में दिया दिखाय॥१४५॥

ॐ ह्रीं धर्मपतये नमः अर्घ्यं....।

आत्म धर्म धारण किया, "धार्म्य" नाम कहलाय।
भक्ति वश हम पूजते, दया धरम मिल जाय॥१४६॥
ॐ ह्रीं धर्म्याय नमः अर्घ्यं....।

धर्म रंग के संग में, आतम दिया रंगाय।
"धर्मात्मा" परमेश हो, धर्म पंथ बतलाय॥१४७॥
ॐ ह्रीं धर्मात्मने नमः अर्घ्यं....।

धर्म तीर्थ निर्माण से, तीर्थंकर कहलाए।
धर्म तीर्थ कृत आप हो, शत्-शत् शीश झुकाए॥१४८॥
ॐ ह्रीं धर्मतीर्थकृते नमः अर्घ्यं....।

वृषभ चिन्ह से जानते, धर्म ध्वजा में पाए।
नाम ''वृषभ ध्वज'' बन गए, चरणन शीश झुकाय॥१४९॥
ॐ ह्रीं वृषध्वजाय नमः अर्घ्यं....।

धर्म अहिंसा के धनी, ''बृषा धीश'' बन जाए।
भव-भव की बाधा हरो, सौख्य मुक्ति का पाए॥१५०॥
ॐ ह्रीं वृषाधीशाय नमः अर्घ्यं....।

चाल छन्द

ध्वज धर्मों का लहराए, अरू "वृषकेतु" कहलाए।
हम नाम आप का ध्याएं, भव-भव के ताप नशाएं॥१५१।
ॐ ह्रीं वृषकेतवे नमः अर्घ्यं....।

तुम कर्म शत्रु को नाशा, है धर्म शास्त्र का वासा।
तुम "वृषायुध" को पाया, भव-भव का ताप नशाया॥१५२॥
ॐ ह्रीं वृषायुधाय नमः अर्घ्यं....।

धर्मों का अमृत पीया, और नाम "वृष" को पाया।
तुम सी शक्ति हम पाएं, चरणों में अर्घ्य चढाएं॥१५३॥
ॐ ह्रीं वृषाय नमः अर्घ्यं....।

जिन धर्म के हो तुम नायक, "वृषपति" दया के दायक।
हम तेरा ध्यान लगाएं, कर्मों के फंद छुडाएं॥१५४॥

ॐ ह्रीं वृषपतये नमः अर्घ्यं....।

जीवों का पोषण करते, और नाम "भर्तृ" को धरते।
दुःखों से हमें निकालो, और अपने पास बिठालो॥१५५॥

ॐ ह्रीं भर्त्रे नमः अर्घ्यं....।

तुम बैल चिन्ह क्या पाया, "वृषभांक" नाम रखवाया।
मेरा ये जन्म निवारो, मुझे भव सागर से तारो॥१५६॥

ॐ ह्रीं वृषभांकाय नमः अर्घ्यं....।

तुम जन्म धर्म का कीना, औ नाम ''वृषोद्भव'' लीना।
तुम धर्म तीर्थ कहलाए, हम दर्शन करने आए॥१५७॥

ॐ ह्रीं वृषोद्भवाय नमः अर्घ्यं....।

तुम स्वर्ण की नाभी पाए, ''हिरण्य नाभि'' कहलाए।
रत्नों की वर्षा होती, सारे दुःखों को खोती॥१५८॥

ॐ ह्रीं हिरण्यनाभये नमः अर्घ्यं....।

आतम ने सत्य उपाए, तुम "भूतात्मा" कहलाए।
अन्तर का ताप निवारो, इस जग से मुझको तारो॥१५९॥

ॐ ह्रीं भूतात्मने नमः अर्घ्यं....।

रक्षा जीवों की करते, ''भूभृत्'' ही नाम को धरते।
रक्षक बन करके आओ, इस जग से मुझे बचाओ॥१६०॥

ॐ ह्रीं भूभृते नमः अर्घ्यं....।

तुम शुभी भाव अपनाया, ''भूत्भावन'' नाम को पाया।
आतम को सत्य दिखाओ, जग से मुझको ले जाओ॥१६१॥

ॐ ह्रीं भूतभावनाय नमः अर्घ्यं....।

ना जन्म समय थी पीड़ा, है नाम ''प्रभव'' अति तीरा।
जन्मों के बंध हटाऊँ, चरणों में शीश झुकाऊँ॥१६२॥

ॐ ह्रीं प्रभवाय नमः अर्घ्यं....।

संसार में अतिशय प्रगटे, प्रभु नाम ''विभव'' को लभते।
सुख सर्व खजाना पाया, चरणों में शीश झुकाया॥१६३॥

ॐ ह्रीं विभवाय नमः अर्घ्यं....।

सूरज सम हुए प्रकाशित, प्रभु ''भास्वान्'' कह भाषित।
महिमा धारी जिन देवा, नित करूं चरण में सेवा॥१६४॥

ॐ ह्रीं भास्वते नमः अर्घ्यं....।

उत्पाद् ध्रौव्य व्यय पाया, तुमको अगम्य बतलाया।
''भव'' नाम मंत्र के धारी, हम पूजा करें तुम्हारी॥१६५॥

ॐ ह्रीं भवाय नमः अर्घ्यं....।

तुम ''भाव'' नाम को पाया, मुक्ति का पथ दर्शाया।
हम कृपा आपकी पावें, प्रभु नित-नित शीश झुकायें॥१६६॥

ॐ ह्रीं भावाय नमः अर्घ्यं....।

गतियों का अन्त किया हे, ''भावांतक'' नाम लिया है।
भव्यों के कर्म नशाओ, मुक्ति का सौख्य दिलाओ॥१६७॥

ॐ ह्रीं भवान्तकाय नमः अर्घ्यं....।

जब गर्भ में रघुवर आए, शरणों के मेघ गिराए।
''हिरण्यगर्भ'' कहलाए, चरणों में शीश झुकाए॥१६८॥

ॐ ह्रीं हिरण्यगर्भाय नमः अर्घ्यं....।

अंतर में केवल लक्ष्मी, ''श्री गर्भ नाम'' शुभ रश्मि।
माता मन में हर्षाए, तीर्थंकर बालक पाए॥१६९॥

ॐ ह्रीं श्रीगर्भाय नमः अर्घ्यं....।

शुभ समवसरण की छाया, वो ''प्रभूत विभव'' है आया।
ज्ञानी संग ज्ञान को पाओ, चरणों में शीश झुकाओ॥१७०॥

ॐ ह्रीं प्रभूतविभवाय नमः अर्घ्यं....।

जनम दुबारा नहीं धरेंगे, अंतिम में निर्वाण।
''अभव'' प्रभु का ध्यान धरेंगे, मुक्ति का सुख शीघ्र वरेंगे॥१७१॥

ॐ ह्रीं अभवाय नमः अर्घ्यं....।

बल समर्थ हो तप को तपते, ज्ञान ध्यान में निज को लखते
''स्वयंभू'' शुभ नाम की धारा, अमृत ले लो है यह न्यारा॥१७२॥
ॐ ह्रीं स्वयंप्रभवे नमः अर्घ्यं......।
साधन सुविधा दुविधा देते, प्रभु सभी से दूर ही रहते।
''प्रभुतात्मा'' जग से तारे, दुष्ट कर्म भी इनसे हारे॥१७३॥
ॐ ह्रीं प्रभूतात्मने नमः अर्घ्यं....।
तुम प्राणीनाथ कहाए, अरू ''भूतनाथ'' बन आए।
जिन ज्ञान किरण अनमोला, हर भक्त ने जय-जय बोला॥१७४॥
ॐ ह्रीं भूतनाथाय नमः अर्घ्यं....।
तुम तीन लोक के स्वामी, हो ''जगत् प्रभु'' जगनामी।
मेरे भी संकट काटो, सारे दुःखों को छांटो॥१७५॥
ॐ ह्रीं जगतप्रभवे नमः अर्घ्यं....।

भुजंग प्रयात छन्द (नरेन्द्रं फणीन्द्रं)

''सर्वादि'' जग में आदि कहाए, हमने प्रमुखहो सदा गीत गाए।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१७६॥
ॐ ह्रीं सर्वादये नमः अर्घ्यं....।
तुम्ही ''सर्वदृक'' हो, तुम्ही सर्व कारा, हमें नाथ केवल तुम्हारा सहारा
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१७७॥
ॐ ह्रीं सर्वदृशे नमः अर्घ्यं....।
सभी प्राणी जन को सदा आप पालें, लिया ''सार्व'' जो नाथ जग से निकालें।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१७८॥
ॐ ह्रीं सार्वाय नमः अर्घ्यं....।
तीनों जगत को प्रभु आप जानो, ''सर्वज्ञ'' हो तुम सभी बात मानो।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१७९॥
ॐ ह्रीं सर्वज्ञाय नमः अर्घ्यं....।
तुम्हीं ''सर्व दर्शन'' तुम्हीं सर्वज्ञाता, तुम्हारे चरण में ही मिल जाए साता।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१८०॥
ॐ ह्रीं सर्वदर्शनाय नमः अर्घ्यं....।

तेरी आत्मा में सभी आत्म झलकें, ''सर्वात्मा'' बन करके झपके न पलकें।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१८१॥
ॐ ह्रीं सर्वात्मने नमः अर्घ्यं....।
सभी वेश छोड़े दिगम्बर को पाया, बने ''सर्वलोकेश'' है तेरी माया।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१८२॥
ॐ ह्रीं सर्वलोकेशाय नमः अर्घ्यं....।
सभी लोक को एक क्षण में ही जाना, हुआ ''सर्वविद्'' नाम प्रत्यक्ष माना।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१८३॥
ॐ ह्रीं सर्वविदे नमः अर्घ्यं....।
सभी जग को जीता निजातमा को पाया, बने ''लोकजित'' सर्वआनन्द छाया।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१८४॥
ॐ ह्रीं सर्वलोकजिते नमः अर्घ्यं....।
''सुगति'' मोक्ष गतियों में तुमने बताए, तुम्हें पूजने को शरण तेरी आए।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१८५॥
ॐ ह्रीं सुगतये नमः अर्घ्यं....।
भक्तों के भावों को भावों से सुनते, लिया नाम ''सुश्रुत'' नहीं और गुणते।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१८६॥
ॐ ह्रीं सुश्रुताय नमः अर्घ्यं....।
सुनने का अतिशय सभी का सुनेंगे, ''सुश्रुत'' निजातम की रक्षा करेंगे।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१८७॥
ॐ ह्रीं सुश्रुते नमः अर्घ्यं....।
उत्तम वचन धार उपदेश करते, भामी ''सुवाक्'' किसी से न डरते।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१८८॥
ॐ ह्रीं सुवाचे नमः अर्घ्यं....।
गुरुजन भी तुमको गुरु सम ही मानें, तभी नाम ''सूरी'' सकल ज्ञान जानें।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१८९॥
ॐ ह्रीं सूरये नमः अर्घ्यं....।

वचन जो भी निकले वो जिनवाणी बनतीं, ''बहुश्रुत'' के धारण से विपदाएं टलतीं।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१९०॥
ॐ ह्रीं बहुश्रुताय नमः अर्घ्यं....।

त्रिभुवन के ख्याता चराचर के ज्ञानी, हो विख्यात ''विश्रुत'' सदा आत्म ध्यानी।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१९१॥
ॐ ह्रीं विश्रुताय नमः अर्घ्यं....।

रवि ज्ञान केवल की किरणें हैं फैली, बने ''विश्वत् पाद'' जी भक्तों ने झेली।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१९२॥
ॐ ह्रीं विश्वतःपादाय नमः अर्घ्यं....।

तुम्ही ''विश्वशीर्ष'' तुम्ही तो हो जिनवर, कर दो प्रभुजी दया हम सभी पर।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१९३॥
ॐ ह्रीं विश्वशीर्षाय नमः अर्घ्यं....।

करके वचन शुद्ध वचनों को बोले, प्रभो नाम ''शुचि श्रवा'' आप तोले।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१९४॥
ॐ ह्रीं शुचिश्रवसे नमः अर्घ्यं....।

पाया जगत में अनत सौख्य तुमने, कमाया ''सहस्त्रशीर्षा'' नाम तुमने।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१९५॥
ॐ ह्रीं सहस्त्रशीर्षाय नमः अर्घ्यं....।

आतम को अपनी सदा शुद्ध जानो, ''क्षेत्रज्ञ'' जो नाम है शुद्ध मानो।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१९६॥
ॐ ह्रीं क्षेत्रज्ञाय नमः अर्घ्यं....।

सहस वस्तुओं को है क्षण में निहारा, ''सहस्राक्ष'' का नाम जग ने पुकारा।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१९७॥
ॐ ह्रीं सहस्त्राक्षाय नमः अर्घ्यं....।

है शक्ति के भण्डार अरिहन्त देवा, करें हम ''सहस्रपात'' से प्रभु की सेवा।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१९८॥
ॐ ह्रीं सहस्त्रपदे नमः अर्घ्यं....।

सभी काल में सौख्य तुमको मिलेगा, ''भूत भव्यः भवद् भर्ता'' खिलेगा।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥१९९॥

ॐ ह्रीं भूतभव्यभवद् भर्त्रे नमः अर्घ्यं....।

तुम्ही ''विश्व विद्या महेश्वर'' तुम्ही हो, सभी विद्याधारी के ईश्वर तुम्ही हो।
प्रभो तेरी पूजा करम को नशाती, कषायों भरी जिंदगी भी न भाती॥२००॥

ॐ ह्रीं विश्वविद्यामहेश्वराय नमः अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य-शंभु छन्द

आदिश्वर वीर जिनेश्वर हैं, जग में तुम नाम कमाया है।
हम भक्तों पर भी हे जिनवर, तेरे चरणों की छाया है।
तव सहस नाम का जप करके, भावों से अर्घ्य चढ़ाया है।
पापों को करने खण्ड भक्त, तेरे चरणों में आया है।

ॐ ह्रीं दिव्यभाषापत्यादिशतनामभ्यः पूर्णार्घ्यं.....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

चौपाई

समीचीन तो दोष रहित है, ''स्थविष्ठ'' के नाम सहित है।
परम सुख अमृत बरसाया, अमृत पाने भक्त भी आया॥२०१॥

ॐ ह्रीं स्थविष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

ज्ञानवृद्ध तो आप हुए हैं, नाम ''स्थविर'' साथ लिये हैं।
मुक्ति पथ के नायक तुम हो, दया-धर्म के दायक तुम हो॥२०२॥

ॐ ह्रीं स्थविराय नमः अर्घ्यं....।

सबसे बड़े तुम्हीं कहलाते, ''जेष्ठ'' नाम इंद्रों से पाते।
ज्येष्ठ-श्रेष्ठ बनकर दिखलाया, चरणों में आ शीश झुकाया॥२०३॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

सबको अच्छे तुम लगते हो, ''प्रष्ठ'' नाम अपना धरते हो।
निश-दिन ध्यान तुम्हारा ध्याया, चरणों में हम शीश नवाया॥२०४॥

ॐ ह्रीं प्रष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

अग्र गम्य बनकर दिखलाया, ''प्रेष्ठ'' नाम शुभ ध्यान लगाया।
इंद्र देव नर वंदन करते, आकर अपनी झोली भरते॥२०५॥

ॐ ह्रीं प्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

स्वापर भेद विज्ञान सहित हो, ''वरिष्ठधी'' भी नाम सहित हो।
किये पुण्य तव पूजा पाई, नाम तुम्हारा है सुखदाई॥२०६॥

ॐ ह्रीं वरिष्ठधिये नमः अर्घ्यं....।

मन स्थिर है तन स्थिर है, सौख्य तुम्हारा चिर स्थिर है।
हुए ''स्थेष्ठ'' नाम को पाकर, भारत भू में जन्में आकर॥२०७॥

ॐ ह्रीं स्थेयष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

द्वादश गण को तुम भारी हो, तुम्ही ''गरिष्ठ'' नाम धारी हो।
जो भी चरणों में आ जाता, मुक्ति का वह पथ पा जाता॥२०८॥

ॐ ह्रीं गरिष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

गुण अनन्त को धारण करते, नाथ ''बंहिष्ठ'' नाम को वरते।
अतिशय रूप तुम्हारा छाया, दर्शन करने मैं भी आया॥२०९॥

ॐ ह्रीं बंहिष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

अतिशय पुण्य प्रशस्ति पाई, ''श्रेष्ठ'' नाथ को धारा भाई।
दोष निवारण कर दो मेरे, प्रभु शरण में आया तेरे॥२१०॥

ॐ ह्रीं श्रेष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

परमाणु में सूक्ष्म हुए हो, नाथ ''अणिष्ठ'' को धार लिये हो।
रत्नाकर हो तुम्ही हमारे, पूजा करने आया द्वारे॥२११॥

ॐ ह्रीं अणिष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

गौरव पूर्ण वचन को पाया, फिर सबको उपदेश सुनाया।
''गरिष्ठगी'' को सुंदर वाणी, जिनवर की वाणी कल्याणी॥२१२॥

ॐ ह्रीं गरिष्ठगिरे नमः अर्घ्यं....।

''चतुर्गति'' के दुख के नाशक, करे साधना आप उपासक।
प्रभु ''विश्वमुटे'' नाम है धारा, भक्तों को भी दिया सहारा॥२१३॥

ॐ ह्रीं विश्वमुटे नमः अर्घ्यं....।

सर्व विश्व की करे व्यवस्था, ''विश्वसृज'' की पाइ अवस्था।
परच्च शांति को देने वाले, संकट सब हर लेने वाले॥२१४॥
ॐ ह्रीं विश्वसृजे नमः अर्घ्यं....।

तीन लोक के नाथ बने हो, अवलम्बन में नहीं सने हो।
गरिमा ''विश्व वेट्'' की भारी, चरणों में नित आएं पुजारी॥२१५॥
ॐ ह्रीं विश्वेशे नमः अर्घ्यं....।

पालन-पोषण जग का करते, नाथ ''विश्वभुज'' को ही चरते।
सब जीवों की रक्षा करना, कर्म हमारे सारे हरना॥२१६॥
ॐ ह्रीं विश्वभुजे नमः अर्घ्यं....।

धर्म नीति को सिखलाते हो, मोक्ष मार्ग को दिखलाते हो।
सर्व जीव के हो ''विश्वनायक'' दया-धर्म के हो तुम पायक॥२१७॥
ॐ ह्रीं विश्वनायकाय नमः अर्घ्यं....।

ज्ञान आपका सब जग व्यापी, सारे जगत के हो ''विश्वासी''
नाम तुम्हारा अमृत धारा, जो पीवे सो उतरे पारा॥२१८॥
ॐ ह्रीं विश्वासिने नमः अर्घ्यं....।

सत्य रूप हो सत्यात्मा हो, नाथ आप ही ''विश्वरूपात्मा'' हो।
सब जीवों के आप विधाता, भगवन तुम हो मुक्ति प्रदाता॥२१९॥
ॐ ह्रीं विश्वरूपात्मने नमः अर्घ्यं....।

बने ''विश्वजित'' नाथ बिहारी, कर्मों की सेना है हारी।
भक्तों को दर्शन दिखलाओ, उनको अपने पास बुलाओ॥२२०॥
ॐ ह्रीं विश्वजिते नमः अर्घ्यं....।

मृत्यु को जीता है तुमने, ''विजिता तत्व'' लिया है तुमने।
जन्म-मृत्यु को दूर भगाया, मैं तेरे दर्शन को आया॥२२१॥
ॐ ह्रीं विजितांतकाय नमः अर्घ्यं....।

अंतिम भव था तेरा सुंदर, सुख-सागर का बना समुन्दर।
नाथ 'विभव'' इंद्रों ने दीना, नित्य बनाऊं भाव नवीना॥२२२॥
ॐ ह्रीं विभवाय नमः अर्घ्यं....।

आप किसी से कभी न डरते, ''सप्तभयों'' को नित ही हरते।
''विभय'' हुए विभ्रम को छोड़ा, जग से तुमने नाता तोड़ा।।२२३।।
ॐ ह्रीं विभयाय नमः अर्घ्यं....।
बलशाली हो वीर जिनेशा, तुमको पूजें नाथ नरेशा।
''वीर'' ही निश्चित मुक्ति जाए, बाकि सब जग में भरमाए।।२२४।।
ॐ ह्रीं वीराय नमः अर्घ्यं....।
शोक कभी भी तुम ना करते, नाम ''विशोका'' को ही धरते।
हर लो सारे शौक हमारे, तुम हो सब भक्तों के प्यारे।।२२५।।
ॐ ह्रीं विशोकाय नमः अर्घ्यं....।

शम्भु छन्द

महापुरुषों की महिमा न्यारी, नहीं बुढ़ापा आता है।
नाम ''विजर'' को पाना है, हम भक्तों को ये भाता है।।२२६।।
ॐ ह्रीं विजराय नमः अर्घ्यं....।
तन जीर्ण-शीर्ण ना होता है, ना ही कमजोरी आती है।
रहते 'अजरन्'' आनंद में वे, बीमारी नहीं सताती है।।२२७।।
ॐ ह्रीं अजरते नमः अर्घ्यं....।
हो राम रहित हो द्वेष रहित, तुम तो ''विराग'' के धारी हो।
इस राग-द्वेष के चक्कर में, चाहे फिरती दुनियां सारी हो।।२२८।।
ॐ ह्रीं विरागाय नमः अर्घ्यं....।
तुम पाप रहित होकर जिनवर, गतियों के सुख को छोड़े हो।
तुम रहे ''विरत'' ना कोई रत, दुनियां से मुंह को मोड़े हो।।२२९।।
ॐ ह्रीं विरताय नमः अर्घ्यं....।
परिग्रह का बोझ हटाया है, अरू रंगविहीन ''असंग'' हुए।
भावों से पूजा हम करते, आकर के तेरे चरण छुए।।२३०।।
ॐ ह्रीं असंगाय नमः अर्घ्यं....।
यह जीव अकेला ही रहता, पर से ना कोई आता है।
तुम नाम ''विविक्त'' धार करके, जीवन में पाई साता है।।२३१।।
ॐ ह्रीं विविक्ताय नमः अर्घ्यं....।

सर्व विश्व की करे व्यवस्था, ''विश्वसृज'' की पाइ अवस्था।
परच शांति को देने वाले, संकट सब हर लेने वाले॥२१४॥

ॐ ह्रीं विश्वसृजे नमः अर्घ्यं....।

तीन लोक के नाथ बने हो, अवलम्बन में नहीं सने हो।
गरिमा ''विश्व वेट्'' की भारी, चरणों में नित आएं पुजारी॥२१५॥

ॐ ह्रीं विश्वेशे नमः अर्घ्यं....।

पालन-पोषण जग का करते, नाथ ''विश्वभुज'' को ही चरते।
सब जीवों की रक्षा करना, कर्म हमारे सारे हरना॥२१६॥

ॐ ह्रीं विश्वभुजे नमः अर्घ्यं....।

धर्म नीति को सिखलाते हो, मोक्ष मार्ग को दिखलाते हो।
सर्व जीव के हो ''विश्वनायक'' दया-धर्म के हो तुम पायक॥२१७॥

ॐ ह्रीं विश्वनायकाय नमः अर्घ्यं....।

ज्ञान आपका सब जग व्यापी, सारे जगत के हो ''विश्वासी''
नाम तुम्हारा अमृत धारा, जो पीवे सो उतरे पारा॥२१८॥

ॐ ह्रीं विश्वासिने नमः अर्घ्यं....।

सत्य रूप हो सत्यात्मा हो, नाथ आप ही ''विश्वरूपात्मा'' हो।
सब जीवों के आप विधाता, भगवन तुम हो मुक्ति प्रदाता॥२१९॥

ॐ ह्रीं विश्वरूपात्मने नमः अर्घ्यं....।

बने ''विश्वजित'' नाथ बिहारी, कर्मों की सेना है हारी।
भक्तों को दर्शन दिखलाओ, उनको अपने पास बुलाओ॥२२०॥

ॐ ह्रीं विश्वजिते नमः अर्घ्यं....।

मृत्यु को जीता है तुमने, ''विजिता तत्व'' लिया है तुमने।
जन्म-मृत्यु को दूर भगाया, मैं तेरे दर्शन को आया॥२२१॥

ॐ ह्रीं विजितांतकाय नमः अर्घ्यं....।

अंतिम भव था तेरा सुंदर, सुख-सागर का बना समुन्दर।
नाथ 'विभव'' इंद्रों ने दीना, नित्य बनाऊं भाव नवीना॥२२२॥

ॐ ह्रीं विभवाय नमः अर्घ्यं....।

आप किसी से कभी न डरते, ''सप्तभयों'' को नित ही हरते।
''विभय'' हुए विभ्रम को छोड़ा, जग से तुमने नाता तोड़ा॥२२३॥

ॐ ह्रीं विभयाय नमः अर्घ्यं....।

बलशाली हो वीर जिनेशा, तुमको पूजें नाथ नरेशा।
''वीर'' ही निश्चित मुक्ति जाए, बाकि सब जग में भरमाए॥२२४॥

ॐ ह्रीं वीराय नमः अर्घ्यं....।

शोक कभी भी तुम ना करते, नाम ''विशोका'' को ही धरते।
हर लो सारे शौक हमारे, तुम हो सब भक्तों के प्यारे॥२२५॥

ॐ ह्रीं विशोकाय नमः अर्घ्यं....।

शम्भु छन्द

महापुरुषों की महिमा न्यारी, नहीं बुढ़ापा आता है।
नाम ''विजर'' को पाना है, हम भक्तों को ये भाता है॥२२६॥

ॐ ह्रीं विजराय नमः अर्घ्यं....।

तन जीर्ण-शीर्ण ना होता है, ना ही कमजोरी आती है।
रहते 'अजरन्'' आनंद में वे, बीमारी नहीं सताती है॥२२७॥

ॐ ह्रीं अजरते नमः अर्घ्यं....।

हो राम रहित हो द्वेष रहित, तुम तो ''विराग'' के धारी हो।
इस राग-द्वेष के चक्कर में, चाहे फिरती दुनियां सारी हो॥२२८॥

ॐ ह्रीं विरागाय नमः अर्घ्यं....।

तुम पाप रहित होकर जिनवर, गतियों के सुख को छोड़े हो।
तुम रहे ''विरत'' ना कोई रत, दुनियां से मुंह को मोड़े हो॥२२९॥

ॐ ह्रीं विरताय नमः अर्घ्यं....।

परिग्रह का बोझ हटाया है, अरू रंगविहीन ''असंग'' हुए।
भावों से पूजा हम करते, आकर के तेरे चरण छुए॥२३०॥

ॐ ह्रीं असंगाय नमः अर्घ्यं....।

यह जीव अकेला ही रहता, पर से ना कोई आता है।
तुम नाम ''विविक्त'' धार करके, जीवन में पाई साता है॥२३१॥

ॐ ह्रीं विविक्ताय नमः अर्घ्यं....।

ईर्ष्या अग्नि सम है प्रभुवर, जीवों को नित्य जगाती है।
तुम हुए ''वीत मत्सर'' प्रभुवर, भक्तों का मोद दिलाती है।।२३२।।

ॐ ह्रीं वीतमत्सराय नमः अर्घ्यं....।

प्रभु तुम ''विनेय जनता बन्धु'' भव्यों के नाथ सहारा हो।
जिसने भी तेरी शरण गही, देते तुम उसे किनारा हो।।२३३।।

ॐ ह्रीं विनेयजनताबंधवे नमः अर्घ्यं....।

तुम नाम ''विलीना शेष कल्मष'' सब पाप पंक से रहित हुए।
सब कर्म नाश करके भगवन, सम्पूर्ण गुणों से रहित हुए।।२३४।।

ॐ ह्रीं विलीनाशेषकल्मषाय नमः अर्घ्यं....।

मुक्ति संग करके योग प्रभो, शुभ नाम ''वियोग'' बताया है।
मुक्ति जाकर दर्शन पाऊं, यह भाव मेरे मन आया है।।२३५।।

ॐ ह्रीं वियोगाय नमः अर्घ्यं....।

सब योगों को वश में करके, अतएव ''योगविद्'' कहलाए।
मन योगी हो तन योगी हो, काया के योगी बन जाए।।२३६।।

ॐ ह्रीं योगविदे नमः अर्घ्यं....।

तीनो लोकों को जानो तुम, ''विद्वान'' नाम शुभ ज्ञानी हो।
ज्ञानामृत भी पिया तुमने, अध्यात्म के उन्नत ध्यानी हो।।२३७।।

ॐ ह्रीं विदुषे नमः अर्घ्यं....।

जिन धर्म ज्ञान श्री गणेश और, फिर नाम ''विधाता'' पाया है।
करके अध्ययन शास्त्र सारे, अब मेरी समझ में आया है।।२३८।।

ॐ ह्रीं विधात्रे नमः अर्घ्यं....।

दर्शन तप ज्ञान चरित्र मार्ग, तुम ''सुविधि'' विधि बतलाई है।
चरित्रवान विज्ञान गुणी, पथ पर चलकर दिखलाई है।।२३९।।

ॐ ह्रीं सुविधये नमः अर्घ्यं....।

बुद्धि में अतिशय आया तो, इंद्रों ने ''सुधि'' को पुकारा है।
अतिशय बुद्धि मेरी हो, वरदान आपका प्यारा है।।२४०।।

ॐ ह्रीं सुधिये नमः अर्घ्यं....।

प्रभु ''शांतिभाक'' अरिहन्त देव, तुम क्षमा सभी को करते हो।
हे नाथ क्षमा के सागर तुम, भक्तों के संकट हरते हो॥२४१॥

ॐ ह्रीं क्षांतिभाजे नमः अर्घ्यं....।

वसुधा सम सहनशीलता है, पृथ्वी पर ''पृथ्वी मूर्ति'' हो।
पृथ्वी सम शरण भी देते हो, चहुं ओर तुम्हारी कीर्ति हो॥२४२॥

ॐ ह्रीं पृथिवीमूर्तये नमः अर्घ्यं....।

शांति पाकर शांति बांटी, शांति का तुम्ही खजाना हो।
प्रभु ''शांतिभाक'' कल्याणमयी, फिर आना हो ना जाना हो॥२४३॥

ॐ ह्रीं शांतिभाजे नमः अर्घ्यं....।

झरने की शीतल धारा सम, जिनदेव आप भी शीतल हो।
''सलिलात्मक'' नाम बड़ा प्यारा, सारे प्रश्नों के तुम हल हो॥२४४॥

ॐ ह्रीं सलिलात्मकाय नमः अर्घ्यं....।

त्रिभुवन में आप ही व्याप रहे, हे ''वायुमूर्ति'' जग में सुंदर।
तुम ज्ञानमयी ''चिद्रूप मयी'', है आत्म आत्मा के अंदर॥२४५॥

ॐ ह्रीं वायुमूर्तये नमः अर्घ्यं....।

अंदर का हो या बाहर का, सब छोड़ परिग्रह को दीना।
हो ''असंगात्मा'' संग रहित, शुद्धातम की शरण लीना॥२४६॥

ॐ ह्रीं असंगात्मने नमः अर्घ्यं....।

अग्नि समान तप ध्यान किया, कर्मों को सभी जला दीना।
तुम ''वन्हिमूर्ति'' तुम नाम मंत्र, आतम का सौख्य भी पा लीना॥२४७॥

ॐ ह्रीं बह्निमूर्तये नमः अर्घ्यं....।

तुम धर्म ध्वजा फहरा करके, तुमने अधर्म का नाश किया।
तुम ही ''अधर्मक्'' जगती में, फिर मुक्ति में विश्राम किया॥२४८॥

ॐ ह्रीं अधर्मदहे नमः अर्घ्यं....।

सब कर्मों को तुम होम किया, अविचल अविराम बढ़े पथ पर।
अतएव ''सुयज्वा'' शांतिनाथ, तुम मुक्ति धाम चढ़े रथ पर॥२४९॥

ॐ ह्रीं सुयज्वने नमः अर्घ्यं....।

आतम आराधना चिंतन कर, ''यजमानात्मा'' शिव नाम लिया।
तुम सब विभाव को तज करके, घर भक्तों का दिल बना लिया॥२५०॥

ॐ ह्रीं यजमानात्मने नमः अर्घ्यं....।

गीता छन्द

आत्म सरवर नित नहावे, नाम "सूत्वा'' रख लिया।
आनन्द से पूरित हुए प्रभु, नाम से जागा जिया॥
महिमा प्रभु की नित्य गावे, और हम पूजा करें।
हे नाथ शक्ति पास रखकर, पाप सब मन के हरें॥२५१॥

ॐ ह्रीं सुत्वने नमः अर्घ्यं....।

इन्द्र सौ कर नमन आ, "सुगाम" पूजित कह दिया।
जिन महल में आकर बसे, उपदेश जिनवर से लिया॥महिमा०॥२५२॥

ॐ ह्रीं सुत्रामपूजिताय नमः अर्घ्यं....।

ध्यान अग्नि प्रज्वलित कर, कर्म उसमें होये हैं।
नाम ''ऋत्विक'' शुभ पुकारा, सब चरण को पाए हैं॥महिमा०॥२५३॥

ॐ ह्रीं ऋत्विजे नमः अर्घ्यं....।

यज्ञ जितने भी करें हम, बनें स्वामी आप ही।
''यज्ञपति'' तुम हो जिनेश्वर, करते हैं तव जाप ही॥महिमा०॥२५४॥

ॐ ह्रीं यज्ञपतये नमः अर्घ्यं....।

देवता नर सभी मिलकर, ईश की पूजा करें।
यह ''याज्य'' शुभ ही भाव लाया, यज्ञ चरणों में करें॥महिमा०॥२५५॥

ॐ ह्रीं याज्याय नमः अर्घ्यं....।

साध्य पाने साधना हम, नित्य जिनवर की करें।
"यज्ञाङ्गम" हों सार्थक सब, मुक्ति पथ पर जब चलें॥महिमा०॥२५६॥

ॐ ह्रीं यज्ञांगाय नमः अर्घ्यं....।

पी लिया है अध्यात्म ''अमृत'', भक्तों को भी दान दें।
वाणी अमृतमयी है, नित सभी रस पान लें॥महिमा०॥२५७॥

ॐ ह्रीं अमृताय नमः अर्घ्यं....।

पास में जितना अशुभ था, भगा दे शुभ ध्यान से।
हो गया है "हवि" नाम सार्थक, जीवन लगा है त्याग में।महिमा०॥२५८॥

ॐ ह्रीं हविषे नमः अर्घ्यं....।

व्योम सम निर्मल हुए तुम, "व्योम मूर्ति" बन गए।
प्रभु दर्श कर सुन्दर सुहाना, पार भव सागर भए।महिमा०॥२५९॥

ॐ ह्रीं व्योममूर्तये नमः अर्घ्यं....।

रुप है ना गंध ही है, वर्ण से भी हो रहित।
फिर आप ही हो "अमूर्तात्मा", ज्ञान शुभ से हो सहित।महिमा०॥२६०॥

ॐ ह्रीं अमूर्तात्मने नमः अर्घ्यं....।

करम भार उतार प्रभु जी, ज्ञान केवल पा गए।
"निर्लेप" कर्मों से रहित सब, रुप तेरे भा गए।महिमा०॥२६१॥

ॐ ह्रीं निर्लेपाय नमः अर्घ्यं....।

सब करम मल धो लिये फिर, आत्मा ''निर्मल ''करी।
भाव मम् निर्मल हुए सब, भक्ति जब मैंने करी।महिमा०॥२६२॥

ॐ ह्रीं निर्मलाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभु सर्वदा स्थिर रहो तुम, चल नहीं हो ''अचल'' हो।
हम दर्श करते आपका, मन में हमारे ही रहो।महिमा०॥२६३॥

ॐ ह्रीं अचलाय नमः अर्घ्यं....।

"सौममूर्ति" शुद्ध शशि सम, शान्त, सुन्दर हो धवल।
सुर गाते हैं जिनदेव का यश, भाव होते हैं अमल।महिमा०॥२६४॥

ॐ ह्रीं सोममूर्तये नमः अर्घ्यं....।

मोहनी छवि आपकी मन, हर सुहाने सोहते।
हो "सुसौम्यात्मा" तुम प्रभु, सब भक्त मन को मोहते।महिमा०॥२६५॥

ॐ ह्रीं सुसौम्यात्मने नमः अर्घ्यं....।

सूर्य जैसे तुम जगत को, नित प्रकाशित कर रहे।
हो "सूर्यमूर्ति" तुम कहाए, तत्व भाषित कर रहे।महिमा०॥२६६॥

ॐ ह्रीं सूर्यमूर्तये नमः अर्घ्यं....।

है प्रभावी प्रभु अतिशय, जीव सब दर्शन करें।
है नाम तब पाया "महाप्रभ", कर्म का घर्षण करें।।महिमा०।।२६७।।
ॐ ह्रीं महाप्रभाय नमः अर्घ्यं....।

मन्त्र तब हर शब्द बनता, होय श्रद्धा से सहित।
नाम हो उसमें प्रभु का, "मन्त्रविद्" हो सबका हित।।महिमा०।।२६८।।
ॐ ह्रीं मंत्रविदे नमः अर्घ्यं....।

हो अलग भगवान से ना, मन्त्र कोई जगत में।
इस मन्त्र के निर्माण से है, ''मन्त्रकृत'' इस जगत में।। महिमा०।।२६९।।
ॐ ह्रीं मंत्रकृते नमः अर्घ्यं....।

आत्म का चिन्तन करें निज, सजग रहते ध्यान में।
तब इन्द्र ने ''मन्त्री'' कहा, उपदेश देकर ज्ञान में।।महिमा०।।२७०।।
ॐ ह्रीं मंत्रिणे नमः अर्घ्यं....।

मन्त्र है जो देव है वो, देव जो वो मन्त्र है।
"मन्त्रमूर्ति" हो इसी से, और बाकी तन्त्र है।।महिमा०।।२७१।।
ॐ ह्रीं मंत्रमूर्तये नमः अर्घ्यं....।

कर विनिर्मित ज्ञान को हर, तत्व के ज्ञाता हुए।
ध्यान का अमृत पिला तुम, ध्या ''अनन्तग'' को लिये।।महिमा०।।२७२।।
ॐ ह्रीं अनंतगाय नमः अर्घ्यं....।

कर्म की आधीनता तज, तुम "स्वतन्त्र" हि हो लिये।
कर्म की बेड़ी कटे हम, आपकी शरणा लिए।।महिमा०।।२७३।।
ॐ ह्रीं स्वतंत्राय नमः अर्घ्यं....।

तुम ही हो आगम प्रणेता, तुम से ही कलियाँ खिलें।
हो "तंत्रकृत" भगवान भी तुम, कर्म के गिरिवर हिलें।।महिमा०।।२७४।।
ॐ ह्रीं तंत्रकृते नमः अर्घ्यं....।

शुद्ध कर अन्तःकरण को, नाम "स्वन्तः" रख लिया।
जिनदेव मम विपदा हरे, ये शीश चरणों में दिया।।महिमा०।।२७५।।
ॐ ह्रीं स्वन्ताय नमः अर्घ्यं....।

दोहा

पाया नाम "कृतान्त" है, मृत्युराज को नाश।
अष्ट कर्म को चूर कर, पाया मुक्ति प्रकाश॥२७६॥

ॐ ह्रीं कृतान्तान्ताय नमः अर्घ्यं....।

द्रव्य ज्ञान आगम लिखा, पद "कृतान्तकृत" पाये।
दिव्य ध्वनि मुख से झरी, हम सब शीश झुकाये॥२७७॥

ॐ ह्रीं कृतान्तकृते नमः अर्घ्यं....।

भाग्यवान तुम हो प्रभु, भगवन तुम कहलाए।
"कृति" नाम सार्थक किया, शत-शत शीश झुकाए॥२७८॥

ॐ ह्रीं कृतिने नमः अर्घ्यं....।

पुरुषार्थ जो भी किया, सफल हुए सब आप।
प्रभु ''कृतार्थ'' के नाम से, करें तुम्हारी जाप॥२७९॥

ॐ ह्रीं कृतार्थाय नमः अर्घ्यं....।

करें समादर भव्य जन, और करें सत्कार।
तुम्हीं ''सत्यकृत'' हो प्रभो, करते नित्य विहार॥२८०॥

ॐ ह्रीं सत्यकृत्याय नमः अर्घ्यं....।

सभी कार्य करके हुए, तुम ''कृतकृत्य'' महान्।
मिले तुम्हारा दर्श तो, होगा मम कल्याण॥२८१॥

ॐ ह्रीं कृतकृत्याय नमः अर्घ्यं....।

मुक्ति का फल श्रेष्ठ है, लिया आपने स्वाद।
हो "कृतकृतू" परमेश्वरः, दे दो आशिर्वाद॥२८२॥

ॐ ह्रीं कृतक्रतवे नमः अर्घ्यं....।

जीवित है यह आत्मा, ''नित्य'' रहे जग जीव।
नित्य मुक्ति में तुम रहो, सुख पाएं सब जीव॥२८३॥

ॐ ह्रीं नित्याय नमः अर्घ्यं....।

मृत्यु पर जय पा गए, "मृत्युन्जय" कहलाए।
मृत्यु चरणन आपके, शत्-शत् शीश झुकाये॥२८४॥

ॐ ह्रीं मृत्युंजयाय नमः अर्घ्यं....।

मरण रहित होकर प्रभु, "अमृत्यु" सुखदाय।
आश्रय मुझको भी मिले, शत-शत शीश झुकाए॥२८५॥

ॐ ह्रीं अमृत्यवे नमः अर्घ्यं....।

अमृत पी अध्यात्म का, सबको दिया चखाय।
नाम "अमृतात्मा" हुआ, अमृत को बरसाय॥२८६॥

ॐ ह्रीं अमृतात्मने नमः अर्घ्यं....।

अमृत की तुम खान थे, अमृत देय लुटाय।
नाम "अमृतोद्भव" हुआ, जन-जन मन हर्षाय॥२८७॥

ॐ ह्रीं अमृतोद्भवाय नमः अर्घ्यं....।

ब्रह्मज्ञान और विद् हुए, ब्रह्मात्मा में लीन।
"ब्रह्मनिष्ठ" भगवन हुए, हो सद्ज्ञान प्रवीण॥२८८॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मनिष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

परम्ब्रह्म परमात्मा, "परम्ब्रह्म" का ध्यान।
पंचम गति को पाय के, किया आत्म कल्याण॥२८९॥

ॐ ह्रीं परंब्रह्मणे नमः अर्घ्यं....।

ज्ञानानन्दी आत्मा, उत्सव ध्यान कराए।
ब्रह्मात्मा पद पाय कर, मुक्ती में भिजवाए॥२९०॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मात्मने नमः अर्घ्यं....।

शुद्धात्मा का ध्यान कर, शुद्धात्मा को पाय।
"ब्रह्मसम्भवः" नाम है, केवल ज्ञान उपाय॥२९१॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मसंभवाय नमः अर्घ्यं....।

गणधर के स्वामी बने, मुनियों के हो ईश।
"महाब्रह्मपति" हो तुम्ही, जय जय जय जगदीश॥२९२॥

ॐ ह्रीं महाब्रह्मपतये नमः अर्घ्यं....।

ज्योति केवल ज्ञान की, जगमग देत जगाय।
बनकर के "ब्रह्मेट्" तुम, आतम ध्यान लगाय॥२९३॥

ॐ ह्रीं ब्रह्मेशे नमः अर्घ्यं....।

सारे पद को छोड़कर, लिया महा पद धार।
"महा ब्रह्म पदेश्वर:", दीने कर्म निखार॥२९४॥

ॐ ह्रीं महाब्रह्मपदेश्वराय नमः अर्घ्यं....।

मुदित मनोहर मूर्ति हो, हो प्रसन्न भगवान।
नाम हुआ "सुप्रसन्न" है, बारम्बार प्रणाम्॥२९५॥

ॐ ह्रीं सुप्रसन्नाय नमः अर्घ्यं....।

सदा रहो आनन्द में, नहीं क्रोध का काम।
"प्रसन्नात्मा" हो तुम्ही, करो प्रभो कल्याण॥२९६॥

ॐ ह्रीं प्रसन्नात्मने नमः अर्घ्यं....।

इन्द्रिय विग्रह तुम किया, हुए आप विख्यात।
"ज्ञान धर्मदम'' हे प्रभु'',मिला तुम्हारा साथ॥२९७॥

ॐ ह्रीं ज्ञानधर्मदमप्रभवे नमः अर्घ्यं....।

अति शान्त होकर प्रभु, किये कर्म को शान्त।
"प्रशमात्मा" शुभ नाम है, टूटे सारे भ्रान्त॥२९८॥

ॐ ह्रीं प्रशमात्मने नमः अर्घ्यं....।

''प्रशान्तात्मा'' तुम प्रभु, दिया क्षमा का दान।
मैं भी प्रभु की भक्ति से पाऊँ मुक्ति धाम॥२९९॥

ॐ ह्रीं प्रशान्तात्मने नमः अर्घ्यं....।

पुरुषों में उत्तम हुए, शास्त्र सभी बतलाए।
हो "पुराण पुरुषोतम:", शत-शत शीश झुकाए॥३००॥

ॐ ह्रीं पुराणपुरुषोत्तमाय नमः अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य

॥त्रिभंगी छन्द॥

प्रभु नाम तुम्हारा, लगता प्यारा, इसको मैं दिन-रात जपूं।
मन्त्रों की रचना, पाप से बचना, तुमको मैं दिन-रात नमूं।
अध्यातम ज्योति, ज्ञान के मोती, नित ही आप लुटाते हैं।
पूजा को आऊँ, भाव बनाऊँ, चरणन शीश झुकाते हैं।

ॐ ह्रीं स्थविष्ठादिशतनामभ्य: नमः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

॥चाल छन्द॥

सुन्दर अशोक है पीछे, अरु भक्त खड़े हैं नीचे।
तुम "महाशोक ध्वज" धारी, पूजा करते हम भारी॥३०१॥

ॐ ह्रीं महाशोकध्वजाय नमः अर्घ्यं....।

तुम शोक रहित करते हो, तुम रोग रहित करते हो।
तुम नाम "अशोक" जो पाया, पूजा को तेरी आया॥३०२॥

ॐ ह्रीं अशोकाय नमः अर्घ्यं....।

तुम सबके बने सहारे, और सबको करो किनारे।
"क" नाम तुम्हीं ने पाया, पूजा करके हर्षाया॥३०३॥

ॐ ह्रीं काय नमः अर्घ्यं....।

तुम स्वर्ग मोक्ष दिखलाओ, भक्तों को पास बुलाओ।
कहलाए "स्त्रष्टा" देवा, मैं करुं चरण की सेवा॥३०४॥

ॐ ह्रीं स्त्रष्ट्रे नमः अर्घ्यं....।

कमलों का आसन प्यारा, अरु सुन्दर रूप तुम्हारा।
तुम "पद्मविष्ट" जिन ईशा, हम नित्य झुकाएं शीशा॥३०५॥

ॐ ह्रीं पद्मविष्टराय नमः अर्घ्यं....।

लक्ष्मी चरणों की दासी, अरु तव दर्शन की प्यासी।
"पद्मेश" नाम को पाया, मैं शरण तिहारी आया॥३०६॥

ॐ ह्रीं पद्मेशाय नमः अर्घ्यं....।

तुम स्वर्ण पदम् चरणों में , हो तुम अन्तःकरणों में।
तुम नाम "पदमसम्भूति" पाए निज की अनुभूति॥३०७॥

ॐ ह्रीं पद्मसंभूतये नमः अर्घ्यं....।

तुम नाभी सुन्दर पाई, अरु कमल दिया दिखलाई।
है "पदम्नाभि" गुण पाया, तेरे चरणों में आया॥३०८॥

ॐ ह्रीं पद्मनाभये नमः अर्घ्यं....।

तुम सा ना कोई जग में, जो कमल बिछाए मग में।
तुम नाम "अनुत्तर" पाया, गुण गाकर मन हर्षाया॥३०९॥

ॐ ह्रीं अनुत्तराय नमः अर्घ्यं....।

तुम मात गर्भ में आए, पद्मा योनि को पाए।
हुए "पद्मयोनि" जगदीशा, हम नित्य झुकाएं शीशा॥३१०॥

ॐ ह्रीं पद्मयोनये नमः अर्घ्यं....।

धर्मों को जन्म दिया है, भक्तों ने ज्ञान लिया है।
ओ "जगद्योनि'' परमेशा, तारो मुझको अवधेशा॥३११॥

ॐ ह्रीं जगद्योनये नमः अर्घ्यं....।

हो ज्ञान के गुण भव सागर, भर दो ये मेरी गागर।
यह "इत्य" नाम शुभ पाया, चरणों में शीश झुकाया॥३१२॥

ॐ ह्रीं इत्याय नमः अर्घ्यं....।

नर-देव पशु सब आते, चरणों में शीश झुकाते।
"स्तुत्य" नाम को पाया, दर्शन पाकर हर्षाया॥३१३॥

ॐ ह्रीं स्तुत्याय नमः अर्घ्यं....।

स्तुतियों के ईश्वर हो, भक्तों के जगदीश्वर हो।
हे "स्तुतीश्वरः" गुणधारी, पूजा तेरी है प्यारी॥३१४॥

ॐ ह्रीं स्तुतीश्वराय नमः अर्घ्यं....।

तुम पूजा योग्य हुए हो, तुम भक्ति योग्य हुए हो।
तुम "स्तवनार्ह" पाया, मैं पुण्य बढ़ाने आया॥३१५॥

ॐ ह्रीं स्तवनार्हाय नमः अर्घ्यं....।

इन्द्रिय वश में करते हो, संयम में रत रहते हो।
हो "हृषीकेश" के धारी, मुक्ति के तुम अधिकारी॥३१६॥

ॐ ह्रीं हृषीकेशाय नमः अर्घ्यं....।

तुम मोह की फौज भगाई, दर्शन तेरा सुखदाई।
"जितजेय" नाम को धारा, प्रभु मैं कर्मों से हारा॥३१७॥

ॐ ह्रीं जितजेयाय नमः अर्घ्यं....।

कृतक्रियः हुए हो भगवन, मैं आया तेरे चरणन।
"कृतक्रिय" नाम को पाया, मैं पाप घटाने आया॥३१८॥

ॐ ह्रीं कृतक्रियाय नमः अर्घ्यं....।

द्वादशी सभा में राजे, सारे गुण गण से साजे।
तुम हुए "गणाधिप" स्वामी, दुखमय हो अन्तर्यामी॥३१९॥
ॐ ह्रीं गणाधिपाय नमः अर्घ्यं....।

तुम गणों में श्रेष्ठ हुए हो, उनमें परिवेष्ट हुए हो।
"गण ज्येष्ठ" तुम्ही मतवारे, कर्मों को आप निवारे॥३२०॥
ॐ ह्रीं गणज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

धरती को धन्य किये हो, और गणना योग्य हुए हो।
तुम "गण्य" नाम को पाया, मुक्ति पथ पाने आया॥३२१॥
ॐ ह्रीं गण्याय नमः अर्घ्यं....।

शुभ पुण्य उदय जब आया, पुण्यों का कोष भराया।
तुम "पुण्य" नाम को पाया, मैं पुण्य बढ़ाने आया॥३२२॥
ॐ ह्रीं पुण्याय नमः अर्घ्यं....।

शुभ समवशरण है प्यारा, भक्तों को तुमने तारा।
हो "गणाग्रणी" जिन स्वामी, तुम हुए जगत में नामी॥३२३॥
ॐ ह्रीं गणाग्रण्ये नमः अर्घ्यं....।

ज्ञानान्दी को पाया, निज में आनन्द समाया।
तुम "गुणाकार" कहलाए, ये भक्त चरण में आए॥३२४॥
ॐ ह्रीं गुणाकराय नमः अर्घ्यं....।

सागर सम गुण को पाया, गुण आप में आन समाया।
तुम "गुणाम्भोधि" के धारी, मैं आया शरण तिहारी॥३२५॥
ॐ ह्रीं गुणाम्भोधये नमः अर्घ्यं....।

तुमने गुण को है जाना, गुण ने तुम को है माना।
तुम "गुणज्ञ" नाम के धारी, पूजा हम करें तिहारी॥३२६॥
ॐ ह्रीं गुणज्ञाय नमः अर्घ्यं....।

नायक भी तुम्हीं कहाओ, भक्तों को नहीं भगाओ।
"गुणनायक" संज्ञा पाई, भक्तों ने ज्योति जलाई॥३२७॥
ॐ ह्रीं गुणनायकाय नमः अर्घ्यं....।

गुण का आदर करते हो, गुण से गागर भरते हो।
हो "गुणादरी" शुभ नामी, दुख मेटो अन्तर्यामी॥३२८॥
ॐ ह्रीं गुणादरिणे नमः अर्घ्यं....।
वैभाविक गुण को छेदा, जड़ चेतन भेद अभेदा।
"गुणोच्छेदी" नाम को पाया, प्रभु मैं जग में भरमाया॥३२९॥
ॐ ह्रीं गुणोच्छेदिने नमः अर्घ्यं....।
वैभाविक गुण ना स्वामी, तुम दोष रहित हो नामी।
था ''निर्गुण'' नाम धराया, मैं अर्घ्यं चढ़ाने आया॥३३०॥
ॐ ह्रीं निर्गुणाय नमः अर्घ्यं....।
प्रभु पुण्य फला अरिहंता, बतलाया जिन भगवंता।
तुम नाम ''पुण्यगी'' पाया, हम चरणन अर्घ्य चढ़ाया॥३३१॥
ॐ ह्रीं पुण्यगिरे नमः अर्घ्यं....।
पावन धारा की वाणी, भक्ति में है जिनवाणी।
तुम नाम तो "गुण" ही पाया, पावन होने मैं आया॥३३२॥
ॐ ह्रीं गुणाय नमः अर्घ्यं....।
सबको को देते हो शरणा, भवसागर से है तरना।
तुम नाम "शरण्य" धराया, मैं शरण मांगने आया॥३३३॥
ॐ ह्रीं शरण्याय नमः अर्घ्यं....।
वचनों में पुण्य भरा है, अमृतमय वचन भरा है।
तुम "पुण्यवाक" के दानी, इन्द्रियों ने महिमा जानी॥३३४॥
ॐ ह्रीं पुण्यवाचे नमः अर्घ्यं....।
पावन है नाम तुम्हारा, पावन है जीवन प्यारा।
तुम "पूत" नाम के धारी, महिमा है जग में न्यारी॥३३५॥
ॐ ह्रीं पूताय नमः अर्घ्यं....।
मुक्ति ने वरण किया था, अरु वर ही मान लिया था।
प्रभु नाम "वरेण्य" अपनाया, भवसागर तरने आया॥३३६॥
ॐ ह्रीं वरेण्याय नमः अर्घ्यं....।

उस पुण्य ने नाथ बनाया, स्वामी तुमको अपनाया।
फिर नाम था "पुण्यनायक", तुम ही हो मुक्ति दायक॥३३७॥
ॐ ह्रीं पुण्यनायकाय नमः अर्घ्यं....।

गणना नहीं कर सकते हैं, गुण भी नहीं गा सकते हैं।
तुम ही "अगण्य" कहलाए, हम शत-शत शीश झुकाए॥३३८॥
ॐ ह्रीं अगण्याय नमः अर्घ्यं....।

बुद्धि ने शुद्धि पाई, यह धरा धन्य हो जाई।
फिर नाम "पुण्यधी" पाया, भक्तों ने मिलकर गाया॥३३९॥
ॐ ह्रीं पुण्यधिये नमः अर्घ्यं....।

सारे गुण शोभित होते, ये भक्त भी मोहित होते।
इन्द्रों ने "गुण्य" पुकारा, गुण के आगे सब हारा॥३४०॥
ॐ ह्रीं गुण्याय नमः अर्घ्यं....।

प्रभु निश-दिन पुण्य कमाते, जग में नाही भरमाते।
प्रभु हुए "पुण्यकृत" न्यारे, भक्तों के पुण्य प्रसारे॥३४१॥
ॐ ह्रीं पुण्यकृते नमः अर्घ्यं....।

शासन को पावन कीना, दृष्टि है पुण्य नवीना।
हो "पुण्यशासन" अधिकारी, तरने की मेरी बारी॥३४२॥
ॐ ह्रीं पुण्यशासनाय नमः अर्घ्यं....।

तुम ''धर्माराम'' कहाए, प्रभु धर्मोद्यान खिलाए।
भक्तों का मन भी हर्षा, दर्शन पाने को तरसा॥३४३॥
ॐ ह्रीं धर्मारामाय नमः अर्घ्यं....।

''गुणग्राम'' हुए जिन स्वामी, तारा है अन्तर्यामी।
है ग्राम सी छाया पाई, प्रभु का शासन सुखदायी॥३४४॥
ॐ ह्रीं गुणग्रामाय नमः अर्घ्यं....।

हो ''पुण्यापुण्यनिरोधक'', भावों के हो अवरोधक।
प्रभु शुद्ध दशा प्रगटाई, आतम शुद्धि करवाई॥३४५॥
ॐ ह्रीं पुण्यापुण्यनिरोधाय नमः अर्घ्यं....।

"पापापेत" नाम सुहाता, भक्तों के काम है आता।
प्रभु हैं निष्पाप प्रवीणा, आतम में ध्यान है कीना॥३४६॥

ॐ ह्रीं पापापेताय नमः अर्घ्यं....।

हो "विपापात्मा" भगवन, अर्पण करते हैं तन-मन।
सब पाप मेरे धुल जाएं; तज पाप प्रभु को ध्याएं॥३४७॥

ॐ ह्रीं विपापात्मने नमः अर्घ्यं....।

हो तुम्ही ''विपाप्मा'' जिनवर, मूरत तव बड़ी मनोहर।
हम कर्म रहित हो जाएं, बस यही भाव नित भाएं॥३४८॥

ॐ ह्रीं विपाप्मने नमः अर्घ्यं....।

हो "वीतकल्मष" जिन ज्ञानी, सच्ची है तेरी वाणी।
कर्मों का मल धुल जाए, शुद्धि करवाने आए॥३४९॥

ॐ ह्रीं वीतकल्मषाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभु जी ''निर्द्वंद्व'' हुए हैं, नहिं कलह भी आप किये हैं।
करो वीतराग जिन देवा, मैं करूं तुम्हारी सेवा॥३५०॥

ॐ ह्रीं निर्द्वंद्वाय नमः अर्घ्यं....।

भुजंग प्रयात (नरेन्द्रं फणीन्द्रं)

प्रभो आप ''निर्मद'' हैं, ना मद है कोई।
मिला धन्य गौरव, ना अभिमान कोई॥
प्रभो नाम की तेरे, पूजा रचावें।
मिले आत्म सम्पति, समाधि को पावें॥३५१॥

ॐ ह्रीं निर्मदाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभो ''शांत'' मुद्रा, जगत को लुभाये।
ये क्रोधादि मुद्रा, किसी को न भाये॥ प्रभो०॥३५२॥

ॐ ह्रीं शांताय नमः अर्घ्यं....।

हो ''निर्मोह'' अज्ञान, को दूर करता।
है मोही जगत में, सदा पाप करता॥ प्रभो०॥३५३॥

ॐ ह्रीं निर्मोहाय नमः अर्घ्यं....।

बनकर ''निरूपद्रव'', बाधा न आए।
चरणों में आया, करम ना सताए।। प्रभो०।।३५५।।

ॐ ह्रीं निरुपद्रवाय नमः अर्घ्यं....।

लिया दिव्य चक्षु न होता स्पंदन।
बने ''निर्निमेषी'', न होता है क्रन्दन।। प्रभो०।।३५५।।

ॐ ह्रीं निर्निमेषाय नमः अर्घ्यं....।

पिया आत्म अमृत, न आहार करते।
"निराहार" रहकर, भी जीवन को धरते।। प्रभो०।।३५६।।

ॐ ह्रीं निराहाराय नमः अर्घ्यं....।

सदा ध्यान करते, क्रिया है न कोए।
रहकर के ''निष्क्रिय'', करम सारे खोए।। प्रभो०।।३५७।।

ॐ ह्रीं निष्क्रियाय नमः अर्घ्यं....।

आती न बाधा, ''निरुपप्लव'' ज्ञानी।
हो निर्विघ्न कारज, सदा आत्म ध्यानी।।प्रभो०।।३५८।।

ॐ ह्रीं निरुपप्लवाय नमः अर्घ्यं....।

सारे कलंको को, धोया है तुमने।
प्रभु ''निष्कलंकन'', को पाया है तुमने।।प्रभो०।।३५९।।

ॐ ह्रीं निष्कलंकाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभो पाप डर कर, सदा दूर भागे।
"निरस्तैना" शुभ हो, सदा पास आए।।प्रभो०।।३६०।।

ॐ ह्रीं निरस्तैनसे नमः अर्घ्यं....।

जो अपराध की मां, उसे आप नाशा।
हो ''निर्धूतआगस्'', लिया पास वासा।।प्रभो०।।३६१।।

ॐ ह्रीं निर्धूतागसे नमः अर्घ्यं....।

ध्यानी "निरास्त्रव" ही कर्म को रोके।
संवर करे और, पापों को रोके।। प्रभो०।।३६२।।

ॐ ह्रीं निरास्त्रवाय नमः अर्घ्यं....।

"विशाला" प्रभु तेरा मन्दिर बना है।
रहे शांति जग में, ये तम्बू तना है॥ प्रभो०॥३६३॥

ॐ ह्रीं विशालाय नमः अर्घ्यं....।

"विपुलज्योति" धारी, जो जग को प्रकाशे।
हन्ता हो तम के, सभी कर्म नाशे॥ प्रभो०॥३६४॥

ॐ ह्रीं विपुलज्योतिषे नमः अर्घ्यं....।

"अतुल" गुण भरे हैं, जो तोले न जाएं।
शरण में भी आकर के, माथा झुकाएं॥ प्रभो०॥३६५॥

ॐ ह्रीं अतुलाय नमः अर्घ्यं....।

चिन्तामणि सर्व चिन्तन न होता।
"अचिन्तन" का वैभव, सदा साथ रहता॥ प्रभो०॥३६६॥

ॐ ह्रीं अचिन्त्यवैभवाय नमः अर्घ्यं....।

"सुसंवृत" बने पूर्व, संवर है कीना।
तुम्हारी शरण में, सभी पाप हीना॥ प्रभो०॥३६७॥

ॐ ह्रीं सुसंवृत्ताय नमः अर्घ्यं....।

"सुगुप्तात्मा" ने, ही आतम बचाया।
अरि कर्म को ध्यान, से ही भगाया॥ प्रभो०॥३६८॥

ॐ ह्रीं सुगुप्तात्मने नमः अर्घ्यं....।

"सुबुध" ज्ञान धारी, तिहूं लोक जानें।
दो हमको शरण तो, तेरी बात मानें॥ प्रभो०॥३६९॥

ॐ ह्रीं सुबुधे नमः अर्घ्यं....।

सापेक्ष नय से, कथन आप करते।
"सुनयतत्त्ववित" बन, नहीं आप डरते॥ प्रभो०॥३७०॥

ॐ ह्रीं सुनयतत्त्वविदे नमः अर्घ्यं....।

चारों को छोड़ा है, बस एक पाया।
प्रभो "एकविध" ही तो, बनकर दिखाया॥ प्रभो०॥३७१॥

ॐ ह्रीं एकविद्याय नमः अर्घ्यं....।

"महाविद्य" केवल, की ज्योति जलाए।
प्रभु वर सभी जीव, को पथ दिखाए॥ प्रभो०॥३७२॥
ॐ ह्रीं महाविद्यालय नमः अर्घ्यं....।
सदा आत्मा से, निजातम को ध्याया।
"मुनि" नाम पाकर, सदा मौन आया॥ प्रभो०॥३७३॥
ॐ ह्रीं मुनये नमः अर्घ्यं....।
सतत् आप निज गुण, का वर्धन ही करते।
इन्ही गुण से ''परिवृढ़'', झोली को भरते॥ प्रभो०॥३७४
ॐ ह्रीं परिवृढाय नमः अर्घ्यं....।
"पती" के सदृश, जीव रक्षा को करते।
सभी प्राणियों के, दुखों को हैं हरते॥ प्रभो०॥३७५॥
ॐ ह्रीं पत्ये नमः अर्घ्यं....।

॥चौपाई॥

केवल ज्ञान भक्ति के धारी, ''धीश'' नाम पाया सुखकारी।
अमृतमय मैं नाम जपूंगा, आतम ध्याकर मुक्ति वरुंगा॥३७६॥
ॐ ह्रीं धीशाय नमः अर्घ्यं....।
"विद्यानिधि" स्वपर उपकारी, ऐसे रत्नों की हो क्यारी।
सागर की गहराई पाए, तभी ज्ञान रत्नों के पाए॥३७७॥
ॐ ह्रीं विद्यानिधये नमः अर्घ्यं....।
लोकालोक जगत को जानो, हो प्रत्यक्ष दर्श को मानो।
"साक्षी" नाम पुकारा सबने, तभी कर्म भागे थे क्षण में॥३७८॥
ॐ ह्रीं साक्षिणे नमः अर्घ्यं....।
मोक्ष मार्ग के हो उपदेशक, राह दिखाओ मुझको बेशक।
नाम "विनेता" के तुम धारी, पूजा करते नित्य तुम्हारी॥३७९॥
ॐ ह्रीं विनेत्रे नमः अर्घ्यं....।
विकराली है काल की छाया, नाश करो तुम सारी माया।
शुभ "विहितांतक" नाम है प्यारा, अप्रण करते जीवन सारा॥३८०॥
ॐ ह्रीं विहितान्तकाय नमः अर्घ्यं....।

नरक आदि से आप बचाओ, सबके ''पिता'' भी आप कहाओ।
पिता मान मैं शरण में आया, दे दो मुझको अपनी छाया॥३८१॥
ॐ ह्रीं पित्रे नमः अर्घ्यं नमः अर्घ्यं....।

गुरुवर ने गुरु तुमको माना, हो उत्कृष्ट यही है जाना।
प्रभु ''पितामह'' सम कहलाए, भक्ति को हम तेरी पाए॥३८२॥
ॐ ह्रीं पितामहाय नमः अर्घ्यं....।

जग में दीन दुखी हैं सारे, आकर तेरे चरण पखारे।
''पाता'' ने रक्षा है कीनी, तभी राह मुक्ति की लीनी॥३८३॥
ॐ ह्रीं पात्रे नमः अर्घ्यं....।

पावन जीवन पावन करता, वन पा करके ध्यान को धरता।
हो ''पवित्र'' मुझको भी कर दो, पावनता से झोली भर दो॥३८४॥
ॐ ह्रीं पवित्राय नमः अर्घ्यं....।

पावन मन है पावन तन है, पावन ही सारा जीवन है।
''पावन'' मुझको भी कर देना, अपने चरणों में रख लेना॥३८५॥
ॐ ह्रीं पावनाय नमः अर्घ्यं....।

हितकारी संदेश सुनाया, सुनकर हित मारग को पाया।
सार्थक जीवन "गति" से कीना, हमने पाया भाव नवीना॥३८६॥
ॐ ह्रीं गतये नमः अर्घ्यं....।

भाई बन्धु बहन तुम्हीं हो, मात-पिता अरु जन्य तुम्हीं हो।
''त्राता'' हो रक्षा तुम करना, मेरी आंखों मे ही बसना॥३८७॥
ॐ ह्रीं त्रात्रे नमः अर्घ्यं....।

औषध सम है नाम तुम्हारा, सब रोगों से मिले सहारा।
"भिषग्वर" अमृतमय तुम हो, धरती पर परमेश्वर तुम हो॥३८८॥
ॐ ह्रीं भिषग्वराय नमः अर्घ्यं....।

श्रेष्ठ जगत में हो तुम जिनवर, श्रेष्ठ तुम्हीं जग में हो प्रभुवर।
नाम "वर्य" को कीना धारण, जीवों के तुम ही हो तारण॥३८९॥
ॐ ह्रीं वर्याय नमः अर्घ्यं....।

कामधेनु हो कल्पवृक्ष हो, संकटहारी आप रक्ष हो।
''वरद्'' नाम वरदान को देवे, जो भी नाम प्रभु का लेवे॥३९०॥
ॐ ह्रीं वरदाय नमः अर्घ्यं....।

ज्ञान लक्ष्मी तुमको है भाई, ज्ञान "परम" सबको सुखदाई।
ज्ञान है अमृत ज्ञान है शक्ति, लेते जीव ज्ञान से मुक्ति॥३९१॥
ॐ ह्रीं परमाय नमः अर्घ्यं....।

तुमने निज कल्याण किया है, जन कल्याणक मार्ग दिया है।
नाम "पुमान" पुण्य का कर्ता, सारे पाप शमन ये करता॥३९२॥
ॐ ह्रीं पुंसे नमः अर्घ्यं....।

आगम अरु सिद्धान्त बताया, द्वादशांग का रुप दिखाया।
''कवि'' बने हो रवि सम चमके, रुप आपका दम-दम दमके॥३९३॥
ॐ ह्रीं कवये नमः अर्घ्यं....।

आदि मध्य का अन्त किया है, मुक्तीपुर का पंथ लिया है।
नाम "पुराणपुरुष" है पाया, पढ इतिहास समझ में आया॥३९४॥
ॐ ह्रीं पुराणपुरुषाय नमः अर्घ्यं....।

गुण धारी गुण ऊँचा पाया, इन्हीं गुणों ने ज्ञान बढ़ाया।
''वर्षीयान'' जगत में बोला, ज्ञान पिण्ड अपना है खोला॥३९५॥
ॐ ह्रीं वर्षीयसे नमः अर्घ्यं....।

''ऋषभ'' नाम है पावन तेरा, सौख्य बढावे निश्चित मेरा।
पूजा करने इन्द्र भी आया, पूजा करके वो हर्षाया॥३९६॥
ॐ ह्रीं ऋषभाय नमः अर्घ्यं....।

आदिनाथ हो आदि विधाता, आपने दे दी सबको साता।
"पुरु" हुए तीर्थंकर केवल, नाम आपका देता है बल॥३९७॥
ॐ ह्रीं पुरवे नमः अर्घ्यं....।

सारा जग सम्मान है करता, सर्व जगत गुणगान है करता।
बने "प्रतिष्ठाप्रसवादि" पुजारी, पूजा करते सब नर नारी॥३९८॥
ॐ ह्रीं प्रतिष्ठाप्रसवाय[1] नमः अर्घ्यं....।

साध्य रहे तो साधन होता, कार्य होय तो कारण होता।
मोक्ष मार्ग के ''हेतु'' कहाए, चरणों में हम शीश नवाए।।३९९।।

ॐ ह्रीं हेतवे नमः अर्घ्यं....।

तीन भुवन सुख-दुख के धारे, पुण्यवान पाए सुख सारे।
हो ''भुवनैक पितामह'' ज्ञानी, चरणों में आते हैं प्राणी।।४००।।

ॐ ह्रीं भुवनैकपितामहाय नमः अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्यं

इन्द्रिय के सुख को छोड़ा था जिन, आतम में जाकर लीन हुए।
यह अष्ट कर्म को नष्ट करे, तीर्थंकर केवल ज्ञान लिये।
यह अष्ट द्रव्य का बना अर्घ्यं, पूजा नामों की करते हैं।
पावन नामों में अमृत है, अमृतमय जीवन करते हैं।

ॐ ह्रीं महाशोकध्वजादिशतनामभ्यः पूर्णार्घ्यं......।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

।।भुजंग प्रयात।। नरेन्द्रं फणीन्द्रं

वपु में सभी शुभ्र होते हैं लक्षण।
''श्रीवृक्षलक्षणा'', करें सबका रक्षण।।
तुम्हारे ही नामों की माला बनाऊँ।
जपूं रात-दिन मैं कहीं भी न जाऊँ।।४०१।।

ॐ ह्रीं श्रीवृक्षलक्षणाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभु सूक्ष्म इतने कि आखें न देखें।
इसी से "श्लक्ष्ण" के नाम से लेखें।तुम्हारे॰।।४०२।।

ॐ ह्रीं श्लक्ष्णाय नमः अर्घ्यं....।

लक्षण विलक्षण प्रभो आपके हैं।
"लक्षण्य" जो नाम प्रभु जाप के हैं।तुम्हारे॰।।४०३।।

ॐ ह्रीं लक्षण्याय नमः अर्घ्यं....।

श्री वृक्ष स्वास्तिक के चिन्ह बताए।
आदि "शुभ लक्षण" हो, सहस नाम पाए।तुम्हारे०॥४०४॥
ॐ ह्रीं शुभलक्षणाय नमः अर्घ्यं....।

इन्द्रिय रहित है न इन्द्री से जाने।
नाम "निरक्ष" है निज धर्म माने।तुम्हारे०॥४०५॥
ॐ ह्रीं निरक्षाय नमः अर्घ्यं....।

कमल सम हैं नयना वो अभिराम निरखे।
प्रभु "पुण्डरीकाक्ष" को नित्य दरशे।तुम्हारे०॥४०६॥
ॐ ह्रीं पुण्डरीकाक्षाय नमः अर्घ्यं....।

करो पुष्ट आतम गुणों को सदा ही।
"पुष्कल" बने ना हो अवगुण कदा ही।तुम्हारे०॥४०७॥
ॐ ह्रीं पुष्कलाय नमः अर्घ्यं....।

रमणीय नेत्रों को, धारण हैं करते।
करम "पुष्करेक्षण", निवारण हैं करते।तुम्हारे०॥४०८॥
ॐ ह्रीं पुष्करेक्षणाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभो मोक्ष सिद्धि, के दायक तुम्हीं हो।
प्रभो "सिद्धिदा" के, प्रदायक तुम्हीं हो।तुम्हारे०॥४०९॥
ॐ ह्रीं सिद्धिदाय नमः अर्घ्यं....।

संकल्प शक्ति को, दृढ आप करते।
बने "सिद्ध संकल्प," सब काम सरते।तुम्हारे०॥४१०॥
ॐ ह्रीं सिद्धसंकल्पाय नमः अर्घ्यं....।

निश्चित प्रभो सिद्ध, पदवी वरेंगे।
बनेंगे "सिद्धात्मा", वे जग से तरेंगे।तुम्हारे०॥४११॥
ॐ ह्रीं सिद्धात्मने नमः अर्घ्यं....।

प्रभुमोक्ष मारग दिखाया तुम्हीं ने।
मुक्त "सिद्धसाधन" बनाया तुम्हीं ने।तुम्हारे०॥४१२॥
ॐ ह्रीं सिद्धसाधनाय नमः अर्घ्यं....।

चराचर सभी लोक को आप जानो।
महा ''बुद्धबौध्य'' के ज्ञान को मानो।।तुम्हारे०।।४१३।।

ॐ ह्रीं बुद्धबोध्याय नमः अर्घ्यं....।

रतनत्रय विभूति से, सम्पन्न देवा।।
"महाबोधि" भगवन, करुं तेरी सेवा।।तुम्हारे०।।४१४।।

ॐ ह्रीं महाबोधये नमः अर्घ्यं....।

संयम् से बढकर, के मुक्ति को पाए।
प्रभो ''वर्धमान'', तेरे गीत गाए।।तुम्हारे०।।४१५।।

ॐ ह्रीं वर्द्धमानाय नमः अर्घ्यं....।

कर जोड़ करके, सभी ऋद्धि आती।
''महर्द्धिक'' हुये हैं, हमें बात भाती।।तुम्हारे०।।४१६।।

ॐ ह्रीं महर्द्धिकाय नमः अर्घ्यं....।

प्रथमानु उपयोग, वेदों के कारण।
तभी आप "वेदांग", कष्ट निवारण।।तुम्हारे०।।४१७।।

ॐ ह्रीं वेदांगाय नमः अर्घ्यं....।

सभी वेद जानो, सभी शास्त्र जानो।
बने "वेदविद" तुम, तुम्हीं को प्रणामो।।तुम्हारे०।।४१८।।

ॐ ह्रीं वेदविदे नमः अर्घ्यं....।

योगीश मुनियों ने, जाना है तुमको।
''वेद्य'' शुभानाम, माना है तुमको।।तुम्हारे०।।४१९।।

ॐ ह्रीं वेद्याय नमः अर्घ्यं....।

होकर दिगम्बर, यथा रुप धारा।
बने "जातरुप", है संकट निवारा।।तुम्हारे०।।४२०।।

ॐ ह्रीं जातरूपाय नमः अर्घ्यं....।

विद्वान नगरी, में श्रेष्ठता पाई।
नाम "विदांवर", मिला सौख्य दाई।।तुम्हारे०।।४२१।।

ॐ ह्रीं विदांवराय नमः अर्घ्यं....।

ज्ञातव्य होते हो, केवल के द्वारा।
हुए "वेदवेद्य", तुम्हारा सहारा।।तुम्हारे०।।४२२।।
ॐ ह्रीं वेदवेद्याय नमः अर्घ्यं....।

आतम के अनुभव से, भगवन को जाने।
"स्वयंवेद्य" जिनवर, तुम्हीं को ही माने।।तुम्हारे०।।४२३।।
ॐ ह्रीं स्वसंवेद्याय नमः अर्घ्यं....।

त्रिदेवा रहित हो, हो सम्यक्त्व धारी।
"विवेद" बने हो, गमन में बिहारी।।तुम्हारे०।।४२४।।
ॐ ह्रीं विवेदाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभो सर्व वक्ताओं, में श्रेष्ठ तुम हो।
तभी "वदताम्बर" भी, ज्ञाता तुम्हीं हो।।तुम्हारे०।।४२५।।
ॐ ह्रीं वदताम्बराय नमः अर्घ्यं....।

।।शम्भु छन्द।।

आतम का जनम नहीं होता, आतम का मरण नहीं होता।
प्रभु आप "अनादि निधन" हुए, जग में आ करके ना सोता।।४२६।।
ॐ ह्रीं अनादिनिधनाय नमः अर्घ्यं....।

हो अक्ष अगोचर भगवन तुम, हम प्राणी भक्ति कर जानें।
तुम "व्यक्त" रहो अव्यक्त नहीं, अनुभव से तुमको ही मानें।।४२७।।
ॐ ह्रीं व्यक्ताय नमः अर्घ्यं....।

वाणी अतिशय अमृत द्वारा, स्पष्ट रहो अभिव्यक्त रहो।
हो "व्यक्तवाक्" विद्वान श्रेष्ठ, अतिशय धरते सम्यकत्व अहो।।४२८।।
ॐ ह्रीं व्यक्तवाचे नमः अर्घ्यं....।

दर्पण सम शासन करते हो, स्पष्ट अलग ही दिखता है।
सब भक्त "व्यक्तशासन" शासित, जाकर के इन्द्र भी लिखता है।।४२९।।
ॐ ह्रीं व्यक्तशासनाय नमः अर्घ्यं....।

जब कर्म भूमि प्रारम्भ हुई, युग के आदि में युगाधार।
हो "युगादिकृत" जिनदेव तुम्ही, सम्यक की आए नित बहार।।४३०।।
ॐ ह्रीं युगादिकृते नमः अर्घ्यं....।

आधार बने हो भक्तों के, प्रभु "युगाधार" ही कहलाए।
चरणों की शरणा जो पाए, वह भव से पार उतर जाए॥४३१॥
ॐ ह्रीं युगाधाराय नमः अर्घ्यं....।
आकर युगादि में जन्मे हो, इन्द्रों ने ''युगादि'' पुकारा है।
शिक्षा, दीक्षा देकर के ही, भक्तों को तुमने तारा है॥४३२॥
ॐ ह्रीं युगादये नमः अर्घ्यं....।
हो पूर्व दिशा की लाली तुम, पूरब के दिव्य दिवाकर हो।
हो कर्म भूमि के अग्र जन्म, "जगदादिज" आप प्रभाकर हो॥४३३॥
ॐ ह्रीं जगदादिजाय नमः अर्घ्यं....।
इन्द्रों से ज्यादा वैभव है, ऐश्वर्य अति क्रान्ता कर्त्ता।
इसलिए "अतीन्द्र" हुए प्रभुवर, सारे जग के भी हो भर्ता॥४३४॥
ॐ ह्रीं अतीन्द्राय नमः अर्घ्यं....।
इन्द्रिय से प्रभु को ना जाने, इन्द्रिय तो होती नाशवान।
हो आप "अतिन्द्रिय" जिनवर जी, ध्या हम बनते सौभाग्यवान॥४३५॥
ॐ ह्रीं अतींद्रियाय नमः अर्घ्यं....।
बुद्धि ने सारा जग घूमा, विश्राम किया तव चरणों में।
प्रभु "धीन्द्र" बुद्धि के हो स्वामी, तुमको पाया आचरणों में॥४३६॥
ॐ ह्रीं धीन्द्राय नमः अर्घ्यं....।
सब इन्द्र नरेन्द्रों की सम्पत्ति, जिन आपके सम्मुख फीकी है।
आतम का धन जिसने पाया, फिर हो "महेन्द्र" तव नीकी है॥४३७॥
ॐ ह्रीं महेन्द्राय नमः अर्घ्यं....।
प्रत्यक्ष सूक्ष्म हर वस्तु का, हे देव निरीक्षण करते हो।
"अतिन्द्रियार्थद्रक" बन के प्रभु, तब आप परीक्षण करते हो॥४३८॥
ॐ ह्रीं अतींद्रियार्थदृशे नमः अर्घ्यं....।
इन्द्रिय जगवासी को भगवन, जग में भटकाती रहती है।
पर आप "अनिन्द्रिय" मुनि कहे, ये आपके बस में रहती है॥४३९॥
ॐ ह्रीं अनिंद्रियाय नमः अर्घ्यं....।

अहमिन्द्र देव से पूजित हो, पूजित हो नर और इन्द्रों से।
"अहमिन्द्राचार्य" महान हुए, वन्दित हैं सारे वृन्दों से॥४४०॥

ॐ ह्रीं अहमिन्द्राच्यार्य नमः अर्घ्यं....।

स्वर्गों के सुख में लीन इन्द्र, नित जिनवर को आ नमन करे।
तब नाम "महेन्द्रमहित" धर के, चरणों में आकर भक्ति करे॥४४१॥

ॐ ह्रीं महेंद्रमहिताय नमः अर्घ्यं....।

हैं सर्व गुणों के धारी जिन, गुण ने ख्याति फैलाई है।
प्रभुवर ''महान'' गौरवशाली, भक्तों ने भक्ति गाई है॥४४२॥

ॐ ह्रीं महते नमः अर्घ्यं....।

हो जगत श्रेष्ठ सबसे ऊँचे, आने जाने का काम नहीं।
"उद्‌भव" है सुन्दर नाम प्रभु, सिद्धालय वासी आप सही॥४४३॥

ॐ ह्रीं उद्‌भाव नमः अर्घ्यं....।

मुक्ति को लक्ष्य बनाया तो, ''कारण'' जिनवर ही बनते हैं।
बिन कारण कार्य नहीं होता, कारण बिन काज न सरते हैं॥४४४॥

ॐ ह्रीं कारणाय नमः अर्घ्यं....।

भावों की शुद्धि के कर्ता, होने से "कर्ता" कहलाए।
हो जगत पिता तुम आत्मशुद्धि, आतम में निज को बहलाए॥४४५॥

ॐ ह्रीं कर्त्रे नमः अर्घ्यं....।

विश्व सिन्धु को पार किया, "पारग" बन जगत प्रसिद्ध हुए।
जा बैठे हो सिद्धालय में, श्रेणी में जाकर सिद्ध भए॥४४६॥

ॐ ह्रीं पारगाय नमः अर्घ्यं....।

भक्तों को भव से पार करो, "भवतारग" कहलाते गुरुवर।
मुझको भी पार लगाना है, चरणों में आए हम जिनवर॥४४७॥

ॐ ह्रीं भवतारगाय नमः अर्घ्यं....।

गम्भीर महाविज्ञानी हैं, वे अवगाहन ना करते हैं।
"अगह्य" नाम के धारक हो, भक्ति मय ही हो सकते हैं॥४४८॥

ॐ ह्रीं अगाह्याय नमः अर्घ्यं....।

योगी जब ध्यान धरेंगे तब, तेरा ही ध्यान लगाएंगे।
पर "गहन" आप इतने ही हैं, फिर भी तुमको ही ध्याएंगे।।४४९।।

ॐ ह्रीं गहनाय नमः अर्घ्यं....।

इन्द्रिय में इतनी शक्ति ना, प्रत्यक्ष प्रभु को देख सके।
तुम "गुह्य" नाम सुन्दर धारा, कागज में नाहीं लेख सके।।४५०।।

ॐ ह्रीं गुह्या नमः अर्घ्यं....।

''उपजाति छन्द''

अनन्त जिन को उत्कृष्ट माना, ''परार्घ्य'' बनकर हुए महाना।
संसार तारक भव के निवारक, पूजूँ चरण मैं, हो दुःख हारक।।४५१।।

ॐ ह्रीं परार्घ्याय नमः अर्घ्यं....।

परम ईश जाना है जग में प्रधाना।
श्री "परमेश्वर" को शीश झुकाना।।४५२।।

ॐ ह्रीं परमेश्वराय नमः अर्घ्यं....।

ऋद्धि सभी आप में वास करतीं।
अनन्तर्द्धि का ही जाप करती।।४५३।।

ॐ ह्रीं अनन्तर्द्धये नमः अर्घ्यं....।

ऋद्धि है इतनी कि मर्याद नाहीं।
''अमेयर्द्धि'' का नाम पाहीं।।४५४।।

ॐ ह्रीं अमेयर्द्धये नमः अर्घ्यं....।

अचिन्तय है ऋद्धि नहीं सोच पाए।
''अचिन्तयर्द्धि'' ही तो नाम पाए।।४५५।।

ॐ ह्रीं अचिन्त्यद्र्धये नमः अर्घ्यं....।

ज्ञान की सीमा तुम्हारी नहीं है।
"समग्रधी" भी बिहारी नहीं है।।४५६।।

ॐ ह्रीं समग्रधिये नमः अर्घ्यं....।

तुम्ही प्रमुख और सर्व प्रधाना।
कैवल्य ज्ञानी हो "प्राग्रय" है माना।।४५७।।

ॐ ह्रीं प्राग्र्याय नमः अर्घ्यं....।

सभी लोक मंगल हैं तुमको ही माने।
प्रभु "प्रागहर" नाथ तुमको ही जाने।।४५८।।

ॐ ह्रीं प्राग्रहराय नमः अर्घ्यं....।

लोकाग्र में जिन ही जाकर विराजे।
''अभ्यग्र'' इससे प्रभो नाम साजे।।४५९।।

ॐ ह्रीं अभ्यग्राय नमः अर्घ्यं....।

होकर विलक्षण ही ''प्रत्यग्र'' पाया।
प्रभु तेरी पूजा मैं करने को आया।।४६०।।

ॐ ह्रीं प्रत्यग्राय नमः अर्घ्यं....।

नायक हो जिनवर बने सौख्य दायक।
"अग्रय" पुकारे तुम्हीं तो हो लायक।।४६१।।

ॐ ह्रीं अग्रयाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभु ज्येष्ठ हो तुम, प्रभु श्रेष्ठ हो तुम।
"अग्रिम" लिया नाम उपदेष्ठ हो तुम।।४६२।।

ॐ ह्रीं अग्रिमाय नमः अर्घ्यं....।

तुम्ही नाथ मेरे, तुम्ही तो हो "अग्रज"।
सेवा करे जीव, पापों का निग्रह।।४६३।।

ॐ ह्रीं अग्रजाय नमः अर्घ्यं....।

बारह तपों को, निरन्तर तपा है।
निजातम का चिन्तन, ही "महातपा" है।।६६४।।

ॐ ह्रीं महातपसे नमः अर्घ्यं....।

महा तेजधारी, महाज्ञान धारी।
''महासुतेजा'' बने निर्विकारी।।४६५।।

ॐ ह्रीं महातेजसे नमः अर्घ्यं....।

तपों को तपा श्रेष्ठ फल को भी पाया।
"महोदर्क" शुभ नाम भक्तों ने गाया।।४६६।।

ॐ ह्रीं महोदर्काय नमः अर्घ्यं....।

ऐश्वर्य की कुछ कमी नाहिं होती।
''महोदय'' जगत के मिले ज्ञान मोती॥४६७॥

ॐ ह्रीं महोदयाय नमः अर्घ्यं....।

यशस्वी हुए हो, महातेज धारी।
चारों दिशाओं, "महायशा'' भारी॥४६८॥

ॐ ह्रीं महायशसे नमः अर्घ्यं....।

तेजस्वी जिनवर, तुम्हीं हो कहाते।
''महाधाम'' प्रभु को हैं मस्तक झुकाते॥४६९॥

ॐ ह्रीं महाधाम्ने नमः अर्घ्यं....।

अतुल शक्ति पाई, ना कोई पार पावे।
''महासत्व'' शक्ति ही, पाने को आवे॥४७०॥

ॐ ह्रीं महासत्त्वाय नमः अर्घ्यं....।

महाधैर्य आया, न आपत्ति आए।
"महाधृती" वासी, विपत ना सताए॥४७१॥

ॐ ह्रीं महाधृतये नमः अर्घ्यं....।

न व्याकुल हुए हो, न आकुल हुए हो।
"महाधैर्य" धारी, निराकुल हुए हो॥४७२॥

ॐ ह्रीं महाधैर्याय नमः अर्घ्यं....।

नहीं शक्ति का, पार पाया तुम्हारा।
"महावीर्य" हो तुम, मिलेगा सहारा॥४७३॥

ॐ ह्रीं महावीर्याय नमः अर्घ्यं....।

स्वर्गों का वैभव, शरण में भी आया।
''संपतमहा'' हो, तथा नाम पाया॥४७४॥

ॐ ह्रीं महासंपदे नमः अर्घ्यं....।

बलवान हो पर, कभी ना सताते।
''महाबल'' जी सबको, विमल पथ दिखाते॥४७५॥

ॐ ह्रीं महाबलाय नमः अर्घ्यं....।

छंद शिखरणी

महावीराष्टक तर्ज:

"महाशक्ति" पाई, महाधन पाकर धनी है।
धरा अतिशय भारी, निजातम पुण्यों बनी हैं॥
श्री जिन का स्तवन, करें सब नित ही जगत में।
महाशक्ति पायें, महाबल पा जाये शिव में॥४७६॥

ॐ ह्रीं महाशक्तये नमः अर्घ्यं....।

"महाज्योति" स्वामी, महाजन ही ज्ञानी बनाये।
दे दो मुझे भी शरणा, प्रबोधन नामा सुहाये॥४७७॥
श्री जिन का स्तवन..............................

ॐ ह्रीं महाज्योतिषे नमः अर्घ्यं....।

प्रभो तप से तुमने, "महाभूति" नाम पाया।
जगत का ये वैभव, शरण पाने नाम आया॥४७८॥
श्री जिन का स्तवन..............................

ॐ ह्रीं महाभूतये नमः अर्घ्यं....।

प्रभो तेरी कांति, "महाद्युति" नामा धरत है।
रतन चमके जैसे, प्रभो जी नित ही दिखत है॥४७९॥
श्री जिन का स्तवन..............................

ॐ ह्रीं महाद्युतये नमः अर्घ्यं....।

महाज्ञानी जिनवर, "महामति" होना सरल है।
मिलें बून्दें मुझको, सुमति को पाना सरल है॥४८०॥
श्री जिन का स्तवन..............................

ॐ ह्रीं महामतये नमः अर्घ्यं....।

जगत न्यायी राजा 'महानीति' ध्यान करते।
करम छोड़ा तुमने, धरम धार सुज्ञान वरते॥४८१॥
श्री जिन का स्तवन..............................

ॐ ह्रीं महानीतये नमः अर्घ्यं....।

तुम्ही करुणा सागर, जगत जन ध्यानी बनावे।
"महाक्षान्ति" दाता, भगत बन नित ध्यान ध्यावे॥४८२॥
श्री जिन का स्तवन............................

ॐ ह्रीं महाक्षान्तये नमः अर्घ्यं....।

दया के हो सागर, "महादय" ज्योति प्रजारी।
महा दुष्टकर्मों के, बने हो नित प्रहारी॥४८३॥
श्री जिन का स्तवन............................

ॐ ह्रीं महादयाय नमः अर्घ्यं....।

"महाप्राज्ञ" जिनवर, जगत में हो तुम प्रवीणा।
बनूं मैं भी तुम सम, बजायें नित ज्ञान वीणा॥४८४॥
श्री जिन का स्तवन............................

ॐ ह्रीं महाप्राज्ञाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभो तप से तुमने, ''महाभाग'' नाम पाया।
जगत का ये वैभव, शरण में आपकी आया॥४८५॥
श्री जिन का स्तवन............................

ॐ ह्रीं महाभागाय नमः अर्घ्यं....।

जगत में सुखकर हो, सुखामृत नित आप बांटें।
''महानन्द'' सिन्धु हो, करम बेली नित्य काटें॥४८६॥
श्री जिन का स्तवन............................

ॐ ह्रीं महानंदाय नमः अर्घ्यं....।

"महाकवि" हे भगवन, परम करुणा कर वचन है।
बनूं तुम सम मैं भी, चरण में शत-शत नमन है॥४८७॥
श्री जिन का स्तवन............................

ॐ ह्रीं महाकवये नमः अर्घ्यं....।

करे पूजा तेरी, "महामह" जाने जगत जन।
निकालो दुखों से, प्रभो आया मैं भगत बन॥४८८॥
श्री जिन का स्तवन............................

ॐ ह्रीं महामहाय नमः अर्घ्यं....।

"महाकीर्ति" तेरी, अचल बन फैली भुवन में।
चरण में शरणा दो, भगत करता नित नमन में।।४९०।।
श्री जिन का स्तवन..............................

ॐ ह्रीं महाकीर्तये नमः अर्घ्यं....।

"महाकांति" तप से, चमक छवि नित ही दिखाती।
हरो व्याधि मेरी, विघन हर शान्ति पाती।।४९०।।
श्री जिन का स्तवन..............................

ॐ ह्रीं महाकान्तये नमः अर्घ्यं....।

लिया ऊंचा तन, "महावपु" जग जानता है।
अखिल जग के स्वामी, शरण को नित मानता है।।४९१।।
श्री जिन का स्तवन..............................

ॐ ह्रीं महावपुषे नमः अर्घ्यं....।

करो रक्षा सबकी, महामन नित दान करते।
"महादानी" जिनवर, भगत भी नित ध्यान धरते।।४९२।।
श्री जिन का स्तवन..............................

ॐ ह्रीं महादानाय नमः अर्घ्यं....।

तुम्ही केवल ज्ञानी, तुम्ही जग ज्ञानी बने हो।
तुम्ही ज्ञानानन्दी, तुम्ही ''महाज्ञान'' धर धनी हो।।४९३।।
श्री जिन का स्तवन..............................

ॐ ह्रीं महाज्ञानाय नमः अर्घ्यं....।

करें वश में योगी, सभी इन्द्रियों का दमन है।
प्रभो "महायोग" धारी, करें सब चिन्ता शमन है।।४९४।।
श्री जिन का स्तवन..............................

ॐ ह्रीं महायोगाय नमः अर्घ्यं....।

गुणों की सुख्या ना,सभी गुण आये शरण में।
"महागुण" धारी हो, हरे सब अवगुण क्षणन में।।४९५।।
श्री जिन का स्तवन..............................

ॐ ह्रीं महागुणाय नमः अर्घ्यं....।

पर्वत सुमेरु पे, करते हवन हैं जनम में।
"महामहपति" ने, महापूजा कीनी धरम में।।४९६।।
श्री जिन का स्तवन...........................

ॐ ह्रीं महामहपतये नमः अर्घ्यं....।

मनाते उत्सव हैं, ''प्राप्त महा कल्याण पंचक''।
सुरेन्द्रों के आकर, महाकीर्ति गायी मिलकर।।४९७।।
श्री जिन का स्तवन...........................

ॐ ह्रीं प्राप्तमहाकल्याणपंचकाय नमः अर्घ्यं....।

तुम्ही परमेश्वर हो, "महाप्रभु" बन आए जग में।
मुझे भी तारो जिन, सभी मिल आए शरण में।।४९८।।
श्री जिन का स्तवन...........................

ॐ ह्रीं महाप्रभवे नमः अर्घ्यं....।

"महाप्रातिहार्याधिश", सदा ही संग में चलत है।
त्रिभुवन के ज्ञाता, विभव सारा ही पलत है।।४९९।।
श्री जिन का स्तवन...........................

ॐ ह्रीं महाप्रातिहार्याधीशाय नमः अर्घ्यं....।

वसु पर आये जिन ''महेश्वर'' शुभ नाम पाया।
करूं सेवा जिनवर, चरण में यह भक्त आया।।५००।।
श्री जिन का स्तवन...........................

ॐ ह्रीं महेश्वराय नमः अर्घ्यं....।

शांतये शंतिधारा। पुष्पांजलिः।

पूर्णार्घ्य

''शम्भु छन्द''

अतिशय कारी प्रभु के लक्षण, अतिशय कारी प्रभु नाम हुआ।
सम्पति पावे दुख रोग भगे, जिसने भी आकर चरण छुआ।।
अन्तर बाहर सब परिग्रह तज, शुद्धात्मा ध्यान लगाया है।
भक्ति की शक्ति मिल जाए, चरणों में अर्घ्य चढ़ाया है।।

ॐ ह्रीं श्रीवृक्षलक्षणादिशतनामभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

"गीता छन्द"

मुनिराज उत्तम सब कहें, मुनिराज जिन भी आप हैं।
है "महामुनि" शुभ नाम है, करते प्रभु का जाप हैं।।५०१।।
ॐ ह्रीं महामुनये नमः अर्घ्यं....।

प्रभु मौन धारण आप कीना, मौन से शक्ति मिली।
प्रभु "महामौनी" बनके बैठे, हृदय की कलियाँ खिली।।५०२।।
ॐ ह्रीं महामौनिने नमः अर्घ्यं....।

प्रभु "महाध्यानी" महाज्ञानी, और महान भी आप हैं।
हम नाम लेकर शांति पाते, शांति दाता आप हैं।।५०३।।
ॐ ह्रीं महाध्यानिने नमः अर्घ्यं....।

जग जिसे उत्तम कहे, जिन राज जिन वो आप हैं।
शुभ नाम जिनका है "महादम", वे हरे हर ताप हैं।।५०४।।
ॐ ह्रीं महादमाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभु धीर हैं, गम्भीर हैं, औ क्षमा के भण्डार हैं।
नाम "महाक्षम" बोले स्वतः भक्ति को तैयार हैं।।५०५।।
ॐ ह्रीं महाक्षमाय नमः अर्घ्यं....।

शील पूर्णता लिया, तुम शील "महाशील" हो।
निज आत्म शुद्धि पूर्ण पाई, सब प्राणियों में सुशील हो।।५०६।।
ॐ ह्रीं महाशीलाय नमः अर्घ्यं....।

कर्म अग्नि को जलाकर, कर्म उसमें होमिया।
"महायज्ञ" भारी आप कीन्हा, बीज अमृत बो दिया।।५०७।।
ॐ ह्रीं महायज्ञाय नमः अर्घ्यं....।

कार्य सारे कर लिये अब, कुछ न करने को बचा।
तुम "महामख" हो ज्ञान धारी, ज्ञानमय, ना कुछ जंचा।।५०८।।
ॐ ह्रीं महामखाय नमः अर्घ्यं....।

पांचों महाव्रत आप स्वामी, नाम "महाव्रतपति" धरा।
धार लूं मैं भी महाव्रत, आके चरणों में गिरा।।५०९।।
ॐ ह्रीं महाव्रतपतये नमः अर्घ्यं....।

द्वादश सभा में साधु जिनवर, नित्य ही पूजा करें।
"मह्य" हो जग पूज्य स्वामी, आपकी अर्चा करें॥५१०॥
ॐ ह्रीं मह्याय नम: अर्घ्यं....।

हो शान्ति पुन्ज औ कान्तिमय, है किरण जग में फैलती।
हो "महाकान्तिधा" तुम्हीं, वाणी सभा जन झेलती॥५११॥
ॐ ह्रीं महाकांतिधराय नम: अर्घ्यं....।

इष्ट मानें सब तुम्हें प्रभु, दर्श शुभ तेरा लिया।
हो "अधिप" जिन शुभ नाम सबने, ज्ञान भी सारा लिया॥५१२॥
ॐ ह्रीं अधिपाय नम: अर्घ्यं....।

मैत्री करके प्राणियों से, "महामैत्रीमय" भए।
यश हुआ तीनों भुवन में, मुक्ति में जाकर बस गए॥५१३॥
ॐ ह्रीं महामैत्रीमयाय नम: अर्घ्यं....।

कर नहीं सकते हैं बर्णन, रुप-गुण भण्डार हो।
जिनवर "अमेय" नाम लीना, कर्म सब निरवार हो॥५१४॥
ॐ ह्रीं अमेयाय नम: अर्घ्यं....।

गमन मुक्ति का जो चाहें, युक्ति तब तुम ही करो।
हो तुम्हीं ''महोपाय'' रुपी, ज्ञानी भगवन दुख हरो॥५१५॥
ॐ ह्रीं महोपायाय नम: अर्घ्यं....।

शुभ केवली का ज्ञान छाया, सारे उत्सव हो गए।
हे "महोमय" जी नाथ हम, इस नाम में ही खो गए॥५१६॥
ॐ ह्रीं महोमयाय नम: अर्घ्यं....।

आप जब बोले करुण, वचनों से अमृत ही झरे।
"महाकारुणिक" हे प्रभो, तुम कर्म सारे ही हरे॥५१७॥
ॐ ह्रीं महाकारुणिकाय नम: अर्घ्यं....।

सर्वज्ञाता, सर्वज्ञानी, नाम "मन्ता" पा लिया।
हे जीव जानो ज्ञान मानो, ज्ञान का अमृत पिया॥५१८॥
ॐ ह्रीं मंत्रे नम: अर्घ्यं....।

मन्त्र सब तुमसे बने, स्वामी तुम्ही हो मंत्र के।
"महामंत्र" ध्यानी तार दो, हम सिद्धि करते मंत्र की॥५१९॥
ॐ ह्रीं महामंत्राय नमः अर्घ्यं....।

जा नमन यतियों ने भी कीना, पूर्ण भक्ति भाव से।
शुभ "महायति" है नाम सुमिरो, पार होगी नाव ये॥५२०॥
ॐ ह्रीं महायतये नमः अर्घ्यं....।

दिव्य ध्वनि, गम्भीर वाणी, ज्ञान अमृत बांटते।
"महानाद" की मेघ ध्वनि कर, कर्म पर्वत छांटते॥५२१॥
ॐ ह्रीं महानादाय नमः अर्घ्यं....।

सब घोष देवों ने किया, जय-जय गगन में गूंजते।
आगम प्रभु "महाघोष" करते मुक्ति में जा झूमते॥५२२॥
ॐ ह्रीं महाघोषाय नमः अर्घ्यं....।

इन्द्र पूजा महापुरुष भी, चरण की आकर करी।
नाम पा "महेज्य" नाथ, कर्म की बेड़ी झड़ी॥५२३॥
ॐ ह्रीं महेज्याय नमः अर्घ्यं....।

सुन्दर सुमुख आभा जड़ित, शुभ कांति युत उपहार है।
"महासाम्पत्ति" नाम पाया, सम्पदा भण्डार है॥५२४॥
ॐ ह्रीं महसांपतये नमः अर्घ्यं....।

सब ज्ञान यज्ञ को धार कर, सब अशुभ को ही तज दिया।
हे "महाध्वरधर" नाम लेकर, संग मुक्ति पथ दिया॥५२५॥
ॐ ह्रीं महाध्वरधराय नमः अर्घ्यं....।

दोहा

"धुर्य" नाम शुभ पायकर, हुए जगत में श्रेष्ठ।
कर्म भूमि के आदि में, आप हुए हैं ज्येष्ठ॥५२६॥
ॐ ह्रीं धुर्याय नमः अर्घ्यं....।

अतिशय आप उदार हो, "महौदार्य" शुभ नाम।
लेकर आपके नाम को, शुरु करुं सब काम॥५२७॥
ॐ ह्रीं महौदार्याय नमः अर्घ्यं....।

दिव्य वाणी जिन पूज्य हैं, जिन संदेश सुनाय।
"महिष्ठवाक्" शुभ नाम है, मंगल कर सुखदाय॥५२८॥

ॐ ह्रीं महिष्ठवाचे नमः अर्घ्यं....।

परमातम जिन देव हो, आतम सिद्ध बनाय।
नाम "महात्मा" के धनी, शत-शत शीश नवाय॥५२९॥

ॐ ह्रीं महात्मने नमः अर्घ्यं....।

आभा बिखरे देश में, भामण्डल चमकाय।
"महसांधाम" शुभ नाम है, चरणन अर्घ्य चढाय॥५३०॥

ॐ ह्रीं महासांधाम्ने नमः अर्घ्यं....।

महाऋषि से पूज्य हो, ऋद्धि-सिद्धि दातार।
नाम "महर्षि" पायकर, करो हमें भवपार॥५३१॥

ॐ ह्रीं महर्षये नमः अर्घ्यं....।

जगत पूज्य भव पूज्य हैं, लिया जन्म यह श्रेष्ठ।
"महितोदया" शुभ नाम पा, हुए जगत में श्रेष्ठ॥५३२॥

ॐ ह्रीं महितोदयाय नमः अर्घ्यं....।

संकटहारी हो प्रभो, संकट सब कट जाय।
"महाक्लेश अंकुश" तुम्ही, पाप ताप नश जाय॥५३३॥

ॐ ह्रीं महाक्लेशांकुशाय नमः अर्घ्यं....।

क्रोध शत्रु पर विजय पा, मोह कर्म कर क्षीण।
''शूर'' नाम योद्धा हुए, धर्म रत्नत्रय तीन॥५३४॥

ॐ ह्रीं शूराय नमः अर्घ्यं....।

मुनि गणधर के ईश हो, हे आदि परमेश।
"महाभूतपति" नाम है, ब्रह्मा आदि जिनेश॥५३५॥

ॐ ह्रीं महाभूतपतये नमः अर्घ्यं....।

''गुरु'' बने हो शिष्य के, दे दो शिक्षा दान।
दीक्षा दे कल्याण पथ, चले मुक्ति का ज्ञान॥५३६॥

ॐ ह्रीं गुरवे नमः अर्घ्यं....।

''महापराक्रम'' से किये, चार घातिया घात।
संहारक हो कर्म के, करी मुक्ति से बात॥५३७॥

ॐ ह्रीं महापराक्रमाय नमः अर्घ्यं....।

आतम गुण का अन्त ना, नांहि सौख्य का अन्त।
नाम "अनन्त" को धार कर, पाया मुक्ति का पंथ॥५३८॥

ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः अर्घ्यं....।

महाक्रोध महाशत्रु हैं, करें गुणों का घात।
रिपु ''महाक्रोध'' भी तुम्हें, चरण झुकावें माथ॥५३९॥

ॐ ह्रीं महाक्रोधरिपवे नमः अर्घ्यं....।

किया वास आतम धरा, चित्त शुद्धि करवाय।
इन्द्रिय वश करके बने, "वशी" कर्म हराय॥५४०॥

ॐ ह्रीं वशिने नमः अर्घ्यं....।

स्वयं तरे तारे बहुत, किया जीव उद्धार।
"महाभवाब्धि सांतारि" ने, दिया धर्म उपहार॥५४१॥

ॐ ह्रीं महाभवाब्धिसंतारिणे नमः अर्घ्यं....।

मोह गिरी को छेदकर, निर्मोही धर भेष।
"महामोहाद्रिसूदन" है, कर्म रहा ना शेष॥५४२॥

ॐ ह्रीं महामोहाद्रिसूदनाय नमः अर्घ्यं....।

आप गुणों की खान हो, गुण रत्नी भण्डार।
"महागुणाकर" लोक में, दें आगम का सार॥५४३॥

ॐ ह्रीं महागुणाकराय नमः अर्घ्यं....।

सारे परिषह को सहे, मुद्रा शांत समान।
"क्षान्त" हुए उपसर्ग में, बारम्बार प्रणाम॥५४४॥

ॐ ह्रीं क्षान्ताय नमः अर्घ्यं....।

योगी के भी नाथ हो, सबको करो सनाथ।
"महायोगिश्वर" जिन तुम्ही, मिले मुक्ति का पाथ॥५४५॥

ॐ ह्रीं महायोगीश्वराय नमः अर्घ्यं....।

अतिशय शांति छाई है, जहां प्रभु का वास।
"शमी" नाम इससे हुआ, मुक्ति की है आस॥५४६॥
ॐ ह्रीं शमिने नमः अर्घ्यं....।

सकल ध्यान में लीन हो, ध्यानहि से भव पार।
"महाध्यानपति" प्रभु बने, भव से उतरे पार॥५४७॥
ॐ ह्रीं महाध्यानपतये नमः अर्घ्यं....।

धर्म अहिंसा धार कर, जन उपदेश सुनाय।
''ध्यातमहाधर्म" के धनी, सबकी करे सहाय॥५४८॥
ॐ ह्रीं ध्यातमहाधर्माय नमः अर्घ्यं....।

सभी व्रतों में श्रेष्ठ हैं, श्रेष्ठ महाव्रत पाय।
नाम "महाव्रत" धार कर, भक्त शरण में आय॥५४९॥
ॐ ह्रीं महाव्रताय नमः अर्घ्यं....।

कर्म शत्रु से तुम लड़े, जीते सारे युद्ध।
"महा कर्म अरिहा" हुए, होते ना हो क्रुद्ध॥५५०॥
ॐ ह्रीं महाकर्मारिघ्ने नमः अर्घ्यं....।

''चाल-छन्द''

तुमने स्वरूप को जाना, ''आत्मज्ञ'' प्रभु को माना।
हो आत्म ज्ञानी जिन देवा, संकट सारे हर लेवा॥५५१॥
ॐ ह्रीं आत्मज्ञाय नमः अर्घ्यं....।

तुम ''महादेव'' जिन ज्ञानी, आतम के हो गए ध्यानी।
देवों ने स्वामी माना, सुमन्त्र नाम को ध्याना॥५५२॥
ॐ ह्रीं महादेवाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभु हुए विलक्षण योगी, सामर्थ्य आत्म के भोगी।
फिर नाम "महेशिता" पाया, मैं शरण तिहारी आया॥५५३॥
ॐ ह्रीं महेशित्रे नमः अर्घ्यं....।

प्रभु चिन्ता क्लेश को छोड़ा, झगड़ों से मुख को मोड़ा।
"सर्व क्लेशापह" को ध्याऊं, चरणों में शीश झुकाऊं॥५५४॥
ॐ ह्रीं सर्वक्लेशापहाय नमः अर्घ्यं....।

तप ज्ञान ध्यान में रहते, उनको ही साधू कहते।
"साधु" बन कर्म नशाया, फिर केवल ज्ञान को पाया॥५५५॥

ॐ ह्रीं साधवे नमः अर्घ्यं....।

सब दोषों को प्रभु हरते, है ''सर्वदोष हरा'' वरते।
दोषों से मुक्त कराते, चरणों में शीश झुकाते॥५५६॥

ॐ ह्रीं सर्वदोषहराय नमः अर्घ्यं....।

पापों का किया सफाया, "हर" नाम रत्न को पाया।
प्रभु ज्ञान सुधा को पीते, आतम आनन्द में जीते॥५५७॥

ॐ ह्रीं हराय नमः अर्घ्यं....।

हो ''असंख्येय'' जिन देवा, मैं करूँ तव चरणान सेवा।
ऐश्वर्य ज्ञान के धारी, भव्यों के हो उपकारी॥५५८॥

ॐ ह्रीं असंख्येयाय नमः अर्घ्यं....।

हो शक्ति अचिन्तन धारी, मुक्ति की है तैयारी।
"अप्रमेयात्मा" की माया, मैं अर्घ्य चढ़ाने आया॥५५९॥

ॐ ह्रीं अप्रमेयात्मने नमः अर्घ्यं....।

चहुं दिशि में शांति छाई, भक्तों ने महिमा गाई।
जिन देव ''शमात्मा'' ध्याये, मन निर्मल शांति पाए॥५६०॥

ॐ ह्रीं शमात्मने नमः अर्घ्यं....।

"प्रशमाकर" हो परमेशा, औ धरा दिगम्बर वेशा।
शांति को जग ये तरसे, प्रभु चरण में शांति बरसे॥५६१॥

ॐ ह्रीं प्रशमाकराय नमः अर्घ्यं....।

जिन "सर्व योगिश्वर" स्वामी, प्रभु पार हुए हो नामी।
गण धर मुनि शीश झुकाते, सब तेरी महिमा गाते॥५६२॥

ॐ ह्रीं सर्वयोगीश्वराय नमः अर्घ्यं....।

चिन्तन ना कर सकते हैं, गुण को ना गिन सकते हैं।
गुण तभी ''अचिन्तय'' पाया, आकर प्रभु शीश झुकाया॥५६३॥

ॐ ह्रीं अचिन्त्याय नमः अर्घ्यं....।

श्रुत भाव ध्यान के ध्यानी, सारे आगम के ज्ञानी।
प्रभु नाम "श्रुतात्मा" धारी, चरणों में अरज हमारी॥५६४॥
ॐ ह्रीं श्रुतात्मने नमः अर्घ्यं....।

हो नाथ त्रिलोकी ज्ञाता, दर्पण सम है झलकाता।
"विष्टरश्रव'' अमृत ज्ञानी, अमृतमय है विज्ञानी॥५६५॥
ॐ ह्रीं विष्टरश्रवसे नमः अर्घ्यं....।

इन्द्रियों का दमन किया है, आतम को चमन किया है।
हो "दान्तात्मा" तप धारी, चरणों में विनय हमारी॥५६६॥
ॐ ह्रीं दान्तात्मने नमः अर्घ्यं....।

संयम का तीर्थ बनाया, ईश्वर बन उसे चलाया।
"दमतीर्थ ईश" कहलाए, अब दुःख सहा ना जाए॥५६७॥
ॐ ह्रीं दमतीर्थेशाय नमः अर्घ्यं....।

योगीमय आतम कीना, पाया है ज्ञान नवीना।
"योगात्मा" मुक्ति जाए, मुक्ति में जा बस जाए॥५६८॥
ॐ ह्रीं योगात्मने नमः अर्घ्यं....।

यह ज्ञान जगत में फैला, पहनी थी ज्ञान की माला।
हो "ज्ञानसर्वगा" धारी, संयम से पर उपकारी॥५६९॥
ॐ ह्रीं ज्ञानसर्वगाय नमः अर्घ्यं....।

जीवों में प्रमुख प्रधाना, ना कोई आप समाना।
फिर बन ''प्रधान'' जग देखा, निज में ही सब कुछ लेखा॥५७०॥
ॐ ह्रीं प्रधानाय नमः अर्घ्यं....।

निज ज्ञान स्वरुपी ध्यानी, ध्यानी हो सम्यक् ज्ञानी।
निज ''आत्मा'' को प्रगटाया, केवल का सूर्य उगाया॥५७१॥
ॐ ह्रीं आत्मने नमः अर्घ्यं....।

प्रकृति सम रुप के धारी, तिहुं लोक में महिमा भारी।
यह धर्म ''प्रकृति'' में सादी, ना करता है बरबादी॥५७२॥
ॐ ह्रीं प्रकृतये नमः अर्घ्यं....।

उत्कृष्ट जगत ने माना, पाया है पद निर्वाणा।
हो "परम्" मोक्ष अधिकारी, मेरी पूजा की बारी।।५७३।।

ॐ ह्रीं परमाय नमः अर्घ्यं....।

पाया है वैभव भारी, जिन नाथ हुए अविकारी।
''परमोदय'' ख्याति पाए, पर जग में ना भरमाए।।५७४।।

ॐ ह्रीं परमोदयाय नमः अर्घ्यं....।

सब कर्म कलंक है धोया, अरु बीज रत्नत्रय बोया।
''प्रक्षीणाबन्ध'' जिनेशा, मुक्ति के बने नरेशा।।५७५।।

ॐ ह्रीं प्रक्षीणबंधाय नमः अर्घ्यं....।

''चौपाई''

काम शत्रु ने सबको मारा, संसारी इससे ही हारा।
किन्तु आप "कामारि" कहाए, काम शत्रु को मार भगाए।।५७६।।

ॐ ह्रीं कामारये नमः अर्घ्यं....।

मंगलकारी गीत सुनाया, मंगलमय उपदेश बताया।
"क्षेमकृता" कल्याण करेंगे, फिर जग वापस नहिं फिरेंगे।।५७७।।

ॐ ह्रीं क्षेमकृते नमः अर्घ्यं....।

जग में स्वस्ति भाव बनाया, स्वस्ति मय शासन बतलाया।
"क्षेमसुशास्त्र" हो मार्ग प्रदर्शक, भव्यों के हो पथ के दर्शक।।५७८।।

ॐ ह्रीं क्षेमशासनाय नमः अर्घ्यं....।

ओंकारमय आत्म तुम्हारा, ओंकारमय ज्ञान तुम्हारा।
सार्थक "प्रणव" नाम फिर पाया, अर्घ्य चढ़ाने भक्त ये आया।।५७९।।

ॐ ह्रीं प्रणवाय नमः अर्घ्यं....।

प्रेम सभी तुमसे ही करते, हुए लोक प्रिय संकट हरते।
"प्रणय" नाम के प्रेम की धारा, सम्यग्दर्शन मिले सहारा।।५८०।।

ॐ ह्रीं प्रणयाय नमः अर्घ्यं....।

प्राण दान जीवों को कीना, धर्म अहिंसा पथ भी दीना।
जग जीवों के तुम्ही ''प्राण'' हो, जग में जिनवर तुम्ही मान हो।।५८१।।

ॐ ह्रीं प्राणाय नमः अर्घ्यं....।

जीने की शक्ति भी देते, सद्मारग सबको दिखलाते।
"प्राणद" रक्षक बनकर आए, भव्यों ने दर्शन हैं पाए।।५८२।।

ॐ ह्रीं प्राणदाय नमः अर्घ्यं....।

नम्रीभूत चरण में होते, मुकुट मणी किरणें पा लेते।
"प्रणतेश्वर" को नमन हैं करते, श्रद्धा भक्ति अर्पित करते।।५८३।।

ॐ ह्रीं प्रणतेश्वराय नमः अर्घ्यं....।

तुम ''प्रमाण'' हो ज्ञान प्रमाणिक, नाम सुजपते देव समानिक।
आगम शास्त्र पुराण बताते, महिमा इन्द्र प्रभु की गाते।।५८४।।

ॐ ह्रीं प्रमाणाय नमः अर्घ्यं....।

निधियाँ शरणा पाने आईं, स्वामी चरण पाय हर्षाईं।
"प्रणिधी" गुण रत्नों को धारे, सारे अवगुण को निरवारे।।५८५।।

ॐ ह्रीं प्रणिधये नमः अर्घ्यं....।

है सामर्थ्य तुम्ही में जिनवर, पाया अर्थ तुम्हीं ने जिनवर।
हमको "दक्ष" बनाओ स्वामी, कर्मों को मेटो जगनामी।।५८६।।

ॐ ह्रीं दक्षाय नमः अर्घ्यं....।

सरल हुए हो टेढे नाहीं, करो वास भक्तों के माहीं।
"दक्षिण" नाम इसी से पाया, भक्ति भाव में लेकर आया।।५८७।।

ॐ ह्रीं दक्षिणाय नमः अर्घ्यं....।

ज्ञान यज्ञ को नित ही करते, ज्ञानमयी आतम को वरते।
तुम "अध्वर्यु" व्रत के धारी, करे यज्ञ ये जनता सारी।।५८८।।

ॐ ह्रीं अध्वर्यवे नमः अर्घ्यं....।

प्रभु अपवर्ग पाथ दर्शाते, शिष्यों को पा नित हर्षाते।
"अध्वर" पथ के शूल हटाए, भव्यों को संग में ले जाए।।५८९।।

ॐ ह्रीं अध्वराय नमः अर्घ्यं....।

''आनन्द'' लेते आनन्द देते, आनन्दित जग को कर देते।
चरणों में जो भक्त हैं आते, आनन्द पा गद-गद हो जाते।।५९०।।

ॐ ह्रीं आनन्दाय नमः अर्घ्यं....।

आनन्द दाता आनन्द बांटे, देते फूल नहीं हैं कांटे।
"नन्दन" को वन्दन हम करते, आनन्द में दिन-रात विचरते।।५९१।।

ॐ ह्रीं नन्दनाय नमः अर्घ्यं....।

अपने तप से सौख्य कमाएें, दर्शन दे जग पीर भगाएें।
देत "नंद" सभी को शरणा, धर्म हमारा सेवा करना।।५९२।।

ॐ ह्रीं नन्दाय नमः अर्घ्यं....।

वन्दनीय हो गए धरा पर, पूज्यनीय हो गए यहां पर।
"वंद्य" सुरासुर पूजा करते, संकट सारे जिनवर हरते।।५९३।।

ॐ ह्रीं वंद्याय नमः अर्घ्यं....।

निंदा के लक्षण ना हैं कोई, दोष विहीन दोष ना कोई।
नाम "अनिंद्य" भी सुखकर पाया, तेरी महिमा गाने आया।।५९४।।

ॐ ह्रीं अनिंद्याय नमः अर्घ्यं....।

करें प्रशंसा भक्त तुम्हारे, करें साधना प्रभु हमारे।
"अभिनन्दन" वन्दन के कारण, कष्ट हमारे करो निवारण।।५९५।।

ॐ ह्रीं अभिनंदनाय नमः अर्घ्यं....।

हरा काम को कर्म नशाया, इससे ही मोती को पाया।
"कामह" नाम इन्द्र ने बोला, भक्त हृदय का द्वारा खोला।।५९६।।

ॐ ह्रीं कामघ्ने नमः अर्घ्यं....।

कल्पवृक्ष हो कामधेनु हो, भक्त चरण की बने रेणु हो।
"कामद" पूरी हो अभिलाषा, चरणों में हो मेरा वासा।।५९७।।

ॐ ह्रीं कामदाय नमः अर्घ्यं....।

मनहर सबकी चाहत पाए, चाहत योग्य हुए सब आए।
"काम्य" नाम भी इष्ट है लगता, निश-दिन गुण गाता है भगता।।५९८।।

ॐ ह्रीं काम्याय नमः अर्घ्यं....।

मनोकामना पूरी करते, "कामसुधेनु" नाम को धरते।
मुक्ति सुख का भाव श्रेष्ठ है, मुक्ति जग से सर्वश्रेष्ठ है।।५९९।।

ॐ ह्रीं कामधेनवे नमः अर्घ्यं....।

आप कर्म अरिजीत को पाया, नाम "अरिंजय" सबने गाया।
कर्म शत्रु से हमें बचाओ, निज आतम का रुप दिखाओ॥६००॥

ॐ ह्रीं अरिंजयाय नमः अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्यं

प्रभु महामुनि से अरिंजय तक जीवन भर ये शुभ नाम जपें।
जो निशदिन तेरा नाम जपे, वह भव सागर से शीघ्र तरे॥
मैं पूजूं अर्घ्य चढ़ाकर के, मेरी भव भव की व्याधि हरो।
प्रभु मोक्ष पुरी को देकर के, जिन गुण सम्पत्ति पूर्ण करो॥

ॐ ह्रीं महामुन्यादिशतनामभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

शेरचाल

''असंस्कृत सुसस्कार'' नाम को पाया।
बिन संस्कार जिन तुम्हीं, निज ध्यान लगाया॥
लेकर के नाम मैं प्रभु, ये अर्घ्य चढ़ाऊँ।
मन आत्म बुद्धि भी, जगे ये भाव मैं पाऊँ॥६०१॥

ॐ ह्रीं असंस्कृतसुसंस्काराय नमः अर्घ्यं....।

''अप्राकृत'' जिन देव को, मैं शीश नवाऊँ।
निज का स्वरूप आपकी, भक्ति से ही पाऊँ॥६०२॥

ॐ ह्रीं अप्राकृताय नमः अर्घ्यं....।

वे सब विकार दूर किये, गुण को है धारा।
''वैकृतान्तकृत'' हुए, निज रूप संवारा॥६०३॥

ॐ ह्रीं वैकृतांतकृते नमः अर्घ्यं....।

अब जन्म हो न मृत्यु हो, द्वय द्वेष निवारे।
हो ''अंतकृत'' परमेश, से सब शत्रु भी हारे॥६०४॥

ॐ ह्रीं अंतकृते नमः अर्घ्यं....।

जिन देव की वाणी, में वचन सिद्धि हो गई।
फिर ''कान्तगु'' हुए तो, जग प्रसिद्धि हो गई॥६०५॥

ॐ ह्रीं कांतगवे नमः अर्घ्यं....।

सुन्दर अतिमनोज्ञ हो, भक्तों के हृदय को।
तुम ''कान्त'' हो सब, प्रान्त में, पाया है विजय को॥६०६॥

ॐ ह्रीं कांताय नमः अर्घ्यं....।

भक्तों की भावना को सदा, पूर्णता देते।
''चिंतामणी'' चिंता हरे, चिंतन में ही रहते॥६०७॥

ॐ ह्रीं चिन्तामणये नमः अर्घ्यं....।

दाता हुए इच्छाएं सभी, पूर्व तुम करो।
''अभीष्टद'' तप धार बने, कर्म सब हरो॥६०८॥

ॐ ह्रीं अभीष्टदाय नमः अर्घ्यं....।

तन जीत कर मन जीत कर, जगजीत तुम हुए।
पाकर ''अजित'' नाम को, जगमीत तुम हुए॥६०९॥

ॐ ह्रीं अजिताय नमः अर्घ्यं....।

ये काम, क्रोध, लोभ, मोह, जग में भ्रमाए।
''जित काम अरि'' हो नहीं, ये तुमको सताए॥६१०॥

ॐ ह्रीं जितकामारये नमः अर्घ्यं....।

हैं गुण अनन्त आप कोई, नाप ना सके।
है नाम ''अमित'' आपका, गुण गाते न थके॥६११॥

ॐ ह्रीं अमिताय नमः अर्घ्यं....।

शासन अपार आपका, शक्ति अपार है।
जिनदेव ''अमित शासना'', ना कर्म वार है॥६१२॥

ॐ ह्रीं अमितशासनाय नमः अर्घ्यं....।

जीता है क्रोध आप, क्षमा धर्म के द्वारा।
''जित क्रोध'' नाम पाय, बने क्षमा सहारा॥६१३॥

ॐ ह्रीं जितक्रोधाय नमः अर्घ्यं....।

सब शत्रुओं को आप प्रभु, मित्र बनाते।
जो ''जितामित्र'' सर्व प्रिय, नाम को पाते॥६१४॥

ॐ ह्रीं जितमित्राय नमः अर्घ्यं....।

जग में क्लेश जीव के संग, नित्य ही रहता।
हो ''जित क्लेश'' आप, सलिल शांति का बहता॥६१५॥
ॐ ह्रीं जितक्लेशाय नमः अर्घ्यं....।

यमराज का ही राज यहां, भय को बढ़ाए।
मृत्यु को जीत ''जितांतक'' प्रभु, आप कहाए॥६१६॥
ॐ ह्रीं जितांतकाय नमः अर्घ्यं....।

जिन इन्द्रियों को जीत कर, जिनेन्द्र हो गए।
भक्तों ने करी पूजा तो वे, इंद्र हो गए॥६१७॥
ॐ ह्रीं जिनेंद्राय नमः अर्घ्यं.....।

इस आत्मा ने ध्यान में आनन्द पा लिया।
हो श्रेष्ठ नाथ श्रेष्ठ ''परमानंद'' ही पिया॥६१८॥
ॐ ह्रीं परमानंदाय नमः अर्घ्यं....।

मुनियों के गुरु आप हैं, ''मुनीन्द्र'' ही कहा।
जो शिष्य हैं वे भाग्यवान, ज्ञान भी बहा॥६१९॥
ॐ ह्रीं मुनीन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

गंभीर शब्द दुंदुभि के, नित्य ही होते।
''दुंदुभिस्वन'' नाम के, उद्घोष भी होते॥६२०॥
ॐ ह्रीं दुंदुभिस्वनाय नमः अर्घ्यं....।

इंद्र हो देवेंद्र हो, सब भक्ति लीन हैं।
''महेन्द्र वंद्य'' नाम, प्रभु जग प्रवीण है॥६२१॥
ॐ ह्रीं महेन्द्रवंद्याय नमः अर्घ्यं....।

योगी योग साधना में लीन हो सदा
''योगिन्द्र'' आप ही हुए, ना अशुभ हो कदा॥६२२॥
ॐ ह्रीं योगीन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

सब साधु यति आपकी, शरणा में ही रहे।
क्योंकि ''यतीन्द्र'' देव हैं, चरणा में ही रहे॥६२३॥
ॐ ह्रीं यतीन्द्राय नमः अर्घ्यं....।

नाभी के पुत्र हो तुम्हीं, मरुदेवी लाल हो।
इंद्रों ने कहा ''नाभिनंदन तुम कमाल हो॥६२४॥

ॐ ह्रीं नाभिनंदनाय नमः अर्घ्यं....।

पलना में झूले आत्म, में झूलने वाले।
''नाभेय'' पीछे लक्ष्मी, तुम छोड़ने वाले॥६२५॥

ॐ ह्रीं नाभेयाय नमः अर्घ्यं....।

नाराच छन्द

''नाभिजा'' भी नाम है, श्री आदिनाथ देव का।
त्रिलोक में महान हैं चरण को मैं भी सेवता॥
नित्य ध्यान देव का ये, कर्म भी नशावता।
भावपूर्ण अर्घ्य ले मैं, चरण तेरे आवता॥६२६॥

ॐ ह्रीं नाभिजाय नमः अर्घ्यं....।

जन्म नष्ट कर दिया, ''अजात'' आप हैं हुए।
हो समर्थ आप ही, प्रताप आपका जिये॥६२७॥

ॐ ह्रीं अजाताय नमः अर्घ्यं....।

संयमादि धार कर ''सुव्रत'' सुनाम पा लिया।
सुना प्रभो सुनाम तो, मैं सर झुकाने आ लिया॥६२८॥

ॐ ह्रीं सुव्रताय नमः अर्घ्यं....।

समस्त कर्म भूमि को, दिशा गति महान दी।
''मनू'' बने अनादि हो, वो डोर भी सम्भार दी॥६२९॥

ॐ ह्रीं मनवे नमः अर्घ्यं....।

श्रेष्ठ ज्ञान, श्रेष्ठ ध्यान, श्रेष्ठ जन्म पा लिया।
''उत्तमा'' बने जिनेश, गीत तेरा गा लिया॥६३०॥

ॐ ह्रीं उत्तमाय नमः अर्घ्यं....।

छेद है न भेद है, ''अभेद्य'' दृष्टि आप हो।
सर्व दोष से रहित हो, हरे भक्त ताप को॥६३१॥

ॐ ह्रीं अभेद्याय नमः अर्घ्यं....।

अनन्त काल अन्त ना, ''अनत्ययो'' तुम्हीं हुए।
अनन्त दर्श धार के, समस्त तत्व को छुए।।६३२।।
ॐ ह्रीं अनत्ययाय नमः अर्घ्यं....।

तपश्चरण का भोज्य त्याग, आपने प्रभो किया।
''अनाशवान'' नाम को भी, धार स्वयं ने लिया।।६३३।।
ॐ ह्रीं अनाश्वते नमः अर्घ्यं....।

सौख्य के धनी हो आप, ज्ञान भी अनंत है।
हो ''अधीक'' नाम से लिया, ही ज्ञान पंथ है।।६३४।।
ॐ ह्रीं अधिकाय नमः अर्घ्यं....।

आपने प्रथम ही जग को, वाणी ज्ञान दे दिया।
''अधीगुरु'' बने तुम्हीं, ने तत्वसार ले लिया।।६३५।।
ॐ ह्रीं अधिगुरवे नमः अर्घ्यं....।

जीव के कल्याण हेतु, वाणी आपकी खिरे।
''सुगी'' सुधार जीव को, नहीं जगत में वो फिरे।।६३६।।
ॐ ह्रीं सुगिरे नमः अर्घ्यं....।

श्रेष्ठ बुद्धि युक्त हो, अश्रेष्ठ पाप मुक्त हो।
''सुमेधसा'' जी महावरी, कर्म से विमुक्त हो।।६३७।।
ॐ ह्रीं सुमेधसे नमः अर्घ्यं....।

पराक्रमी हो ''विक्रमी'' सुधीर हो सुवीर हो।
समस्त कर्म धोवने को, आप ही सुनीर हो।।६३८।।
ॐ ह्रीं विक्रमिणे नमः अर्घ्यं....।

भव्य जीव आपके हैं, आप भव्य जीव के।
आप ही ''स्वामी'' बने हो, भव्य को ही तारते।।६३९।।
ॐ ह्रीं स्वामिने नमः अर्घ्यं....।

जीत ना सकेगा कोई, आप ''दुराधर्ष'' हैं।
जो शरण में आयेगा वो, नित्य पायें हर्ष हैं।।६४०।।
ॐ ह्रीं दुराधर्षाय नमः अर्घ्यं....।

लालसाएं छोड़ दी हैं, इन्द्रियां विजय करीं।
''निरुत्सुक'' तुम्ही हुए हो, काम अग्नि भी टरी॥६४१॥

ॐ ह्रीं निरुत्सुकाय नमः अर्घ्यं....।

शिष्ट हो ''विशिष्ट'' हो, विशेष विश्ववंद्य हो।
आत्मध्यान साधना में, नित्य ही विबंध हो॥६४२॥

ॐ ह्रीं विशिष्टाय नमः अर्घ्यं....।

शिष्य हो कि साधु हो, सभी को आप पालते।
कहा है ''शिष्ट भुक'' तुम्हें, दुःख से निकालते॥६४३॥

ॐ ह्रीं शिष्टभुजे नमः अर्घ्यं....।

जहां चरण पड़े प्रभु के, इष्ट-इष्ट हैं वहां।
''शिष्ट'' नाम श्रेष्ठ है, अनिष्ठ नाहिं हो वहां॥६४४॥

ॐ ह्रीं शिष्टाय नमः अर्घ्यं....।

प्रतीति ज्ञान की करी है, ज्ञान में ही लीन हो।
''प्रत्ययो'' तुम्ही प्रभो, सुध्यान में नवीन हो॥६४५॥

ॐ ह्रीं प्रत्ययाय नमः अर्घ्यं....।

एक बार दर्श ले वो, बार-बार देखता।
''कामना'' दिया है नाम, नाहिं और लेखता॥६४६॥

ॐ ह्रीं कामनाय नमः अर्घ्यं....।

पापहीन पुण्य पाय, सत्य ज्ञान धारते।
''अनघ'' जिनेश नाम धार, कर्म को निवारते॥६४७॥

ॐ ह्रीं अनघाय नमः अर्घ्यं....।

रोग, शोक, कष्ट करके, क्षेमी सर्वक्षेय हो।
तीन लोक के प्रभु हो, धर्म, कर्म नेम हो॥६४८॥

ॐ ह्रीं क्षमिणे नमः अर्घ्यं....।

विपत्तियां ही जीव को, जगत में भटकावती।
है जिनेन्द्र ''क्षेमकरो'', सौख्य सर्व पावती॥६४९॥

ॐ ह्रीं क्षेमंकराय नमः अर्घ्यं....।

अनन्त हो अखण्ड हो न, क्षय कभी भी होएगा।
ना शरण में ''अक्षयों'' की पाप बीज बोएगा॥६५०॥

ॐ ह्रीं अक्षयाय नमः अर्घ्यं....।

भुजंग प्रयात (नरेंद्रं फणीन्द्रं)

अमंगल हटा करके, मंगल कराओ।
"क्षेम धरम पति" की, शरणा में आओ॥
शुद्धाचरण से आ, मस्तक झुकाओ।
शुद्धात्मा का ही, सूरज उगाओ॥६५१॥

ॐ ह्रीं क्षेमधर्मपतये नमः अर्घ्यं....।

सहिष्णु बनो चित्त, सुन्दर बनाओ।
"क्षमी" श्रेष्ठ धारा में, अमृत बहाओ॥६५२॥

ॐ ह्रीं क्षमिने नमः अर्घ्यं....।

ग्रन्थों की ग्रन्थी न, हम खोल पाए।
हो 'अग्राहा' स्वामी, तुम्ही तो कहाए॥६५३॥

ॐ ह्रीं अग्राह्याय नमः अर्घ्यं....।

सम्यक्त्व को जो भी, धारण करेगा।
है "ज्ञाननिग्राहा" को, वो ही वरेगा॥६५४॥

ॐ ह्रीं ज्ञाननिग्राह्याय नमः अर्घ्यं....।

''ज्ञान सुगम्य'', सुध्यानी ही दर्शे।
पाकर दरश आत्मा खूब हर्षे॥६५५॥

ॐ ह्रीं ज्ञानगम्याय नमः अर्घ्यं....।

''निरुत्तर'' हुए तुम ही उत्तर हो स्वामी।
हो सारे जगत में, ही उत्कृष्ट नामी॥६५६॥

ॐ ह्रीं निरुत्तराय नमः अर्घ्यं....।

"सुकृति" पुण्यों की, झोली भराए।
लिया नाम जिसने, कुकर्मी हराए॥६५७॥

ॐ ह्रीं सुकृतिने नमः अर्घ्यं....।

है निर्माण शब्दों का, तुमसे ही होता।
लिया नाम "धातु" जो, सुख बीज बोता॥६५८॥

ॐ ह्रीं धातवे नमः अर्घ्यं....।

इन्द्रों ने आकर के, पूजा रचाई।
तुम्ही ने "इज्यार्ह" की, बाती बनाई॥६५९॥

ॐ ह्रीं इज्यार्हाय नमः अर्घ्यं....।

नयो की ये ज्योति है, तत्वों प्रकाशी।
"सुनय" तो तुम्हीं हो, प्रभो ज्ञान भाषी॥६६०॥

ॐ ह्रीं सुनयाय नमः अर्घ्यं....।

लक्ष्मी तुम्हारे ही, चरणों की चेरी।
श्री "सुनिवास" जी, करना ना देरी॥६६१॥

ॐ ह्रीं श्रीसुनिवासाय नमः अर्घ्यं....।

दर्शन को चारों दिशाओं में पाते।
प्रभो नाम "चतुरानन" ही धराते॥६६२॥

ॐ ह्रीं चतुराननाय नमः अर्घ्यं....।

"चतुर्वक्त्र" जिनवर नहीं चार मुख हैं।
है अतिशय वहां, और आनन्द सुख है॥६६३॥

ॐ ह्रीं चतुर्वक्त्राय नमः अर्घ्यं....।

चारों कषायों का, निग्रह किये हैं।
"चतुरास्य" हो चार, मुख दीखते हैं॥६६४॥

ॐ ह्रीं चतुरास्याय नमः अर्घ्यं....।

भव्यों की आशाएं, होती हैं पूरी।
"चतुर्मुख" हैं उनका, है दर्शन जरुरी॥६६५॥

ॐ ह्रीं चतुर्मुखाय नमः अर्घ्यं....।

सत्य का दिनकर प्रकाशित करेगा।
जो ''सत्यामा'' नाम की पूजा करेगा॥६६६॥

ॐ ह्रीं सत्यात्मने नमः अर्घ्यं....।

आतम को खोजा है, विज्ञान द्वारा।
हुए "सत्य विज्ञान", निज को निहारा॥६६७॥

ॐ ह्रीं सत्यविज्ञानाय नमः अर्घ्यं....।

पिया सप्तभंगी का, सिद्धान्त प्यारा।
"सत्यसुवाक" वचन से उचारा॥६६८॥

ॐ ह्रीं सत्यवाचे नमः अर्घ्यं....।

"सत्य सुशासन" ने, सच ही सिखाया।
जीवन दिशा को, सुपथ पे लगाया॥६६९॥

ॐ ह्रीं सत्यशासनाय नमः अर्घ्यं....।

"स्त्याशिष" जिन देव, आशीष देते।
अमंगल सभी, शीघ्र ही नाश देते॥६७०॥

ॐ ह्रीं सत्याशिषे नमः अर्घ्यं....।

प्रतिज्ञा करे जो, सो दृढता से रहते।
"सत्य सुसंधान" का नाम जपते।६७१॥

ॐ ह्रीं सत्यसंधानाय नमः अर्घ्यं....।

शुद्ध स्वभावी, निजातम में रहते।
बने "सत्य" ज्ञाता, न भावों में बहते॥६७२॥

ॐ ह्रीं सत्याय नमः अर्घ्यं....।

सत्य को देखा है, सत्य को जाना।
"सत्य परायण" हो, तुमको ही माना॥६७३॥

ॐ ह्रीं सत्यपरायणाय नमः अर्घ्यं....।

स्थिर हुए हो न, गतिशील होते।
"स्थेयान" बनकर, सदा सौख्य लेते॥६७४॥

ॐ ह्रीं स्थेयसे नमः अर्घ्यं....।

सागर के जैसा, है हृदय तुम्हारा।
"स्थवीयान" जिनवर, तुम्हारा सहारा॥६७५॥

ॐ ह्रीं स्थवीयसे नमः अर्घ्यं....।

''चौपाई''

निकट रहो निज भक्त हृदय में, "नेदियान" हर वक्त हृदय में।
भीतर का विश्वास है मेरा, दर्श से होगा सत्य सवेरा।।६७६।।
ॐ ह्रीं नेदीयसे नमः अर्घ्यं....।
पाप ताप से दूर ही रहते, "दवियान" सुख समृद्धि गहते।६७७।।भीतर...
ॐ ह्रीं दवीयसे नमः अर्घ्यं....।
योगी "दूर सुदर्शन" करते, सम्यक पथ पर ही पग धरते।६७८।।भीतर...
ॐ ह्रीं दूरदर्शनाय नमः अर्घ्यं....।
बहुत सूक्ष्म है मूरत तेरी, "अणोरणीयान" शांति घनेरी।६७९।।भीतर...
ॐ ह्रीं अणोरणीयसे नमः अर्घ्यं....।
ज्ञान शरीरी ज्ञान आत्मा, "अनणू" आप हैं दिव्य आत्मा।६८०।।भीतर...
ॐ ह्रीं अनवणे नमः अर्घ्यं....।

(भुजंग प्रयाती छंद)

गुरुओं में प्रभु सर्वश्रेष्ठ हो, "गुरुराद्य गरीयसः" ज्येष्ठ हो।।६८१।।
ॐ ह्रीं गरीयसमाद्यगुरवे नमः अर्घ्यं....।
"सदा योग" योगी सदा ध्यान ध्याये, "सदा योग" अन्तर में अमृत झराए।६८२।।
ॐ ह्रीं सदायोगाय नमः अर्घ्यं....।
वैभव है भारी "सद भोग" करते, किन्तु निजातम में स्थिर ही रहते।६८३।।
ॐ ह्रीं सदाभोगाय नमः अर्घ्यं....।
इन्द्रिय सुख की नहीं आस ठानी, "सदतृप्त" रहते निजातम के ध्यानी।।६८४।।
ॐ ह्रीं सदातृप्ताय नमः अर्घ्यं....।
माटी की काया में अमृत को पाया, "सदाशिव" जगत के तुम्हें जग न भाया।।६८५।।
ॐ ह्रीं सदाशिवाय नमः अर्घ्यं....।

''चौपाई''

चारों गति के बन्धन तोड़े, "सदागति" से नाता जोड़े।।६८६।।
ॐ ह्रीं सदागतये नमः अर्घ्यं....।
''सदा सौख्य'' में आतम रमता, अंदर में लहराती समता।।६८७।।
ॐ ह्रीं सदासौख्याय नमः अर्घ्यं....।

केवल ज्ञान हुआ सुखदायी, "सदाविद्य" जिन ज्योति जगाई॥६८८॥
ॐ ह्रीं सदाविद्याय नमः अर्घ्यं....।
सदा उदित आकाश में रहते, "सदोदः" शुभ ज्ञान विचरते॥६८९॥
ॐ ह्रीं सदोदयाय नमः अर्घ्यं....।
दिव्य ध्वनि ''सुघोष'' को पाया, आकर हमने अर्घ्य चढ़ाया॥६९०॥
ॐ ह्रीं सुघोषाय नमः अर्घ्यं....।
सुन्दर कमल ध्यानमय मुख है, हो प्रसन्न मूरत ''सुमुख'' है॥६९१॥
ॐ ह्रीं सुमुखाय नमः अर्घ्यं....।
शशि से सुन्दर रुप समुन्दर, ''सौम्य'' छवि है धर्म धुरन्धर॥६९२॥
ॐ ह्रीं सौम्याय नमः अर्घ्यं....।
सुखकारी सुख ही सुख देते, "सुखदं" नाम इसी से लेते॥६९३॥
ॐ ह्रीं सुखदाय नमः अर्घ्यं....।
जीवों के प्रभु हो हितकारी, "सुहित" हुए बनते उपकारी॥६९४॥
ॐ ह्रीं सुहिताय नमः अर्घ्यं....।
उत्तम हृदय सुरक्षित आतम, "सुहृत" नाम सुन्दर परमातम्॥६९५॥
ॐ ह्रीं सुहृदे नमः अर्घ्यं....।
गुप्त रुप से रक्षा करते, नाम "सुगुप्त" गुप्त हो वरते॥६९६॥
ॐ ह्रीं सुगुप्ताय नमः अर्घ्यं....।
तीन गुप्ति का पालन कीना, "गुप्ति भृता" शुभ नाम नवीना॥६९७॥
ॐ ह्रीं गुप्तिभृते नमः अर्घ्यं....।
जग रक्षक हैं प्रभु हमारे, "गोप्ता" नाम लगे हैं प्यारे॥६९८॥
ॐ ह्रीं गोप्त्रे नमः अर्घ्यं....।
''लोकाध्यक्ष'' बने हो स्वामी, तीन लोक के अंतर्यामी॥६९९॥
ॐ ह्रीं लोकाध्याक्षाय नमः अर्घ्यं....।
परिषह सहकर तप को करते, नाम "दमेश्वर" मांहि सु वरते॥७००॥
ॐ ह्रीं दमेश्वराय नमः अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य

''शम्भु छन्द''

कल्याणक से कल्याण करे, कल्याण हुआ तब भव्यों का
कल्याणमयी तव वाणी से, कल्याण हुआ सब भक्तों का
कल्याणक इन्द्र मनाते हैं, कल्याण स्वयं का करने को
जिनवर सबका कल्याण करो, आए भव सागर तरने को

ॐ ह्रीं असंस्कृतसुस्स्कारादिशतनामभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलि:।

''चौबीसी पूजन तर्ज''

तुम ''वृहद वृहस्पति'' देव, सेवा को आए।
जग में हो सर्व महान्, सब जन हर्षाए।।
शिव लक्ष्मी के हो नाथ, संग हम को ले लो।
आतम् शक्ति के पुन्ज, बुद्धि दे दो।।७०१।।

ॐ ह्रीं बृहद्वृहस्पतये नम: अर्घ्यं....।

वाणी के हो सम्राट, "वाग्मी" कहलाए।
अपने दर्शन से नाथ, सबको सुलझाये।।७०२।।

ॐ ह्रीं वाग्मिने नम: अर्घ्यं....।

शुभ वचन बड़े बलवान, सुन दीक्षा लेवे।
''वाचस्पति'' हो जिनराज, मम नैया खेवे।।७०३।।

ॐ ह्रीं वाचस्पतये नम: अर्घ्यं....।

दाता हो आप महान्, हमें सुमति देते।
तुमने "उदारधी" पाई, सबको सुख देते।।७०४।।

ॐ ह्रीं उदारधिये नम: अर्घ्यं....।

प्रभु नाम ''मनीषी'' पाय, तारें दर्शन से।
जग मंत्रमुग्ध हो जाये, तव आकर्षण से।।७०५।।

ॐ ह्रीं मनीषिणे नम: अर्घ्यं....।

चातुर्य बुद्धि को धार, किया निज कल्याणम्।

शुभ "धिषण" नाम जिनदेव, मिला शिव सर्व सुखम्।।७०६।।

ॐ ह्रीं धिषणाय नमः अर्घ्यं....।

बुद्धि ने वास किया, केवल ज्ञान हुआ।
"धीमान" प्रतिष्ठित आप, मम श्रद्धान हुआ।।७०७।।

ॐ ह्रीं धीमते नमः अर्घ्यं....।

तुमको माना था नाथ, "शेमुशीष" आप बने।।
आदर्श तुम्हारा नाम, देता ज्ञान घने।।७०८।।

ॐ ह्रीं शेमुषीशाय नमः अर्घ्यं....।

भाषा के स्वामी आप, सबको समझाया।
प्रभु "गिरांपति" है नाम, चरणों मे आया।।७०९।।

ॐ ह्रीं गिरांपतये नमः अर्घ्यं....।

नय आगम की कल्लोल, आपमें होती है।
हो "नैकरुप" भगवान, चिन्तन मोती है।।७१०।।

ॐ ह्रीं नैकरूपाय नमः अर्घ्यं....।

श्रेष्ठों में श्रेष्ठ महान्, श्रेष्ठ ही वचन कहे।
बन "नयोतुंग" विमलेश, वाणी ज्ञान बहे।।७११।।

ॐ ह्रीं नयोत्तुंगाय नमः अर्घ्यं....।

गुण-गण के हो भण्डार, रत्नों की ज्योति।
हो "नेकात्मा" परमेश, तम को है खोती।।७१२।।

ॐ ह्रीं नैकात्मने नमः अर्घ्यं....।

है अनेकान्तमय धर्म, सबको समझाया।
प्रभु "नैकधर्मकृत" भाव, ज्ञाता धन आया।।७१३।।

ॐ ह्रीं नैकधर्मकृते नमः अर्घ्यं....।

अल्पज्ञ जीव अज्ञेय, तुमको ना जाने।
"अविज्ञेय" नाम श्रद्धेय, आए निज पाने।।७१४।।

ॐ ह्रीं अविज्ञेयाय नमः अर्घ्यं....।

हर तर्क वितर्क से दूर, सच का ज्ञान लिया।

"अप्रतर्क्यात्मा" नाम, निज को पाय लिया॥७१५॥
ॐ ह्रीं अप्रतर्क्यात्मिने नमः अर्घ्यं....।
प्रभु सर्व कार्य में दक्ष, पर ना कुछ करते।
"कृतज्ञ" भक्त के नाथ, कर्मों को हरते॥७१६॥
ॐ ह्रीं कृतज्ञाय नमः अर्घ्यं....।
वस्तु के लक्षण ज्ञात, जग को समझाया।
"कृत लक्षण" धारी देव, चरणों में आया॥७१७॥
ॐ ह्रीं कृतलक्षणाय नमः अर्घ्यं....।
प्रभु "ज्ञान गर्भ" से पाय, ज्ञानी जिनवर हैं।
मम ज्ञान दीप प्रजलाओ, आए गुरुवर हैं॥७१८॥
ॐ ह्रीं ज्ञानगर्भाय नमः अर्घ्यं....।
हो दया के रस से पूर्ण, भीगा तन मन है।
हुए "दया गर्भ" हे नाथ सुधरा जीवन है॥७१९॥
ॐ ह्रीं दयागर्भाय नमः अर्घ्यं....।
रत्नों की वर्षा देव, नित ही करते हैं।
हो "रत्नगर्भ" जिनदेव, कारज सरते हैं॥७२०॥
ॐ ह्रीं रत्नगर्भाय नमः अर्घ्यं....।
तव दिव्य देह जिनराज, दम-दम दमके है।
हो आप "प्रभास्वर" नाथ, चम-चम चमके है॥७२१॥
ॐ ह्रीं प्रभास्वराय नमः अर्घ्यं....।
है कमल गर्भ आकार, कष्ट का नाम नहीं।
हो "पदम्गर्भ" भी आप, ताप का नाम नहीं॥७२२॥
ॐ ह्रीं पद्मगर्भाय नमः अर्घ्यं....।
जग का सारा ही ज्ञान, समाहित तुममें है।
हो "जगद्गर्भ" जिन नाथ, श्रद्धा हममें है॥७२३॥
ॐ ह्रीं जगद्गर्भाय नमः अर्घ्यं....।
स्वागत करने यह हेम, धरती पर आया
हे "हेमगर्भ" भगवान, अर्घ्य को ले लाया॥७२४॥
ॐ ह्रीं हेमगर्भाय नमः अर्घ्यं....।

दर्शन है सुखकर नाथ, आप "सुदर्शन" है।
मोहित है सब संसार, वो आकर्षण है।।७२५।।

ॐ ह्रीं सुदर्शनाय नमः अर्घ्यं....।

सोलह कारण, तर्ज:-

समवशरण लक्ष्मी का वास, "लक्ष्मीवान" हुआ आवास।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७२६।।

ॐ ह्रीं लक्ष्मीवते नमः अर्घ्यं....।

देवों के स्वामी हो आप, "त्रिद्शाध्यक्ष" करेंगे जाप।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७२७।।

ॐ ह्रीं त्रिदशाध्यक्षाय नमः अर्घ्यं....।

दृढ़ता के जिन हो भण्डार, "दृढियन" नाम हुआ साकार।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७२८।।

ॐ ह्रीं द्रढीयसे नमः अर्घ्यं....।

त्रिभुवन ईश हुए परमेश, "इन" है नाम दिगम्बर वेश।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७२९।।

ॐ ह्रीं इनाय नमः अर्घ्यं....।

वैभव चरणों आन समायें, "ईशित" नाम तभी मिल गाएं।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७३०।।

ॐ ह्रीं ईशित्रे नमः अर्घ्यं....।

भव्यों के जन हो चितचोर, रुप "मनोहर" है ज्यों भोर।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७३१।।

ॐ ह्रीं मनोहराय नमः अर्घ्यं....।

अंगोपांग मनोज्ञ हुए, "मनोज्ञांग" के चरण छुए।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।७३२।।

ॐ ह्रीं मनोज्ञांगाय नमः अर्घ्यं....।

परीषह विचलित ना कर पाए, "धीर" नाम इससे ही पाए।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७३३।।

ॐ ह्रीं धीराय नमः अर्घ्यं....।

अति सूक्ष्म सिद्धान्ती ज्ञान, "गम्भीर शासन" है धनवान।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७३४।।

ॐ ह्रीं गम्भीरशासनाय नमः अर्घ्यं....।

धर्मस्तम्भ हो तुम जिन नाथ, "धरमयूप" नमता यह माथ।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७३५।।

ॐ ह्रीं धर्मयूपाय नमः अर्घ्यं....।

दया यज्ञ उपदेश करे, "दयायाग" शुभ नाम धरे।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७३६।।

ॐ ह्रीं दयायागाय नमः अर्घ्यं....।

धरती पर प्रभु है अवतार, "धर्मनेमि" रथ चालन हार।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७३७।।

ॐ ह्रीं धर्मनेमये नमः अर्घ्यं....।

गुरुवर तुमको शीश झुकाए, नाम "मुनीश्वर" सुन्दर पाए।।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७३८।।

ॐ ह्रीं मुनीश्वरस्य नमः अर्घ्यं....।

कर्मों के आयुध सम ज्ञान, "धर्मचक्र आयुध" है नाम।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७३९।।

ॐ ह्रीं धर्मचक्रायुधाय नमः अर्घ्यं....।

आतम की क्रीडा में लीन, नाम ''देव" हैं आप प्रवीण।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७४०।।

ॐ ह्रीं देवाय नमः अर्घ्यं....।

क्षय कर्मों का कीना आप, "करमहा" नाम चढा ना ताप।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७४१।।

ॐ ह्रीं कर्मघ्ने नमः अर्घ्यं....।

भव्यों को उपदेश सुनाय, "धर्मघोषण" शुभ नाम धराय।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७४२।।

ॐ ह्रीं धर्मघोषणाय नमः अर्घ्यं....।

व्यर्थ वाक्य ना बोलें आप, हो "अमोघवच" करते जाप।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७४३।।
ॐ ह्रीं अमोघवाचे नमः अर्घ्यं....।
आज्ञा कोई टाल न पाय, "अमोघाज्ञ" दर्शन को आय।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७४४।।
ॐ ह्रीं अमोघाज्ञाय नमः अर्घ्यं....।
मलविरहित मुक्ति भरतार, "निर्मल" हो सब उतरा भार।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७४५।।
ॐ ह्रीं निर्मलाय नमः अर्घ्यं....।
सफल हुए सब फल हैं पाए, तव "अमोघ शासन" कहलाए।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७४६।।
ॐ ह्रीं अमोघशासनाय नमः अर्घ्यं....।
रुप आपका मनहर देव, नाम "सुरुप" हुआ जिन देव।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७४७।।
ॐ ह्रीं सुरूपाय नमः अर्घ्यं....।
अतिशय बरसे आपके पास, "सुभग" नाम वरदान की आश।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७४८।।
ॐ ह्रीं सुभगाय नमः अर्घ्यं....।
त्यागा वैभव त्यागा राग, "त्यागि" नाम बड़ा बड़भाग
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७४९।।
ॐ ह्रीं त्यागिने नमः अर्घ्यं....।
समयसार के ज्ञाता आप, हो समयज्ञ करें हम जाप।
करुं मैं सेव, जय-जय जिनवर, जय जिन देव।।७५०।।
ॐ ह्रीं ज्ञात्रे नमः अर्घ्यं....।

''शेर चाल''

प्राणी "समाहित" ध्यान में हो लीन ही सदा
संसार में हो सावधान पाप ना कदा।।

भक्तों को तारने को शुभ ज्ञान हो तुम्हीं।
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं॥७५१॥

ॐ ह्रीं समाहिताय नमः अर्घ्यं....।

सुख में सदा स्थित रहो, प्रभु का ही वास है।
हे नाथ "सुस्थित" हुए, मुक्ति निवास है॥७५२॥
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं सुस्थिताय नमः अर्घ्यं....।

हो "स्वस्थ्यभाक" तुम हुए, है व्याधि ना कोई ।
हम स्वस्थ्य हों जिन देव, मेरे आधि ना कोई॥७५३॥
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं स्वास्थ्यभाजे नमः अर्घ्यं....।

हो तुम विकार रहित नाथ, परम हंस काया।
भव रोग से हो मुक्त प्रभु, ''स्वस्थ'' नाम पाया॥७५४॥

ॐ ह्रीं स्वस्थाय नमः अर्घ्यं....।

ये कर्मधूलि धोय के ही, स्वच्छ हुए हो।
"नीरजस्को" हो तुम्हीं तो, स्वस्थ्य हुए हो॥७५५॥
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं नीरजस्काय नमः अर्घ्यं....।

स्वामी कभी बनाया नहीं, आपने विभो।
"निरुद्धव" भी हो गए, सब धन्य हैं प्रभो॥७५६॥
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं निरुद्धवाय नमः अर्घ्यं....।

कर्म रुपी लेप को, हटाय दिया है।
स्वामी ''अलेप'' हो गए, स्वभाव लिया है॥७५७॥
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं अलेपाय नमः अर्घ्यं....।

कलंक है न पंक है, न कर्म है कोई।
"निष्कलंकआत्मन", अधर्म न कोई॥७५८॥

त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं निष्कलंकात्मने नमः अर्घ्यं....।

राग़ी नहीं द्वेषी नहीं, है मोह भी नहीं।
हो "वीतरागी" सच्चे त्यागी, देव हो तुम्हीं॥७५९॥
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं वीतरागाय नमः अर्घ्यं....।

सब इन्द्रियां बनी हैं दास आपकी प्रभु।
हो "गतस्पृह" नाम, हमने जाप की प्रभु॥७६०॥
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं गतस्पृहाय नमः अर्घ्यं....।

सब इंद्रियों को वश में किया संयमन द्वारा।
हे नाथ "वशेन्द्रिय" हुए निज जाप के द्वारा॥७६१॥
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं वश्येंद्रियाय नमः अर्घ्यं....।

कर्मों से मुक्त होके प्रभु मुक्त हो गए।
होकर "विमुक्त आत्मन" प्रसिद्ध हो गए॥७६२॥
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं विमुक्तात्मने नमः अर्घ्यं....।

शत्रु नहीं है आपका जग में कोई प्रभु।
"निःसपत्ना" के नाम से कोई नहीं विभु॥७६३॥
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं निःसपत्नाय नमः अर्घ्यं....।

जीत करके इन्द्रियां, "जितेन्द्रिय" वो हुए।
वो शक्ति मुझे दो प्रभु जी चरण जो छुए॥७६४॥
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं जितेंद्रियाय नमः अर्घ्यं....।

चारों कषाय सर्प को है शांत तुम किया।
"प्रशांत" नाम धार कर, भक्तों को सुख दिया॥७६५॥

त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं प्रशांताय नमः अर्घ्यं....।

है तेज और कांति, ऊंचा भी नाम है।
"अनन्तधामर्षि" ऋषि, विश्व धाम है।।७६६।।
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं अनन्तधामर्षये नमः अर्घ्यं....।

मंगलमयी मंगल करो "मंगल" है कामना।
हो विश्व में मंगल अगर मंगल है भावना।।७६७।।
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं मंगलाय नमः अर्घ्यं....।

निज आत्म धर्म जल से सारे कर्म धो दिये।
"मलहा" कहा है इन्द्र ने जिनवर के हो लिए।।७६८।।
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं मलघ्ने नमः अर्घ्यं....।

ये कर्म के समूह सारे नष्ट कर दिये।
स्वामी "अनद्य" ध्यान में है, ध्वस्त कर दिये।।७६९।।
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं अनघाय नमः अर्घ्यं....।

है नहीं उपमा जगत में अनुपम हुए।
है "अर्निद्रक" सुनाम प्रभु भाव शुभ हुए।।७७०।।
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।

ॐ ह्रीं अनीदृशे नमः अर्घ्यं....।

आपके जैसा जगत में कोई नहीं है।
हे नाथ! "उपमाभुत" हुए दुर्ध्यान नहीं है।।७७१।।
त्रैलोक्य में विद्यानिधि सुज्ञान हो तुम्हीं।।

ॐ ह्रीं उपमाभूताय नमः अर्घ्यं....।

शुभ और अशुभ के प्रभु, दृष्टा हुए हैं आप।
है "दृष्टि" नाम गुरुवर, फैला है जग प्रताप।।७७२।।

ॐ ह्रीं दिष्टये नमः अर्घ्यं....।

भक्तों के विधाता हो प्रभु, भाग्य भी हैं आप।
''दैवम्'' कहा था देव ने, मिट जायेगा संताप॥७७३॥

ॐ ह्रीं दैवाय नमः अर्घ्यं....।

कर्मों से हुए हल्के तो, स्पर्श भू तजी।
आकाश ''अगोचर'' हुए, सुर दुंदभी बजी॥७७४॥

ॐ ह्रीं अगोचराय नमः अर्घ्यं....।

जो रूपवान पुदगल्, उनसे रहित हुए।
तब नाम ''अमूरत'' हुआ, उनसे विलग हुए॥७७५॥

ॐ ह्रीं अमूर्ताय नमः अर्घ्यं....।

होते पुरुष आकर के, आतम प्रदेश है।
हो ''मूर्तिमान'' जिन प्रभु का ध्यान वेश है॥७७६॥

ॐ ह्रीं मूर्तिमते नमः अर्घ्यं....।

तुमसा नहीं है दूसरा, जग में कोई प्रभु।
है नाम "एक" इसलिए, हो एक ही प्रभु॥७७७॥

ॐ ह्रीं एकाय नमः अर्घ्यं....।

हर भक्त के हृदय में प्रभु, तेरा ही निवास।
"नैक" से अनेक हुए, हो जिनेश आप॥७७८॥

ॐ ह्रीं नैकाय नमः अर्घ्यं....।

हो एक औ अनेक प्रभु, स्यादवाद तत्व।
"नानैक तत्व द्रक" हुए, हो धर्म के ही सत्व॥७७९॥

ॐ ह्रीं नानैकतत्त्वदृशे नमः अर्घ्यं....।

अध्यात्म गुह्य आत्मा में, था दिया उतार।
"अध्यात्मगम्य" हो गए, है उनको नमस्कार॥७८०॥

ॐ ह्रीं अध्यात्मगम्याय नमः अर्घ्यं....।

मिथ्यात्व के उदय से प्रभु, दर्श ना होता।
"अगम्यात्मा" हुए निज, हर्ष ना होता॥७८१॥

ॐ ह्रीं अगम्यात्मने नमः अर्घ्यं....।

''चौपाई''

आध्यातम के ज्ञाता भगवन, आत्म ज्ञान के ज्ञाता भगवन।
"योगाविद्'' है नाम तुम्हारा, शरणा आऊँ पाऊं सहारा॥७८२॥
ॐ ह्रीं योगविदे नमः अर्घ्यं....।

जग में पूज्य हुए हो जिनवर, योगी जन के आप ही गुरुवर।
"योगिवंदित" छाया पाऊँ, जग में ना दोबारा आऊँ॥७८३॥
ॐ ह्रीं योगिवंदिताय नमः अर्घ्यं....।

सब कुछ देखो सब कुछ जानो, बात किसी की आप न मानो।
"सर्वत्रग" दृष्टि को दे दो, मुझको अपनी शरण में ले लो॥७८४॥
ॐ ह्रीं सर्वत्रगाय नमः अर्घ्यं....।

लोक में जिनवर विद्यमान हैं, गुण में जिनवर वर्द्धमान हैं।
"सदाभावी" प्रभु मंगलकारी, रक्षा करना सदा हमारी॥७८५॥
ॐ ह्रीं सदाभाविने नमः अर्घ्यं....।

सर्व द्रव्य पर्याय के दृष्टा, सर्व लोक सब काल के सृष्टा।
हो त्रिकाल "विषयार्थद्रक" हो, चरणों में शत बार नमन हो॥७८६॥
ॐ ह्रीं त्रिकालविषयार्थदृशे नमः अर्घ्यं....।

सुखकारी अरु मंगलमय हो, हे जिनदेव तुम्हारी जय हो।
"शंकर" शान्ति के दाता हैं, जिनवर सबके ही भ्राता हैं॥७८७॥
ॐ ह्रीं शंकराय नमः अर्घ्यं....।

सुख का मारग भी बतलाओ, भक्तों को अनुश्रवण बनाओ।
"शंवद" जी छाया दे देना, चरणों में अपने रख लेना॥७८८॥
ॐ ह्रीं शंवदाय नमः अर्घ्यं....।

चंचल मन को तुमने बांधा, चंचल मन स्थिति को साधा।
"दान्त" मनोविजेता ध्यानी, कर देना हमको भी ज्ञानी॥७८९॥
ॐ ह्रीं दांताय नमः अर्घ्यं....।

इन्द्रिय दमन ध्यान के कर्ता, कर्म शमन कर कर्म के हर्ता।
"दमी" नाम शुभ केवल ज्ञानी, दाता हो तुम, तुम ही दानी॥७९०॥
ॐ ह्रीं दमिने नमः अर्घ्यं....।

क्षमा भाव को धारण करते, अस्ते क्रोध कभी ना करते।
"क्षान्ति परायण" सदा विजयी हो, हे नारायण काम जयी हो।।७९१।।
ॐ ह्रीं क्षान्तिपरायणाय नमः अर्घ्यं....।
अधिपति सर्व लोक के स्वामी, ऋषभनाथ जी अन्तर्यामी।
"अधिपः" अपने राज्य में रखना, देखूँ सदा आपका सपना।।७९२।।
ॐ ह्रीं अधिपाय नमः अर्घ्यं....।
आनन्द रस का पान किया है, आत्मानन्द का स्वाद लिया है।
"परमानन्द" जिन हो अविकारी, हर लेना विपदाएं सारी।।७९३।।
ॐ ह्रीं परमानंदाय नमः अर्घ्यं....।
स्व को जाना पर को जाना, आत्म ध्यान में निज को ध्याना।
"परात्मज्ञ" निज के हो ज्ञाता, सब जीवों को दे दो साता।।७९४।।
ॐ ह्रीं परात्मज्ञाय नमः अर्घ्यं....।
सर्वश्रेष्ठ हो सर्वगुणी हो, सर्वज्ञानी भी आप मुनि हो।
हुए "परात्पर" आश्रय दाता, प्रात चरण में झुकता माथा।।७९५।।
ॐ ह्रीं परात्पराय नमः अर्घ्यं....।
तीन लोक में सबसे प्यारे, सबकी आँखों के हो तारे।
"त्रिजगद्वल्लभ" रुप है सुन्दर, यहां बना है पावन मन्दिर।।७९६।।
ॐ ह्रीं त्रिजगद्वल्लभाय नमः अर्घ्यं....।
नाम लेत श्रद्धा जग जाती, जगमग-जगमग ज्योति जगाती।
"श्री अभ्यर्च्य" की करुँ अर्चना, बार-बार जग में भटकूं ना।।७९७।।
ॐ ह्रीं अभ्यर्च्याय नमः अर्घ्यं....।
मंगल सूर्य उदय सम स्वामी, जग में हुए हो मंगल नामी।
"त्रिजग न्मंगलोदय" सुखकारी, आप प्रभु गुण-गण भण्डारी।।७९८।।
ॐ ह्रीं त्रिजगन्मंगलोदयाय नमः अर्घ्यं....।
चरण कमल हैं पूज्य तुम्हारे, हृदय बसे तव चरण हमारे
"त्रिजगपति पूज्यांघ्री" द्वारा, निश्चित हो कल्याण हमारा।।७९९।।
ॐ ह्रीं त्रिजगन्पतिपूज्यांघ्रये नमः अर्घ्यं....।
चूडामणि सम शोभित होते, लोक अग्र में राजित होते।
हो "त्रिलोक अग्र शिखामणि" जिन, दर्शन से ही निकलेगा दिन।।८००।।
ॐ ह्रीं त्रिलोकाग्रशिखामणये नमः अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य
"शंभू छंद"

प्रभु गुण अनंत को धार स्वयम्, सम्यग्दर्शन उपहार देय।
मंगलकारी सुख भण्डारी, जीवों को अंतर हर्ष होय॥
प्रभु नाम की शक्ति इतनी है, सब भूत-प्रेत भी भग जावें।
भाग्योदय यश भक्ति में पा, दुर्दिन दुखियों के फिर जावें॥

ॐ ह्रीं वृहद्वृहस्पत्यादिशतनामभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

"रोला छन्द"

हो "त्रिकालदर्शी" तुम सब देखते, चक्षु का न काम बिना ही लेखते॥८०१॥

ॐ ह्रीं त्रिकालदर्शिने नम: अर्घ्यं....।

तीन लोक के ईश कहां 'लोकेश' है, तीन लोक में नाम दिगम्बर वेश हैं॥८०२॥

ॐ ह्रीं लोकेशाय नम: अर्घ्यं....।

तीन लोक का पाल धर्म अन्तर विषे, "लोकधाता" है नाम मुनिजन हैं लिये॥८०३॥

ॐ ह्रीं लोकधात्रे नम: अर्घ्यं....।

स्थिर सदा व्रतों को पालते, "दृढव्रत" रहो कर्म को टालते॥८०४॥

ॐ ह्रीं दृढव्रताय नम: अर्घ्यं....।

हो अपूर्व सूर्य, सम दमकते "सर्व लोकातिग" हुए हो चमकते॥८०५॥

ॐ ह्रीं सर्वलोकातिगाय नम: अर्घ्यं....।

पूजा योग्य हुए, हो सुनियो देव जी।
"पूज्य" नाम है, सार्थक करते सेव जी॥८०६॥

ॐ ह्रीं पूज्याय नम: अर्घ्यं....।

धर्म रुपी रथ के, तुम सारथी।
नाम हुआ तब, "सर्वलोकैक सारथी"॥८०७॥

ॐ ह्रीं सर्वलोकैकसारथये नम: अर्घ्यं....।

हो प्राचीन "पुराण", सभी कहते सही।
गाथाओं में वर्णन, कल्याणी मही॥८०८॥

ॐ ह्रीं पुराणाय नम: अर्घ्यं....।

श्रेष्ठ आत्म के, निज गुण धारते।
"पुरुष" नाम है, सुन्दर रूप निहारते॥८०९॥

ॐ ह्रीं पुरुषाय नमः अर्घ्यं....।

सर्वप्रथम ही हुए, "पूर्व" जिनराज हो।
भाव भक्ति हम करें, तुम्ही महाराज हो॥८१०॥

ॐ ह्रीं पूर्वाय नमः अर्घ्यं....।

कृत का ''कृत पूर्वाङ्गः'' नाम है।
आगम के हो ज्ञाता पाए धाम है॥८११॥

ॐ ह्रीं कृतपूर्वांगविस्तराय नमः अर्घ्यं....।

सर्व देव में प्रमुख, हुए भगवान हैं।
''आदिदेव'' है नाम, तुम्हारा ध्यान है॥८१२॥

ॐ ह्रीं आदिदेवाय नमः अर्घ्यं....।

सब पुराण भी कहते, प्रभु प्राचीन है।
''पुराणाद्य'' है नाम, रतन त्रय तीन है॥८१३॥

ॐ ह्रीं पुराणाद्याय नमः अर्घ्यं....।

आदि में हैं हुए, श्री जिन देव जी।
"पुरुदेव" है नाम, करूं मैं सेव जी॥८१४॥

ॐ ह्रीं पुरुदेवाय नमः अर्घ्यं....।

महादेव हो देवों, के भी देव जी।
"अधिदेवता" हुआ, नाम जिनदेव जी॥८१५॥

ॐ ह्रीं अधिदेवतायै नमः अर्घ्यं....।

बने प्रधान प्रथम, ही तुम प्रभु।
"युगमुख्य" शुभ नाम, हुआ तुम विभु॥८१६॥

ॐ ह्रीं युगमुख्याय नमः अर्घ्यं....।

श्रेष्ठ हुए हो ज्येष्ठ, तुम्हें ही मानते।
"युग ज्येष्ठ" के नाम, प्रभु को जानते॥८१७॥

ॐ ह्रीं युगज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं....।

सर्वप्रथम उपदेश, तुम्ही ने है दिया।
"युगादिस्थितदेशकः" नाम शुभ है लिया।।८१८।।

ॐ ह्रीं युगादिस्थितिदेशकाय नमः अर्घ्यं....।

स्वर्ण वर्ण तन में, प्रभु के ही शोभता।
हो "कल्याणवर्ण" कान्ति को मोहता।।८१९।।

ॐ ह्रीं कल्याणवर्णाय नमः अर्घ्यं....।

हितकर्ता भव्यों को, नित्य बुलावते।
औ "कल्याण" नाम, इन्द्र से पावते।८२०।।

ॐ ह्रीं कल्याणाय नमः अर्घ्यं....।

हो निरोग नहीं है, कोई रोग भी।
"कल्य" मुक्ति में, तत्पर योग जी।८२१।।

ॐ ह्रीं कल्याय नमः अर्घ्यं....।

सारे लक्षण शुभ-शुभ, शुभ ही दीखते।
हो "कल्याण लक्षण" नाम, से ही लीखते।।८२२।।

ॐ ह्रीं कल्याणप्रकृतये नमः अर्घ्यं....।

कल्याणमयी है प्रकृति, हे जिन आपकी।
"कल्याणप्रकृति" हृदय, रहते आप ही।८२३।।

ॐ ह्रीं कल्याणप्रकृतये नमः अर्घ्यं....।

दमके स्वर्ण समान सम तन प्रभू।
"दीप्त कल्याण आत्मा" जिन विभू।।८२४।।

ॐ ह्रीं दीप्रकल्याणात्मने नमः अर्घ्यं....।

कर्म कालिमा धोय, है स्वच्छ जी।
नाम "विकल्मष" हुआ, है आप जी।।८२५।।

ॐ ह्रीं विकल्मषाय नमः अर्घ्यं....।

''चौबीसी पूजा''

सब कर्म कलंक से मुक्त, नाम "विकलंका" है।
सब नष्ट हुए जिन देव, ना कोई शंका है।।८२६।।

ॐ ह्रीं विकलंकाय नमः अर्घ्यं....।

तनु सभी कला से मुक्त, ''कलातीते'' जग में।
बस आत्मकला का ध्यान, बाधा न मग में॥८२७॥

ॐ ह्रीं कलातीताय नमः अर्घ्यं....।

पाप मैल को धोय, मम सब पाप हरो।
हो ''कलिलघ्न'' भगवान, सारे ताप हरो॥८२८॥

ॐ ह्रीं कलिलघ्नाय नमः अर्घ्यं....।

तुम सर्व कला में पूर्ण, "कलाधर" बन आए।
कुछ कला मिले भगवान, चरणों में आए॥८२९॥

ॐ ह्रीं कलाधराय नमः अर्घ्यं....।

इन्द्रादिक सब जिन देव, माने स्वामी जी।
हो "देव देव" गुणधार, अन्तर्यामी जी॥८३०॥

ॐ ह्रीं देवदेवाय नमः अर्घ्यं....।

हे नाथ अनाथ के साथ, सदा ही रहते हो।
हो "जगन्नाथा" परमेश, तुम्हें ही कहते हैं॥८३१॥

ॐ ह्रीं जगन्नाथाय नमः अर्घ्यं....।

जगबन्धु हो आप, हितकर है वाणी।
न प्रभु "जगद्बंधु" भगवान, वाणी कल्याणी॥८३२॥

ॐ ह्रीं जगद्बंधवे नमः अर्घ्यं....।

तीनों लोकों पर राज, भगवन आप करें।
हो "जगद्विभु" सामर्थ्य, निश-दिन जाप करें।८३३॥

ॐ ह्रीं जगद्विभवे नमः अर्घ्यं....।

हो सुखकारी जिनदेव, हित के कार्य किये।
तुम "जगत् हितैषी" नाथ, निज में ध्यान दिये।८३४॥

ॐ ह्रीं जगद्धितैषिणे नमः अर्घ्यं....।

जाना है तीनों लोक, निज को भी जाना।
'लोकज्ञ' नाम भगवान, आतम को ध्याना।८३५॥

ॐ ह्रीं लोकज्ञाय नमः अर्घ्यं....।

तव ज्ञान किरण जग में, निश दिन फैल रही।
"सर्वग" हुए भगवान, किरणें खेल रही॥८३६॥
ॐ ह्रीं सर्वगाय नमः अर्घ्यं....।

आगे बढकर के आप, दुख को दूर करें।
हो "जगदग्रज" ही जिन ज्येष्ठ, कर्म को आप हरें॥८३७॥
ॐ ह्रीं जगदग्रजाय नमः अर्घ्यं....।

शिष्यों को दे उपदेश, सब अज्ञान हरा।
हे नाथ "चराचर" आप, गुण भण्डार भरा॥८३८॥
ॐ ह्रीं चराचरगुरवे नमः अर्घ्यं....।

रखते हैं गूढ विचार, रक्षा आतम की।
हो "गोप्य" तुम्ही जिनदेव, पा परमातम जी॥८३९॥
ॐ ह्रीं गोप्याय नमः अर्घ्यं....।

प्रभु का आतम है सूक्ष्म, गोचर इन्द्री ना।
"गूढात्मा" है शुभ नाम, अवगुण बिल्कुल ना॥८४०॥
ॐ ह्रीं गूढात्मने नमः अर्घ्यं....।

योगी के ध्याने योग्य, आप ही गम्य हुए।
हो "गूढ सुगोचर" देव, आप ही नम्र हुए॥८४१॥
ॐ ह्रीं गूढगोचराय नमः अर्घ्यं....।

तत्क्षण हो जैसे जन्म, रुप सदा रहता।
है "सद्योजात" तुम नाम, विभाव नहीं सहता॥८४२॥
ॐ ह्रीं सद्योजाताय नमः अर्घ्यं....।

शुभ ज्ञान ज्योति के पुंज, ज्ञानी जन आए।
हो "प्रकाशात्मा" भगवान, भक्ति भर लाए॥८४३॥
ॐ ह्रीं प्रकाशात्मने नमः अर्घ्यं....।

अग्नि की कांति समान, रुप तिहारा है।
हो नाथ "ज्वलज्ज्वलन" आप, जग ये हारा है॥८४४॥
ॐ ह्रीं ज्वलज्ज्वलनसप्रभाय नमः अर्घ्यं....।

सूरज सम दमके रुप, चित्त चुराय लिया।
"आदित्य वर्ण" है नाम, शीश झुकाय दिया॥८४५॥

ॐ ह्रीं आदित्यवर्णाय नमः अर्घ्यं....।

सूरज लख तुमको देव, छिपता बादल में।
"भर्माभ" नाम को धार, आतम् बल भी है॥८४६॥

ॐ ह्रीं भर्माभाय नमः अर्घ्यं....।

चंदा, सूरज शरमाए, तुमको देख-देख।
"सुप्रभ" शुभ को ही पाए, मम पथ रेख-रेख॥८४७॥

ॐ ह्रीं सुप्रभाय नमः अर्घ्यं....।

हो स्वर्ण प्रभा सम देह, मनहर लगती है।
है नाम "कनकप्रभ" देव, आतम जगती है॥८४८॥

ॐ ह्रीं कनकप्रभाय नमः अर्घ्यं....।

दीप्ति तन को जिनदेव, भानु ज्यों चमके।
हो "सुवर्ण वर्ण" हे नाथ, सूरज सम दमके॥८४९॥

ॐ ह्रीं सुवर्णवर्णाय नमः अर्घ्यं....।

तन का शुभ वर्ण हे देव, आकर्षित करता।
"रुक्माभ" नाम को पाय, हर्षित है करता॥८५०॥

ॐ ह्रीं रुक्माभाय नमः अर्घ्यं....।

"गीता छंद"

हो 'सूर्य कोटि सम प्रभः", आतम अनोखा रुप है।
मम सर्व व्याधि को हरो, हे नाथ तुम ही भूप हो॥८५१॥

ॐ ह्रीं सूर्यकोटिसमप्रभाय नमः अर्घ्यं....।

तप्त सोने के सदृश ही, तव तनु निर्मल हुआ।
"तपनीयनिभ" शुभ नाम पाकर, निज आत्म का अमृत पिया॥८५२॥

ॐ ह्रीं तपनीयनिभाय नमः अर्घ्यं....।

ऊंचा हुआ तन "तुंग" माने, मोक्ष भी ऊंचा लिया।
हों भाव ऊंचे भी हमारे, चरण में सर धर दिया॥८५३॥

ॐ ह्रीं तुंगाय नमः अर्घ्यं....।

उगता हुआ ज्यों सूर्य सुन्दर, कांति को दिखला रहा।
"बालार्काभो" ही नाम शुभ, ये इन्द्र भी बतला रहा॥८५४॥

ॐ ह्रीं बालार्काभाय नमः अर्घ्यं....।

तव ध्यान अग्नि में तपे, निज आत्म को कुन्दन किया।
हो "अनल प्रभ" सी कांति वाले, ध्यान आतम में दिया॥८५५॥

ॐ ह्रीं अनलप्रभाय नमः अर्घ्यं....।

संध्या समय जो मेघ अपनी, चपला को चमकाए है।
"संध्याभ्रबभ्रू" जिन देव बन, तव कांति को दमकाए है॥८५६॥

ॐ ह्रीं संध्याभ्रवभ्रवे नमः अर्घ्यं....।

तुम तन तपाकर कर्म मल को, आत्म से ही तज दिया।
"हेमाभ" बनकरके प्रभ्, मुक्ति से नाता कर लिया॥८५७॥

ॐ ह्रीं हेमाभाय नमः अर्घ्यं....।

"हो तप्त चामीकर प्रभः", ज्यों स्वर्ण तपता ही दिखा।
आत्म अतिशय भी हुआ, इन्द्र ने गुण आ लिखा॥८५८॥

ॐ ह्रीं तप्तचामीकरप्रभाय नमः अर्घ्यं....।

"निष्टप्त कनकच्छाय" स्वामी, दिव्य ज्योति है जगी।
अद्भुत निराली लीला है, तो कर्म की सेना भगी॥८५९॥

ॐ ह्रीं निष्टप्तकनकच्छायाय नमः अर्घ्यं....।

"कनत्कांचन संन्निभ" देहि, वैराग्य मय मूरत तेरी।
तेरी आत्मा ज्योति प्यारी, कर्म पर्वत को हरी॥८६०॥

ॐ ह्रीं कनत्कांचनसन्निभाय नमः अर्घ्यं....।

स्वर्ण वर्णात्मा हुए, मुक्ति की शक्ति पाई है।
हो "हिरण्यवर्ण" तुम, देव स्वामी ज्ञान लक्ष्मी आई है॥८६१॥

ॐ ह्रीं हिरण्यवर्णाय नमः अर्घ्यं....।

नक्षत्र मध्यम सूर्य चमके, त्यों प्रभु का रुप है।
"स्वर्णाभ" कान्ति दान दो, संयम निहार अनूप है॥८६२॥

ॐ ह्रीं स्वर्णाभाय नमः अर्घ्यं....।

जब तलक है चांद सूरज, आपका गुणगान है।
हे "शांत कुम्भ निभ प्रभः", जग में तुम्हारा मान है।।८६३।।

ॐ ह्रीं शांतकुंभनिभप्रभाय नमः अर्घ्यं....।

परमाणु सारे शुद्ध होने, है शरण तेरी गही।
"द्युम्नाभ" कान्ति जग गयी, करती नमन सारी मही।।८६४।।

ॐ ह्रीं द्युम्नाभासाय नमः अर्घ्यं....।

विकृति ने प्रकृति को, ही मिला मैला किया।
हे "जातरुपाभ" तुम प्रभु, तप कर खरा कुंदन किया।।८६५।।

ॐ ह्रीं जातरूपाभाय नमः अर्घ्यं....।

मोह का पर्दा हटा, कनकावलि सम आत्मा।
"तप्त जांबू नद द्युति" प्रभु, मिल गया परमात्मा।।८६६।।

ॐ ह्रीं तप्तजांबूनदद्युतये नमः अर्घ्यं....।

स्वर्णिम कमल पर स्वर्ण देही, साज शोभा बढ रही।
हो "सुधौत्कल धौत्र श्री" निज आत्म शुद्धि गढ़ रही।।८६७।।

ॐ ह्रीं सुधौतकलधौतश्रिये नमः अर्घ्यं....।

सिन्धु सम शुभ ज्ञान पाकर, बिन्दु सबमें बांटते।
हो "प्रदीप्त" उज्जवल उजाला, कालिमा सब छांटते।।८६८।।

ॐ ह्रीं प्रदीप्ताय नमः अर्घ्यं....।

आभा जगत के प्राणियों को, पुण्य पावन मय करे।
"हाटक द्युति" शुभ नाम प्यारा, ज्ञान से ज्ञानी करे।।८६९।।

ॐ ह्रीं हाटकद्युतये नमः अर्घ्यं....।

शिष्ट के तुम ईष्ट होकर, ज्ञान लक्ष्मी दान दी।
"शिष्टेष्ट" प्रीति सुधा दे दो, हार हमने मान ली।।८७०।।

ॐ ह्रीं शिष्टेष्टाय नमः अर्घ्यं....।

हम भाव का ही अर्घ्य धरते, क्रम शुरू तव जाप का।
हो आप ''पुष्टिद'' जी प्रभु, हमको सहारा आपका।।८७१।।

ॐ ह्रीं पुष्टिदाय नमः अर्घ्यं....।

तन पुष्ट है मन पुष्ट है, आतम तुम्हारा पुष्ट है।
तुम "पुष्ट" बन कर पुष्ट करते, पुष्ट जग में इष्ट है॥८७२॥

ॐ ह्रीं पुष्टाय नमः अर्घ्यं....।

साक्षात दर्शन आपका, मम कोटि कर्मों को हरे।
"स्पष्ट" केवल ज्ञानी हो, मम पुण्य की गठरी भरे॥८७३॥

ॐ ह्रीं स्पष्टाय नमः अर्घ्यं....।

हितवाणी में उपदेश देते, मेरी वाणी शुद्ध हो।
"स्पष्टा क्षरः" जिन देव जी तुम, ज्ञान मेरा शुद्ध हो॥८७४॥

ॐ ह्रीं स्पष्टाक्षराय नमः अर्घ्यं....।

निज शक्ति को पाकर प्रभु, तप ध्यान में आत्मस्थ थे।
"क्षम" नाम सुन्दर इन्द्र बोला, आपके निकटस्थ थे॥८७५॥

ॐ ह्रीं क्षमाय नमः अर्घ्यं....।

"पद्धरि"

सब कर्म शत्रु को मारा है, "शत्रुघ्न" नाम को धारा है॥
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८७६॥

ॐ ह्रीं शत्रुघ्नाय नमः अर्घ्यं....।

शत्रु न जग में कोई बचा, "अप्रतिघ" नाम ही तुम्हें जंचा।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८७७॥

ॐ ह्रीं अप्रतिघाय नमः अर्घ्यं....।

तुम सफल हुए हो सफल करो, प्रभु तुम "अमोघ" बन कर्म हरो।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८७८॥

ॐ ह्रीं अमोघाय नमः अर्घ्यं....।

उपदेशक जग में श्रेष्ठ तुम्ही, "प्रशास्ता" हो जग मांहि तुम्ही।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८७९॥

ॐ ह्रीं प्रशास्त्रे नमः अर्घ्यं....।

रक्षा भक्तों की करते हो, "शासता" नाम को धरते हो।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८८०॥

ॐ ह्रीं शासित्रे नमः अर्घ्यं....।

आतम सिद्धि को स्वयं पाए, "स्वयम्भू" नाम अतिशय धराए।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए।।८८१।।
ॐ ह्रीं स्वभुवे नमः अर्घ्यं....।
सब कर्म गए शान्ति है आई, हो "शान्तिनिष्ठ" यह है सच्चाई।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए।।८८२।।
ॐ ह्रीं शांतिनिष्ठाय नमः अर्घ्यं....।
गणधर मुनियों में आप बड़े, "मुनिज्येष्ठ" जगत में आन खड़े।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए।।८८३।।
ॐ ह्रीं मुनिज्येष्ठाय नमः अर्घ्यं....।
कल्याण परम्परा चलती है, "शिवताति" चरण में पलती है।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए।।८८४।।
ॐ ह्रीं शिवतातये नमः अर्घ्यं....।
कल्याण किया कल्याण हुआ, "शिवप्रद" के आकर चरण छुआ।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए।।८८५।।
ॐ ह्रीं शिवप्रदाय नमः अर्घ्यं....।
जग में तुम शांति दायक हो, "शांतिद" प्रभु जग के नायक हो।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए।।८८६।।
ॐ ह्रीं शांतिदाय नमः अर्घ्यं....।
भ्रान्ति हर्ता, शान्ति कर्ता, "शान्तिकृत" जग के दुख हर्ता।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए।।८८७।।
ॐ ह्रीं शांतिकृते नमः अर्घ्यं....।
तुम स्वयं, स्वयं में शान्तिरूप, "शान्ति" आई जग में अनूप।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए।।८८८।।
ॐ ह्रीं शांतये नमः अर्घ्यं....।
कांति लख मन ये शान्त हुआ, श्री "कान्तिमान्" का भान हुआ।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए।।८८९।।
ॐ ह्रीं कांतिमते नमः अर्घ्यं....।

इच्छित फल के तुम दाता हो, "कामित प्रद" भाग्य विधाता हो।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८९०॥
ॐ ह्रीं कामितप्रदाय नमः अर्घ्यं....।
दुख हरता हो, सुख कर्ता हो, "श्रेयोनिधि" मुक्ति भरता हो।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८९१॥
ॐ ह्रीं श्रेयोनिधये नमः अर्घ्यं....।
जग जीवों के आधार तुम्ही, हो ''अधिष्ठान" जग मान तुम्हीं।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८९२॥
ॐ ह्रीं अधिष्ठानाय नमः अर्घ्यं....।
अन्यकृत प्रतिष्ठा रहित हुए, "अप्रतिष्ठ" नाम को आप लिये।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८९३॥
ॐ ह्रीं अप्रतिष्ठाय नमः अर्घ्यं....।
सुर-नर मिल यश को गाते हैं, "प्रतिष्ठित" आप कहाते हैं।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८९४॥
ॐ ह्रीं प्रतिष्ठिताय नमः अर्घ्यं....।
जग में यश गान आपका है, प्रभु केवल ज्ञान आपका है।
हो आप ''सुस्थिर'' हे जिनवर, हमको दर्शन का दो अवसर॥८९५॥
ॐ ह्रीं सुस्थिराय नमः अर्घ्यं....।
शुभ समवशरण में गमन रहित, "स्थावर" निज में ध्यान सहित।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८९६॥
ॐ ह्रीं स्थावराय नमः अर्घ्यं....।
तुम अचल हुए चल ना होते, "स्थाणु" अवगुण सब धोते।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८९७॥
ॐ ह्रीं स्थाणवे नमः अर्घ्यं....।
विस्तृत होते विस्तार हुआ, "प्रथीयान" जिन धर्म हुआ।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८९८॥
ॐ ह्रीं प्रथीयसे नमः अर्घ्यं....।

त्रिभुवन में यशा पताका है, हो "प्रथित" तुम्ही शुभ नाता है।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥८९९॥
ॐ ह्रीं प्रथिताय नमः अर्घ्यं....।
शुभ ज्ञान ने ज्ञानी बना दिया, "पृथु" गुण गण पा भण्डार लिया।
तुम नाम पुष्प की गंध पाय, चरणों में भंवरे नित्य आए॥९००॥
ॐ ह्रीं पृथवे नमः अर्घ्यं....।

"शम्भु छन्द"

आकाश पुकारे जिनवर को, वसुधा भी तुम्हें पुकार रही
आओ आओ मेरे जिनवर, ये आंखें राह निहार रही
किस नाम को सुनकर आओगे, हम सहस को बोल रहे
"स्वस्ति" के भावों को देखो, अन्तर को अपने तौल रहे
ॐ ह्रीं त्रिकालदर्श्यादिशतनामभ्यः पूर्णार्घ्यं.....।

शांतये शातिधारा। पुष्पांजलिः।

"दोहा"

वस्त्र दिशाएं धार लीं, "दिग्वासा" है नाम।
प्रभु मुद्रा को मैं नमूं, बारम्बार प्रणाम॥९०१॥
ॐ ह्रीं दिग्वाससे नमः अर्घ्यं....।
वायु की है करधनी, धर्माभूषण धार।
"वातरशना" शुभ नाम है, मिले ज्ञान का सार॥९०२॥
ॐ ह्रीं वातरशनाय नमः अर्घ्यं....।
ग्रन्थि खोल निरग्रन्थ हो, "निग्रन्थेश" बताय।
आत्म ज्ञान के हो धनी, शत-शत शीश नवाय॥९०३॥
ॐ ह्रीं निर्ग्रंथेशाय नमः अर्घ्यं....।
धारा अम्बर शुभ दिशा, हुए "दिगम्बर" देव।
भूमि शयन करते रहे, करुं तुम्हारी सेव॥९०४
ॐ ह्रीं दिगम्बराय नमः अर्घ्यं....।
किन्चित परिग्रह लेश ना, "निष्किन्चन" सब त्याग।
अमर ज्योति है ज्ञान की, जाग-जाग, जग जाग॥९०५॥
ॐ ह्रीं निष्किंचनाय नमः अर्घ्यं....।

इच्छाओं का त्याग कर, संयम् मय शुभ भाव।
"निराशंस" आशा गई, पार होएगी नाव॥१०६॥

ॐ ह्रीं निराशंसाय नमः अर्घ्यं....।

इन्द्रिय चक्षु बन्द कर, ज्ञान नेत्र को खोल।
"ज्ञानचक्षु", शुभ नाम है, अन्दर बाहर तोल॥१०७॥

ॐ ह्रीं ज्ञानचक्षुषे नमः अर्घ्यं....।

मोह अरि को नष्ट कर, "अमोमुहः" कहलाए।
मेरे शत्रु नष्ट हों, शत-शत शीश नवाय॥१०८॥

ॐ ह्रीं अमोमुहाय नमः अर्घ्यं....।

रवि शशि से ज्यादा प्रभु, तेज पुंज चमकाय।
"तेजोराशी" आप हो, चरण शरण को पाय॥१०९॥

ॐ ह्रीं तेजोराशये नमः अर्घ्यं....।

ओजस्वी मुख है हुआ, तेजस्वी है ज्ञान।
"अनन्तौज" शुभ नाम है, आदिनाथ भगवान॥११०॥

ॐ ह्रीं अनंतौजसे नमः अर्घ्यं....।

केवल लब्धि प्राप्त कर, उजियाला चहुं ओर।
"ज्ञानाब्धि" इससे हुए, हुई ज्ञान की भोर॥१११॥

ॐ ह्रीं ज्ञानाब्धये नमः अर्घ्यं....।

इक अठ सहस है शील युत, धारण कीना योग।
तभी "शील सागर" हुए, मिटे कर्म के रोग॥११२॥

ॐ ह्रीं शीलसागराय नमः अर्घ्यं....।

निज आतम के सामने, फीके सारे तेज।
"तेजोमय" आतम किया, मिली ज्ञान की सेज॥११३॥

ॐ ह्रीं तेजोमयाय नमः अर्घ्यं....।

माप नहीं है ज्योति की, ''अमित ज्योति'' परकाश।
''आतम ज्योति'' मम जगे, उजियाले का वास॥११४॥

ॐ ह्रीं अमितज्योतिष नमः अर्घ्यं....।

आत्म ज्योति प्रगटी तभी, मात्र ज्योति का पुंज।
"ज्योति मूर्ति" सी दीखती, करुणाकार निकुंज॥११५॥
ॐ ह्रीं ज्योतिर्मूर्तये नमः अर्घ्यं....।
अन्धकार का हरण कर, जग में किया प्रकाश।
"तमोपहः" शुभ नाम ने, पूरी कर दी आश॥११६॥
ॐ ह्रीं तमोपहाय नमः अर्घ्यं....।
तीन लोक के शिखर पर, बैठे हैं भगवान।
''जगच्चूड़ामणि" सम दिखे, बारम्बार प्रणाम॥११७॥
ॐ ह्रीं जगच्चूड़ामणये नमः अर्घ्यं....।
अपरिमित शुभ ज्ञान से, निकला ज्ञान का पुंज।
''दीप्त'' नाम सार्थक हुआ, समझे ज्ञान निकुंज॥११८॥
ॐ ह्रीं दीप्ताय नमः अर्घ्यं....।
इन्द्रिय सुख को छोड़कर, तप कीना घनघोर।
फिर "शंवान्" सुखी हुए, मिला ज्ञान का छोर॥११९॥
ॐ ह्रीं शंवते नमः अर्घ्यं....।
विघ्न दूर सब कर दिये, ''विघ्न विनायक'' नाम।
जब तक संग में मोह है, नहीं मिले विश्राम॥१२०॥
ॐ ह्रीं विघ्नविनायकाय नमः अर्घ्यं....।
वाद नहीं संवाद है, विसंवाद नहि काम।
नाम "कलिघ्ना" शुभ लिया, वाणी पूर्ण विराम॥१२१॥
ॐ ह्रीं कलिघ्नाय नमः अर्घ्यं....।
दुष्कर्मों के जोर में, जीव करेगा पाप।
''कर्म शत्रुघ्न" उसको नशा, करी आत्म की जाप॥१२२॥
ॐ ह्रीं कर्मशत्रुघ्नाय नमः अर्घ्यं....।
लोका लोक को देखते, नहीं नेत्र का काम।
"लोकालोक प्रकाशक" हो, मिला मुक्ति का धाम॥१२३॥
ॐ ह्रीं लोकालोकप्रकाशकाय नमः अर्घ्यं....।

मोह नींद को तज दिया, आतम लिया जगाय।
"अनिद्रालु" जिन स्वामी है, कर्म शीघ्र नशवाय॥१२४॥
ॐ ह्रीं अनिद्रालवे नमः अर्घ्यं....।

आलस हो यदि जीव को, धर्म रहेगा दूर।
आप "अतंद्रालु" प्रभु, सौख्य मिला भरपूर॥१२५॥
ॐ ह्रीं अंतद्रालवे नमः अर्घ्यं....।

शिखरिणी छन्द (महावीराष्टक)

सदा "जागरुक" रहते, नहीं तुम मोही बने हो।
हरो मेरी निंद्रा, धरम के रंग में रंगे हो॥१२६॥
ॐ ह्रीं जागरूकाय नमः अर्घ्यं....।

नाथ ''प्रमामय'' ज्ञान के, आप हो भण्डार।
कृपा आपकी जो मिले, महके मम संसार॥१२७॥
ॐ ह्रीं प्रमामयाय नमः अर्घ्यं....।

सर्वभांति सक्षम हुए, पाकर मुक्तिधाम।
''लक्ष्मीपति'' जिन देव को, शत्-शत् बार प्रणाम॥१२८॥
ॐ ह्रीं लक्ष्मीपतये नमः अर्घ्यं....।

चतुष्टय लक्ष्मी पा, तुमहि तो स्वामी हुए हो।
हरो तम मेरा भी, "जगज्योति" को हुए हो॥१२९
ॐ ह्रीं जगज्ज्योतिषे नमः अर्घ्यं....।

दयाधारी जिनवर, दया दृष्टि तुम करोगे।
बने हो "धर्मराज", करम तुम सारे हरोगे॥१३०॥
ॐ ह्रीं धर्मराजाय नमः अर्घ्यं....।

तुमहि परजा पालक, "प्रजाहित" धन ज्ञान देते।
हृदय आओ जिनवर, सदा हम तव नाम लेते॥१३१॥
ॐ ह्रीं प्रजाहिताय नमः अर्घ्यं....।

करी इच्छा मुक्ति, "मुमुक्ष" ज्ञानी हुए हो।
नशा करके व्याधि, तुमहि तो सुखमय हुए हो॥१३२॥
ॐ ह्रीं मुमुक्षवे नमः अर्घ्यं....।

"बन्ध मोक्षज्ञा" स्वामी, सभी बन्धन तज स्वयम्भु।
तुम्ही जानो सबको, पाई जन हितकर नियम भू।।९३३।।

ॐ ह्रीं बंधमोक्षज्ञाय नमः अर्घ्यं....।

"जिताक्ष" बन करके, निजातम ज्योति जगी थी।
जीतूं मैं भी इनको, चरण में लौ तो लगी थी।।९३४।।

ॐ ह्रीं जिताक्षाय नमः अर्घ्यं....।

हो "जितमन्मथ" स्वामी, विजय इन्द्रिय तब कहाए।
विषय तजकर जिनवर, विजेता जिनराज आए।।९३५।।

ॐ ह्रीं जितमन्मथाय नमः अर्घ्यं....।

"प्रशांतरस शैलुष", सभी को रस शांत देते।
ध्याकर निज को ही, निशा-दिन सद् ज्ञान लेते।।९३६।।

ॐ ह्रीं प्रशांतरसशैलूषाय नमः अर्घ्यं....।

"भव्यन पेटक नायक" जगत जन नायक बने हैं।
दिया भव्य जन मोक्ष, सुखद सुख दायक बने हैं।।९३७।।

ॐ ह्रीं भव्यपेटकनायकाय नमः अर्घ्यं....।

"मूलसुकर्ता" आप, चलत आगम पर सदा ही।
चलाओ भव्यों को, कुपथ ना पाएं कदा ही।।९३८।।

ॐ ह्रीं मूलकर्त्रे नमः अर्घ्यं....।

"अखिल ज्योति" जागी, जगाया मोही जनों को।
करुं भक्ति तेरी, करी सब शुद्धी मनों की।।९३९।।

ॐ ह्रीं अखिलज्योतिषे नमः अर्घ्यं....।

"मलघ्न" है शुभ नाम, सभी अघ धोकर दिखाया।
करम नाशें हम भी, चरण पाने दास आया।।९४०।।

ॐ ह्रीं मलघ्नाय नमः अर्घ्यं....।

प्रभो "मूलकारण" आप, सुपथ पर गामी हुए हो।
नयन मेरे विचरो, जगत जन नामी हुए हो।।९४१।।

ॐ ह्रीं मूलकारणाय नमः अर्घ्यं....।

यथारथ सब जानें, तुमहि तो सच ज्ञान देवा।
बने "आप्त" स्वामी, हमारी यह नाव खेवा॥१४२॥

ॐ ह्रीं आप्ताय नमः अर्घ्यं....।

मधुर वाणी तेरी, भरा है ज्ञानामृतः सा।
यही "वागीश्वर" माता, झरा है सद्ज्ञान झरना॥१४३॥

ॐ ह्रीं वागीश्वराय नमः अर्घ्यं....।

प्रभो "श्रेयान" श्रेष्ठी, जगत का कल्याण करते।
चरण ले लो मुझको, धरम पथ पर हम विचरते॥१४४॥

ॐ ह्रीं श्रेयसे नमः अर्घ्यं....।

"श्रायसोक्ति" जिनवर, मधुर वाणी मय बताया।
रतनत्रय मैं पाऊं, प्रभो बनने शर्ण आया॥१४५॥

ॐ ह्रीं श्रायसोक्तये नमः अर्घ्यं....।

हे "निरुक्तवाक" जिनवर, तुमहि उक्ति शांति देती।
सुधारो मुझको भी, भगत भक्ति दुःख हरती॥१४६॥

ॐ ह्रीं निरुक्तवाचे नमः अर्घ्यं....।

"प्रवक्ता" उत्तम हो, सभी उत्तम कार्य कीने।
सुधा बरसा स्वामी, धरम मोती दान दीने॥१४७॥

ॐ ह्रीं प्रवक्त्रे नमः अर्घ्यं....।

तुम्ही "वचसामिश" हो, सबहि अक्षर ज्ञान दीना।
तुमहि उसके ईश्वर, बरन निज का ध्यान लीना॥१४८॥

ॐ ह्रीं वचसामीशाय नमः अर्घ्यं....।

तुम्ही "मारजीता" जिनवर, विषय विष सम जान छोड़ा।
छुड़ाओ मुझको भी, जगत जन हम आज तोड़ा॥१४९॥

ॐ ह्रीं मारजिते नमः अर्घ्यं....।

"विश्व भाववित" स्वामी मरण नहिं निर्वाण होता।
नमन करते हम भी, चरण में शुभ बीज बोता॥१५०॥

ॐ ह्रीं विश्वभावविदे नमः अर्घ्यं....।

"चौपाई"

उत्तम तन पाया है स्वामी, "सुतनु" हुए हो अन्तर्यामी।
आधि व्याधि मम दूर भगाओ, मुझको अपने पास बिठाओ॥९५१॥
ॐ ह्रीं सुतनवे नमः अर्घ्यं....।
तन छोड़ा आतम को पाया, "तनुनिर्मुक्त" जी ज्ञान सिखाया॥९५२॥
ॐ ह्रीं तनुनिर्मुक्तये नमः अर्घ्यं....।
ज्ञानवान "सुगत" स्वाध्यायी, आतम जग में ना भरमायी॥९५३॥
ॐ ह्रीं सुगताय नमः अर्घ्यं....।
अनेकान्तमय धर्म बताया, "हत दुर्नय" अज्ञान हटाया॥९५४॥
ॐ ह्रीं हतदुर्नयाय नमः अर्घ्यं....।
लक्ष्मी ने स्वामी स्वीकारा, "श्रीश" नाम करते जयकारा॥९५५॥
ॐ ह्रीं श्रीशाय नमः अर्घ्यं....।
लक्ष्मी कमल रुप बन आई, "श्रीश्रितपादाज" नाम है भाई॥९५६॥
ॐ ह्रीं श्रीश्रितपादाब्जाय नमः अर्घ्यं....।
अभय हुए भय नाहिं सताए, बने "वीत भी" नाम सु पाए॥९५७॥
ॐ ह्रीं वीतभिये नमः अर्घ्यं....।
अभय दान जीवों को करते, "अभयंकर" शुभ नाम को धरते॥९५८॥
ॐ ह्रीं अभयंकराय नमः अर्घ्यं....।
अरिनाशक अरिहंत हुए हो, हो "उत्सन्नदोष" किये हो॥९५९॥
ॐ ह्रीं उत्सन्नदोषाय नमः अर्घ्यं....।
कार्य करन में विघ्न न आवे, हो "निर्विघ्न" विघ्न न भावे॥९६०॥
ॐ ह्रीं निर्विघ्नाय नमः अर्घ्यं....।
चंचलता तज स्थिर ज्ञानी, "निश्चल" योग ध्यान में ध्यानी॥९६१॥
ॐ ह्रीं निश्चलाय नमः अर्घ्यं....।
वत्सलता की मूरति प्यारी, "लोकवत्सल" छवि सबसे न्यारी॥९६२॥
ॐ ह्रीं लोकवत्सलाय नमः अर्घ्यं....।
तुम उत्कृष्ट हुए जग नामी, "लोकोत्तर" हो अन्तर्यामी॥९६३॥
ॐ ह्रीं लोकोत्तराय नमः अर्घ्यं....।

तीनों लोक के स्वामी तुम हो, "लोकपति" जग नामी तुम हो॥९६४॥
ॐ ह्रीं लोकपतये नमः अर्घ्यं....।
सर्वलोक के युगपत देखो, "लोकचक्षु" शुभ नाम को लेखो॥९६५॥
ॐ ह्रीं लोकचक्षुषे नमः अर्घ्यं....।
अनंत ज्ञान धारक हो जग में, "अपारधी" मुक्ति के मग में ॥९६६॥
ॐ ह्रीं अपारधिये नमः अर्घ्यं....।
ना कम होवे ना घर जावे, तुम्ही "धीरधी" ज्ञान को पावे॥९६७॥
ॐ ह्रीं धीरधिये नमः अर्घ्यं....।
भव्यों को सद्मार्ग दिखाओ, तुम्ही "बुद्ध सन्मार्ग" दिखाओ॥९६८॥
ॐ ह्रीं बुद्धसन्मार्गाय नमः अर्घ्यं....।
पूर्ण 'शुद्ध' आतम को कीना, शुद्ध नाम शाश्वत सुख लीना॥९६९॥
ॐ ह्रीं शुद्धाय नमः अर्घ्यं....।
पावन चर्या पावन वाणी, "सत्यासूनृतवाक्" सद् ज्ञानी॥९७०॥
ॐ ह्रीं सत्यसुनृतवाचे नमः अर्घ्यं....।
परिपूर्ण शुभ ज्ञान की धारा, "प्रज्ञा पारमिता" शुभ नारा॥९७१॥
ॐ ह्रीं प्रज्ञापारमिताय नमः अर्घ्यं....।
अतिशय बुद्धि, अतिशय ज्ञानी, "प्राज्ञ" धार हो गए जग नामी॥९७२॥
ॐ ह्रीं प्राज्ञाय नमः अर्घ्यं....।
कर प्रयत्न मुक्ति तैयारी, "यति" जिन ने जिन दीक्षा धारी॥९७३॥
ॐ ह्रीं यतये नमः अर्घ्यं....।
इन्द्रि विषय विजय को पाया, "नियमितेन्द्रिय" नाम धराया॥९७४॥
ॐ ह्रीं नियमितेंद्रियाय नमः अर्घ्यं....।
पूजा वन्दन अर्चा करते, हो "भदंत" शुभ नाम को धरते॥९७५॥
ॐ ह्रीं भदंताय नमः अर्घ्यं....।

''चाल छन्द''

कल्याण रुप सुखकारी, कल्याण करे संसारी।
तुम "भद्रकृत" नाम को पाया, में भद्र बनन को आया॥

चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ।।१७६।।

ॐ ह्रीं भद्रकृते नमः अर्घ्यं....।

बनूं मुक्ति पुरी का राजा, कहलाऊँ जग महाराजा।
मंगलकारी जिन देवा, मैं करुं चरण की सेवा।।
तुम ही तो "भद्र" कहाये, यह विश्व तेरे गुण गाए।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ।।१७७।।

ॐ ह्रीं भद्राय नमः अर्घ्यं....।

मन वांछा पूरी करते, भक्तों की विपदा हरते।
हो "कल्पवृक्ष" जिन स्वामी, मुक्ति पथ के हो गामी।।
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ।।१७८।।

ॐ ह्रीं कल्पवृक्षाय नमः अर्घ्यं....।

वरदान मुक्ति का देते, ऋद्धि सिद्धि भर देते।
"वरप्रद" तुम्ही सम ज्ञानी, महिमा है इन्द्र बखानी।।
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ।।१७९।।

ॐ ह्रीं वरप्रदाय नमः अर्घ्यं....।

जड़मूल से कर्म उखाड़े, यमराज को आप पछाड़े।
"सुमुन्मूलि कर्मारि" प्रभु आज हमारी बारी।।
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ।।१८०।।

ॐ ह्रीं समुन्मूलितकर्मारये नमः अर्घ्यं....।

यह कर्म काठ बन आया, अग्नि ने आन जलाया।
"कर्मकाष्ठाशुशुक्षणी", महिमा गाएं तेरी धनी।।
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ।।१८१।।

ॐ ह्रीं कर्मकाष्ठाशुशुक्षणये नमः अर्घ्यं....।

हो कुशल कार्य के ज्ञाता, है "कर्मण्य" नाम सुसाता।
भक्तों को दर्श दिखाओ, मुक्ति में पास बुलाओ॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९८२॥

ॐ ह्रीं कर्मण्याय नमः अर्घ्यं....।

मठ-शठ का मोह भी त्यागा, "कर्मठ" बन आतम जागा।
सामर्थ्य धरोहर पाएं, फिर और कहीं ना जाएं॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९८३॥

ॐ ह्रीं कर्मठाय नमः अर्घ्यं....।

उन्नत तम कार्य किये हैं, उन्नत तम देह लिये हैं।
"प्रांशु" शुभ नाम है प्यारा, दुनियां में सबसे न्यारा॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९८४॥

ॐ ह्रीं प्रांशवे नमः अर्घ्यं....।

तुम सत्य हिताहित जानो, निज आतम को पहचानो।
"हेयआदेयविचक्षण" स्वामी, दुख मेटो अन्तर्यामी॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९८५॥

ॐ ह्रीं हेयादेयविचक्षणाय नमः अर्घ्यं....।

तुम अन्तराय को नाशा, है "अनंत शक्ति" का वासा।
तुम हो मम ज्ञान चितेरा, सब मिटे जगत का फेरा॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९८६॥

ॐ ह्रीं अनंतशक्तये नमः अर्घ्यं....।

प्रभु छिन्न भिन्न ना होते, जिनवर "अच्छेद्य" ही होते।
कुछ दया दृष्टि दिखलाओ, हृदय में आन समाओ॥

चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९८७॥

ॐ ह्रीं अच्छेद्याय नमः अर्घ्यं....।

तुम जन्म मृत्यु को नाशा, औ नाहि जरा की आशा।
"त्रिपुरारी" आप कहाए, चरणों में शीश झुकाए॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९८८॥

ॐ ह्रीं त्रिपुरारये नमः अर्घ्यं....।

प्रभु तीन लोक को जाना, सब वस्तु स्वच्छ प्रमाणा।
"त्रिलोचन" धर्म को पाया, उद्धार हेतु मैं आया॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९८९॥

ॐ ह्रीं त्रिलोचनाय नमः अर्घ्यं....।

हो जन्म त्रिज्ञान के धारी, "त्रिनेत्र" हो नाम बिहारी।
चिन्तन में तुमको ध्याऊँ, चरणों में तेरे आऊँ॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९९०॥

ॐ ह्रीं त्रिनेत्राय नमः अर्घ्यं....।

जग का रहस्य ना छिपता, सब प्रगट होयकर दिपता।
"त्रंबक" बोध को पावें, हम पूजा को नित गावें॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९९१॥

ॐ ह्रीं त्र्यंबकाय नमः अर्घ्यं....।

रत्नात्रय धर्म को पाया, औ बेड़ा पार लगाया।
हो प्रभो "त्र्यक्ष" सुखदाता, मेटो सब कर्म असाता॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९९२॥

ॐ ह्रीं त्र्यक्षाय नमः अर्घ्यं....।

चउ कर्म घातिया घाते, औ केवल ज्ञान प्रकाशे।
हो ''केवलसुज्ञानवीक्षण'', आया है मेरा शुभ क्षण॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९९३॥

ॐ ह्रीं केवलज्ञानवीक्षणाय नमः अर्घ्यं....।

यह वसुधा है मंगलमय, अरु ध्याता ध्याए चिन्मय।
हो "समन्त भद्र" जिन स्वामी, तुम भद्र बनाया नामी॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९९४॥

ॐ ह्रीं संपतभद्राय नमः अर्घ्यं....।

शांति का अमृत प्यारा, "शांतारि" नाम को धारा।
वाणी में शान्ति आवे, निज आत्म धर्म को पावे॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९९५॥

ॐ ह्रीं शांतारये नमः अर्घ्यं....।

प्रभु सकल लोक के नेता, प्रभु सकल लोक कि त्रेता।
सबको जिन धर्म सिखाते, औ ''धर्माचार्य'' कहाते॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९९६॥

ॐ ह्रीं धर्माचार्याय नमः अर्घ्यं....।

दुखियारी जनता सारी, प्रभु दया के हो भण्डारी।
हे "दयानिधि" अपना लो, मुझे अपने पास बुला लो॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९९७॥

ॐ ह्रीं दयानिधये नमः अर्घ्यं....।

दृष्टि को सूक्ष्म किया है, परमाणु देख लिया है।
हो "सूक्ष्म दर्शी" प्रभु आओ, दर्शन की प्यास बुझाओ॥

चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९९८॥

ॐ ह्रीं सूक्ष्मदर्शिने नमः अर्घ्यं....।

जब निज में ध्यान लगाया, यह काम पास ना आया।
हो "जितानंग" सन्यासी, प्रभु शिवपुर के हो वासी॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥९९९॥

ॐ ह्रीं जितानंगाय नमः अर्घ्यं....।

अम्बर महिमा को गाता, जीवों को मिलती साता।
प्रभु हैं "कृपालु" भगवाना, तुम कृपा दृष्टि को पाना॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥१०००॥

ॐ ह्रीं कृपालवे नमः अर्घ्यं....।

गंगा सम ज्ञान बहाया, तत्वों का मर्म सिखाया।
''धर्मदेशक" हो लाला, फेरेंगे तुम्हारी माला॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥१००१॥

ॐ ह्रीं धर्मदेशकाय नमः अर्घ्यं....।

"शुभंयु" ही मन को भाए, शुभ नाम को तेरे गाए।
शुभमय हो मेरा जीवन, यह जग हो जावे पावन॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥१००२॥

ॐ ह्रीं शुभंयवे नमः अर्घ्यं....।

आतम आनन्द भण्डारा, है कहीं नहीं सुख सारा।
''सुखसाद्भूत" के दाता, हे गुण समूह सिर नाता॥
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ॥१००३॥

ॐ ह्रीं सुखसाद्भूताय नमः अर्घ्यं....।

स्वप्नों में भी प्रभु आए, आकर के पुण्य बढाए।
है "पुण्य राशि" वैरागी, प्रभु सब पुण्यों के त्यागी।।
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ।।१००४।।

ॐ ह्रीं पुण्यराशये नमः अर्घ्यं....।

कर्मों का बन्धन टूटा, रोगों से नाता छूटा।
"अनामय" जिन ही शासक, हो केवल ज्ञानी भासक।।
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ।।१००५।।

ॐ ह्रीं अनामयाय नमः अर्घ्यं....।

जब कठिन समय भी आया, रक्षा संकल्प निभाया।
नित "धर्मपाल" ही पाले, आकर के हमें सम्भाले।।
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ।।१००६।।

ॐ ह्रीं धर्मपालाय नमः अर्घ्यं....।

तुमसे रक्षित सब प्राणी, है धर्ममयी जिनवाणी।
हो "जगत्पाल" ही राजा, पालन करते महाराजा।।
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ।।१००७।।

ॐ ह्रीं जगत्पालाय नमः अर्घ्यं....।

हो अमर दीप की ज्योति, गहरे सागर के मोती।
हो "धर्म साम्राज्य नायक", तुम ही हो धर्म प्रदायक।।
चरणों की धूल बनालो, जिनवर मुझको अपना लो।
सौरभ अपनी बिखराओ, कर्मों की गन्ध मिटाओ।।१००८।।

ॐ ह्रीं धर्मसाम्राज्यनायकाय नमः अर्घ्यं....।

''शम्भु छन्द''

कलियुग में नाम सहारा है, तन मन से हम प्रभु जपते हैं
फिर भी आकुलता भरमाए, तो आकर तुमको लखते हैं

यह पूजा करके हे जिनवर, उद्धार जगत से चाहूंगा
तप के फल औ हम अर्घ्य लिये, मैं चरण चढ़ाने आऊंगा

ॐ ह्रीं दिग्वासादिअष्टोत्तरशतनामभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलि:।

जाप्य-ॐ ह्रीं समवसरणपद्मसूर्यवृषभादिवर्द्धमानान्तेभ्यो नम:।

(जयमाला)

''दोहा''

सहसनाम धारी प्रभु, नाम जपूं त्रिकाल
नाम मंत्र के जाप से, सुधरे बिगड़े हाल

'शेरचाल''

हे जिनेन्द्र आप सहस नाम के धारी।
धारे अनन्त सर्वगुणी कामना भारी।।
अब अर्थ व्यर्थ छोड़ के निज अर्थ को पाया।
आतम में हुए लीन, तो निजआत्म ही ध्याया।।१।।

जिनदेव समोशर्ण में उपदेश दे रहे।
है तत्व ज्ञान तत्व भान भी बता रहे।।
सम्यक्त्व पाने ध्यान की धारा वहां बही।
चिंता को तजा ज्ञान की गंगा वहां बही।।२।।

करुणामयी आंखें हैं प्रभो रक्षा कीजिये।
भण्डार हो दया के प्रभो, ध्यान दीजिये।।
मनमानी करें लोग यहां, ज्ञान दीजिये।
निज का विवेक ही जगे, वरदान दीजिये।।३।।

प्यासे हैं चक्षु दर्श के, मुझे दर्श दिखाओ।
उद्धार चाहते हैं प्रभो मार्ग दिखाओ।।
आश का ये दीप जला, बैठे हैं दाता।
आओगे कभी आश लगा, बैठे विधाता।।४।।

युग बीते हैं ये बीत चला, है समय सारा।
भगवान जपें नाम हो, उद्धार हमारा।।
अविराम करें भक्ति हैं, आराम ना किया।
तारोगे मुझे एक दिन, ये नाम है लिया।।५।।
मुझे ऐसी शक्ति दो, कि द्वन्द त्याग कर सकूं।
मुझे शक्ति दो प्रभो कि, आत्म ध्यान कर सकूं।।
जनमें न बार-बार, हैं कष्ट घनेरे।
मृत्यु भी न हो बार-बार, शरण में तेरे।।६।।

हूं जग में रोते गाते, नित्य घूम मैं रहा।
ना तथ्य जान तत्व ज्ञान, व्यर्थ ही रहा।।
इस जग के झंझावात से, प्रभु निकालिये।
साथी ना कोई जगत में, मुझको सम्भालिये।।७।।

संसार के सुःखों को प्रभु, अब नहीं चाहूँ।
निज आत्म का हो दर्श, यही भावना भाऊँ।।
"स्वस्ति" का ज्ञान दीप प्रभु, शीघ्र जलाओ।
ये दुष्ट कर्म से प्रभु, आकर के छुड़ाओ।।८।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरअष्टोत्तरसहस्त्रनामसमूहाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

''दोहा''

देव यही है प्रार्थना, मुक्ति वासा होय
पूजा भक्ति फल मिले, आत्म ध्यान धन बोय

अर्घ्यं (त्रिभंगी छन्द)

प्रभु नाम अनन्ता, मुक्ति कंता, उनका हम गुणगान करें
शक्ति बढ जाए, मुक्ति पाए, चरणों में आ अर्घ्यं धरे

इत्याशीर्वादः।

इति श्री कल्पद्रुममहायज्ञविधानं संपूर्णम्।

इति भद्रं भूयात्। वर्द्धताम् जिनशासनम्।

सम्पूर्ण जयमाला

त्रिभंगी छंद

चौबीस जिनन्दा, तोड़े फन्दा, समवशरण सुंदर पाया ।
तब रोग नशाये, शोक भगाये, जग में सबसे है न्यारा ।।
कर्मों की राशि, मोह की फांसी, जीवों को दु:खमय करती ।
तुम चरण जो आवे, शांति पावे, दु:खियों के दुख को हरती ।।

पद्धरि छंद

श्री अरहंता देव नमस्ते, श्री भगवंता देव नमस्ते ।
चार घातियां घात नमस्ते, जोड़ के दोनों हाथ नमस्ते ।
कल्याणक को पाय नमस्ते, इन्द्र देव हर्षाय नमस्ते ।
भक्त के पालन हार नमस्ते, संकट टारन हार नमस्ते ।
मोह महातम नाश नमस्ते, गुणगण है वास नमस्ते ।
मूलगुण छयालीस नमस्ते, तुमको शीश झुकाऊं नमस्ते ।
सम अवसर दातार नमस्ते, पंच महा पालाय नमस्ते ।
नाथों के हो नाथ नमस्ते, दीन दुखी के साथ नमस्ते ।
केवल ज्ञान की ज्योति नमस्ते, आनंद पाय मोती नमस्ते ।
जनमत अतिशय होय नमस्ते, वसुधा रत्न गिराय नमस्ते ।
पुण्य देय भंडार नमस्ते, मुक्ति पद दरशाय नमस्ते ।
प्रातिहार्य से सहित नमस्ते, अवगुण से हो रहित नमस्ते ।
दीक्षा देवन हार नमस्ते, शिक्षा देवन हार नमस्ते ।
जिनवाणी के पूत नमस्ते, शांति के साम्राज्य नमस्ते ।
जय जय जय उच्चार नमस्ते, धर्म की आय बहार नमस्ते ।
दुंदुभि सुस्वर गान नमस्ते, पुष्पवृष्टि वरदान नमस्ते ।
हो टिमकार से रहित नमस्ते, ओठ् हिले न आप नमस्ते ।
बरसे अमृत धार नमस्ते, पाये सब नर नार नमस्ते ।
रोग शोक का नाश नमस्ते, अशुभ भाव का नाश नमस्ते ।
चरण शरण शत्बार नमस्ते, मुक्ति वरण मनहार नमस्ते ।
'स्वस्ति' कर प्रणाम नमस्ते, गुण-गण के तुम धाम नमस्ते ।

शंभू-छंद

करूणासागर गुण गण आधार, भक्तों की टोली आई है ।
प्रभु सौख्य हटा संपत्ति वर दो, भावों की झोली लाई है ।
शुभ समवशरण प्रभु दर्शन कर, सम्यग्दर्शन हो जाता है ।
अज्ञान हटे सब द्वेष मिटे, तन की निरोगता पाता है ।
बिन इच्छा होता गमन देव, करके बिहार वो जाते हैं ।
कमलों से चतु अंगुल ऊपर, रख पग विहार वो करते हैं ।
है भाग्यवान वोही प्रभुवर, जो आपके साथ में चलते हैं ।
पग पग पर कमलों की रचना, यह इन्द्र सभी करवाते हैं ।
जो पुण्य धरा उस पर वाणी, श्री जिनवर जी बिखराते हैं ।
अमृत पाकर भव्यों के मन, औ रोम रोम खिल जाते हैं ।
वसु कर्म तत्व बारह भावों का, ध्यान वहां करवाते हैं ।
आया विराग दीक्षा लेते, वे मुक्तिपुरी को जाते हैं ।
षट् ऋतुओं के फल फूल सभी, नगरों शहरों में आते हैं ।
धूली कंटक वसु कोई नहीं, औ पाप सभी भग जाते हैं ।
वापी तलाब में जल आया, रत्नों के कमल भी खिलते हैं ।
मारे गोता ज्ञानामृत में, संयम के मोती मिलते हैं ।
मुनिवर चलते श्रावक चलते, और देव आर्यिका चलती हैं ।
तिर्यंच चले विद्याधर भी, गुण बगिया क्यारी खिलती है ।
आगे-आगे है धर्मचक्र, संदेश धरम का देता है ।
सारी धरती मंगलमय हो, मंगल सबका कर देता है ।
संतोष सभी जन पाते हैं, औ काम क्रोध कुछ दोष नहीं ।
जिनवर का अतिशय बिखर रहा, हिंसा चोरी और भूख नहीं ।
जय जय की ध्वनि करते चलते, मन प्रमुदित हो जय करता है ।
हुई प्रभु की जय मेरी होवे, फूलों से भाव संजोता है ।
चौबीसों जिन का समवशरण, रचना समान ही होती है ।
क्रम से योजन घटता जाता, बाकी सब एक सी होती है ।
श्री वृषभनाथ से महावीर तक, सबको शीश झुकाते हैं ।

'स्वस्ति' हो प्रत्यक्ष दर्श, हम यही भावना भाते हैं ।

शेर चाल (हे दीन बन्धु....)

चऊ कर्म किये नाश तो, अरिहंत बन गये ।
जीवों की शरण देने से, तुम नाथ बन गये ।।
समभाव से समज्ञान सभी, जीव को दिया ।
भव्यों ने आके चरणों में, अमृत का रस पिया ।।
धन धान्य सफल हो गया, जिन देवजी मेरा ।
पूजा करी जो आप की, हो भाग्य सबेरा ।।
ये हाथ सफल हो गये, औ कान भी हुये ।
आंखों ने पाया दर्श तेरा ध्यान भी किये ।।
श्री आदि ने कैलाश में जा धाम बनाया ।
श्री वासुपूज्य चंपापुरी ध्यान में ध्याया ।।
श्री नेमी ने गिरनार में, मुक्ति को बुलाया ।
पावापुरी में वीरा जी ने कमल खिलाया ।।
सम्मेद शिखर सिद्ध भूमि, सिद्ध हो गये ।
शाश्वत बताया यह गिरी, जिन देव हो गये ।।
जिनबीस ने निर्वाण गिरी, मोक्ष को पाया ।
आकर के श्रद्धा भक्ति से है, शीश झुकाया ।।
होवे चतुर्थ काल तो प्रत्यक्ष दर्श हो ।
वरना विदेह जाके जिया, पावे हर्ष वो ।।
जब श्वास चले, तेरा नाम, गाता मैं रहूं ।
अंतिम समय में 'स्वस्ति' तेरा ध्यान ही करूं ।।

ॐ ह्रीं समोवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रभ्य गणधर आदि नमः महार्घ निर्वपामीति स्वाहा। (गोला सहित पूर्ण अर्घ

दोहा

समवशरण जिन देव का, स्वर्ग मोक्ष का धाम ।
अर्घ्य समर्पित चरण में, बारंबार प्रणाम ।।

(प्रशस्ति)

चौपाई

जिन भक्ति जिन गान किया है, प्रभुवर तेरा ध्यान किया है ।
भक्ति मय हो गुण को गाये, पूजन को हम तेरी आये ।।
उत्तम द्रव्य भाव उत्तम है, मेरे जिनवर भी उत्तम है ।
उत्तम जिनवर का मंदिर है, हृदय मे मेरे जिन मंदिर है ।।
समवशरण का पूज रचाया, समवशरण दर्शन को आया ।
रोम रोम हो गया है हर्षित, तन मन मेरा है आकर्षित ।।
भाव विभोर रचना कीनी, 'स्वस्ति' जिन भक्ति कर दीनी ।
मेरठ में प्रारंभ किया था, लिख-लिख कर आनंद लिया था ।।
हरिद्वार में पूर्ण हुआ है, आदिनाथ आशीष लिया है ।
सावन वदी सप्तम है प्यारी, द्विसहस्त्र चतु सन है न्यारी ।।
समवशरण का पाठ बनाया, जिनवर का गुण गान कराया ।
हुई जो भूल सुधार के पढ़ना, अच्छा है उसको तुम गाना ।।
'स्वस्ति' निज कर्त्तव्य निभाऊं, मुक्ति सुंदरी को ही पाऊं ।।

कल्पद्रुम विधान प्रशस्ति

दोहा

पंच परम परमेष्ठी को, शत्-शत् करूं प्रणाम।
हृदय मेरे आ बसो, तीर्थंकर भगवान।।

चौपाई

तीर्थंकर की गुण-गण महिमा, गा ना सकते उनकी गरिमा।
शब्दातीत हुए हैं जिनवर, पूजन करने आये गुरुवर।।
ब्रह्म तुम हो विष्णु तुम हो, ईश्वर और महेश्वर तुम हो।
तुम्ही जगत के पालन हारे, नैया मेरी करो किनारे।।
जिनवर शासन सबसे अच्छा, जिसको पाले बच्चा-बच्चा।
आदि प्रभु से महावीर जी, पूजन भक्ति चरण सेव जी।।
कल्याणक नर देव मनायें, धरती पर खुशियां छा जायें।
रवि सम तेज प्रताप है रहता, ज्ञान पुंज का झरना बहता।।
स्वयं खुशी सबको भी करते, खुशियों से झोली भी भरते।
करे तपस्या कर्म सिखाये, संग में सबको भी करवाये।।
धरती पर गंगा है आई, हरिद्वार नगरी है भाई।
वीर प्रभु के गुण को गाया, कल्पद्रुम ये विधान बनाया।।
अंतराय ने बांधा छाली, पर वे तो सब गये थे खाली।
सावन सुदी सप्तमी प्यारी, लिखने की कर ली तैयारी।।
भादों सुदी पंचमी आई, पूर्ण विधान हुआ सुखदाई।
श्रावक जन भी भावना भाये, पूर्ण होय हम पाठ कराये।
शुभ भावों का हुआ उजाला, भक्तों ने फेरी थी माला।।
गुरु चरणों में शीश झुकाया, श्री गुरु का आशीष पाया।
तभी कार्य की सिद्धि होती, सभी कार्य में वृद्धि होती।
भाव भक्तिमय जो भी होता, कर विधान को पुण्य बढ़ाता।
चक्री ही यह पाठ कराता, या करवा चक्री बन जाता।
समवसरण के दर्शन मिलते, ज्ञान फूल हृदय में खिलते।
भावों से यह पाठ कराना, इससे समृद्धि पाना।
भक्ति में ''स्वस्ति'' हो जाये, भक्ति में भव से तर जाये।
यही है मेरी अंतिम इच्छा, बस मुक्ति की पाऊँ शिक्षा।

कल्पद्रुम आरती

चौबीसों बाबा मेरे, काटो सब कर्म के फेरे।
हम सब उतारे तेरी आरती, -----ओ बाबा हम सब ------

समवशरण सा महल है पाया, उसमें प्रभु जी राजे
जो भी आकर दर्शन करता, पाप करम सब भाजे
गणधर मुनिवर भी आये, आकर के शीश झुकाये
हम सब-----------

दिव्यध्वनि का अमृत प्रभु ने, भक्तों पर बरसाया।
भव्य जीव ही आकर पीते, उनका मन हर्षाया।
सम्यक् दर्शन भी होता, सारे कर्मों को खोता।
हम सब-----------

मानी जन का मान गलाये, मानस्तंभ बनाया।
अभिमान का पत्थर तजकर, दर्शन को वह आया।
सुंदर सीढ़ी पर चढ़के, भक्ति में आगे बढ़के
हम सब-----------

अष्ट भूमि की शोभा न्यारी, गुण भण्डार भरे हैं
धर्मचक्र को लेकर सिर पर, चरणों देव खड़े हैं
सुर नर वंदन को आवें, आतम में शांति पावे
हम सब-----------

कल्पद्रुम के शुभ विधान को, जो भी भविजन करते
संकट सारे दूर होयेंगे, सुख संपत्ति को वरते
''स्वस्ति'' भक्ति से गाये, आकर के शीश झुकाये
हम सब-----------

महत्व

मंत्रों में जप का,
मुनियों में तप का,
समोशरण में श्री मण्डप का
बड़ा ही महत्व है।

हथेली में थंभ का,
टूटे में दंभ का,
समोशरण में मानस्तम्भ का,
बड़ा ही महत्व है।

भौं में वक्र का,
दूध में तक्र का ,
समोवशरण में धर्म चक्र का
बड़ा ही महत्व है।

सम्मान में माला का,
कप में प्याला का,
समोशरण में नृत्यशाला का,
बड़ा ही महत्व है।

चन्द्रमा में प्रभा का,
प्रभु में आभा का,
समोशरण में सभा का,
बड़ा ही महत्व है।

वाणी में प्रतिध्वनि का,
अंबर में अवनि का,
समोशरण में दिव्यध्वनि का,
बड़ा ही महत्व है।

देखने में प्रत्यक्ष का,
महीने में पक्ष का,
समोशरण में अशोका वृक्ष का
बड़ा ही महत्व है।

रसोई में बासन का,
राज्य में शासन का,
समोशरण में सिंहासन का,
बड़ा ही महत्व है।

महत्व

खींचने में अक्स का,
कला में दक्ष का,
समोशरण में चैत्यवृक्ष का,
बड़ा ही महत्व है।

सोने में निशा का,
ज्ञानी में मनीषा का,
समोशरण में पूर्व दिशा का,
बड़ा ही महत्व है।

शिखरजी में टोंक का,
चाकू में नोंक का,
वृक्षों में अशोक का,
बड़ा ही महत्व है।

धरती में भूप का,
घर में सूप का,
समोवशरण में नवस्तूप का
बड़ा ही महत्व है।

मिलने में सुख का,
उड़ने में खग का,
समोशरण में प्रभु के चतुर्मुख का
बड़ा ही महत्व है।

बनाने में प्रारूप का,
आत्मा के स्वरूप का
प्रभु के अतिशय रूप का
बड़ा ही महत्व है।

योद्धा में कर्ण का,
मनुष्यों में वर्ण का,
वनों में सप्तपण का,
बड़ा ही महत्व है।

दिन में शाम का,
दुकान में दाम का,
नामों में सहस्त्रनाम का,
बड़ा ही महत्व है।